

बीर सेवा मन्दिर
दिल्ली



२३८

क्रम संख्या

काल नं.

पृष्ठ

३६०. २ पृष्ठ

ज्ञानपीठ मूर्तिदेवी जैन यन्थमाला [संस्कृत ग्रन्थाङ्क ६]

महाकवि धनञ्जयविरचिता

नाममाला

अमरकीर्तिविरचितभाष्योपेता

अनेकार्थनिघण्टुः एकाक्षरीकोशथ



सम्पादक

प० शम्भुनाथ त्रिपाठी व्याकरणाचार्य, माननीथे

भारतीय ज्ञानपीठ काशी

प्रथम आवृत्ति }
१००० प्रति }

चैत्र, वीरनि० स० २४७६
विं सं० २००७
अप्रैल १९५०

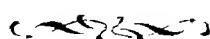
{ मूल
साढे तीन रुपये

भारतीय ज्ञानपीठ काशी

स्व० पृष्ठालोका माता श्री मूर्तिदेवी की पवित्र स्मृति मे
तन्मपुत्र मेठ शान्तिप्रसाद जी द्वारा
संस्थापित

ज्ञानपीठ मूर्तिदेवी जैन ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला मे प्राकृत मस्कृत अपभ्रंश हिन्दी कन्तड तामिल आदि प्राचीन भाषाओं मे
उपलब्ध आगमिक दार्यानिक पौराणिक माहित्यिक आर एतिहासिक आदि विविध विषयक
जैनमाहित्य का अनुसन्धानपूर्ण सम्पादन, उसका मल और यथासम्भव अनवाद
आदि के साथ प्रकाशन होगा। जैन भजानों की मञ्चिया यिलालव-
सग्रह विद्याट विद्वानों के अध्ययनगृह आर लोकहितकारी
जैन माहित्य ग्रन्थ भी इसी ग्रन्थमाला मे प्रकाशित होंगे।



ग्रन्थमाला सम्पादक और नियामक (संस्कृत विभाग)
प्रो० महेन्द्रकुमार जैन, न्यायाचार्य, जैन-प्राचीनन्यायतार्थ, आदि
बौद्धदर्शनाध्यापक संस्कृत महाविद्यालय
हिन्दू विश्वविद्यालय काशी

संस्कृत ग्रन्थाङ्क ६

प्रकाशक—

अयोध्याप्रसाद गोयलीय

मन्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ काशी,

दुर्गाकुण्ड रोड, बनारस सिटी

मुद्रक—पृष्ठीनाथ भार्गव, भार्गव भूषण प्रेस, गायत्राट, काशी।

स्थापनावद
फाल्गुन कृष्णा ९
वीर निं० स० २४७०

सर्वाधिकार सुरक्षित

{ विक्रम स० २०००
१८ फरवरी १९४४

नाममाला



स्व० मूर्तिदेवी, मातेश्वरी सेठ शान्तिप्रसाद जैन

JNANA-PITHA MOORTI DEVI JAIN GRANTHAMALA

SANSKRIT GRANTHA No 6

NAMAMALA

BY

MAHAKAVI DHANANJAYA

With the

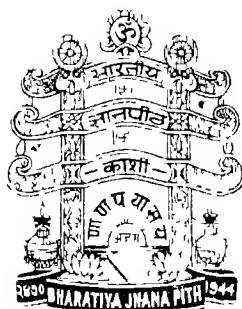
BHASHYA

OF

AMARAKIRTI

AND

The Anekartha mighantu and Ekakshari Kosha



EDITED WITH NOTES

By

PU. SHAMBHU NATHA TRIPATHI

Lyakaranacharya Supta Tirtha

Published by

BHARATIYA JNANA-PITHA KASHI

First Edition
1000 Copies

CHAITRA VIRASAMAVAT 2156
VIKRAM SAMAVAT 2007
APRIL 1950

Price
Rs 7.8

BHARATIYA JNANAPITHA KASHI

Founded by

SETH SHANTI PRASAD JAIN

In memory of his late benevolent mother

SHRI MOORTI DEVI

JNANA-PITHA MOORTI DEVI JAIN GRANTHAMALA

In this Granthamala critically edited, Jain agamic, Philosophical, Pauranic literary, historical and other original texts available in Prakrit, Sanskrit Apabhransha, Hindi, Kannada, Tamil etc. will be published in their respective languages with their translations in modern languages

AND

Catalogues of Jain Bhandaras, inscriptions, studies of competent scholars and Jain literature of popular interest will also be published

GENERAL EDITOR OF THE SANSKRIT SECTION

Prof. MAHENDRA KUMAR JAIN

NY DY ICH IRY I, JAIN PR ICHIN I NYAY I FIRTH I Et

Professor of Bauddha Darshana, Sanskrit Mahavidyalaya

Banaras Hindu University

SANSKRIT GRANTHA No. 6

Publisher

AYODHYA PRASAD GOYALIYA

SECY

BHARATIYA JNANAPITHA KASHI

DURGAKUND ROAD, BANARAS CITY

Founded in
Falguni Krishna 9, }
Vir Sam 2470 }

All Rights Reserved

{ *Vikram Samvat 2000*
18th Feb 1944

FOREWORD

The Bharatiya Jnanapitha, Banaras, founded by Shri Shantiprasad Jain to perpetuate the memory of his mother Murtidevi, has undertaken an ambitious plan of scholarly publications dealing with all aspects of Ancient Indian Culture with a very broad outlook and vision, and has already issued a few works in various languages such as Sanskrit, Prakrit, Pali etc. The undertaking has secured a learned scholar of proved ability in Pandit Mahendra Kumar, Nyayacharya, of the Sanskrit Mahavidyalaya of the Banaras Hindu University as a General Editor. The Jnanapitha has already published a few works and has a number of others in active preparation.

The present volume contains two small works of the famous lexicographer Dhananjaya. The first is called NAMAMAALA, a collection of synonyms, while the other is called ANEKARTHA—NAMAMAALA, recording words with plurality of senses. The first work contains just 200 stanzas, while the other is smaller still. The most important feature of the first work is that it publishes for the first time the Bhashyas of AMARAKIRTI, who gives etymological explanations of each and every word in the work, and adds a few more synonymous words from his own observation. His Bhashyas follow the same methods as are used by Ksurasvamin in his famous commentary on AMARAKOSA. The entire work is very carefully edited with appropriate references to authorities by Pandit Shambhu Nath Tripathi, a Saptartha and also a Vyakaranacharya of repute. On reading his foot-notes, I often felt that Pandit Tripathi excels the Bhashyakara both in ingenuity and accuracy, nay, I would go further and say that his etymological explanations are happier still. I am sure the scholars will admire his work in the foot-notes.

The volume is further equipped with several indexes. They include naturally the word-indexes of both the works edited, but there are in addition index recording additional words from Amarakirti's Bhasya, a list of Yaugika words, a list of works and authors cited and a list of quotations cited in the work, all this being done by Pandit Mahadeva Chitravedi, Vyakaranacharya. In fact the editorial part of the volume is as thorough as is humanly possible, and I have nothing but high admiration for the ability of Pandit Mahendra Kumar, the General Editor, in securing such a team of scholars to produce this volume.

Banaras Hindu University
6th September 1949

P. L. V. A. I. D. Y. A., M. A., D. Litt.,
Mayurbhanj Professor and Head of The
Department of Sanskrit & Pali.

प्राकृकथन

(हिन्दी अनुवाद)

अपनी पूज्य माता मूर्तिदेवीजी की स्मृति के लिए साहु शान्तिप्रसाद जी जैन हारा संस्थापित भारतीय ज्ञानपीठ बनारस ने विद्वत्तामूर्ण प्रकाशनों की एक उत्साहवर्धक योजना हाथ में ली है। प्राचीन भारतीय संस्कृत के विशाल दृष्टि व कल्पना वाले सभी अगों का प्रकाशन इस योजना के अन्तर्गत हैं तथा अब तक इस सम्मेलन से संस्कृत, प्राकृत, पाली, आदि विभिन्न भाषाओं के कर्तव्य प्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं। इस योजना के सम्पादन के लिए काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्कृत महाविद्यालय के सुयोग्य विद्वान् प० महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य, प्रधान सम्पादक के रूप में प्राप्त हैं। ज्ञानपीठ में अब तक कई एक ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं और कई एक प्रकाशन के लिए तैयार हैं।

वर्तमान ग्रन्थ में प्रसिद्ध कोशकार धनञ्जय को दो कृतियों सम्मिलित हैं। पहली नाममाला कहलाती है जिसमें पर्यायवाची शब्दों का संग्रह है और दूसरी अनेकार्थी नाममाला, जिसमें अनेक अर्थ-बोधक शब्दों का संग्रह है। पहली कृति में २०० श्लोक हैं जब कि दूसरी कृति उसमें काफी छोटी है। प्रथम कृति का सम्बन्ध में उत्लेखनीय विशेषता यह है कि इस पर लिखा गया अमरकीर्ति का भाष्य पहल पहल प्रकाश में आ रहा है। अमरकीर्ति ने नाममाला के प्रत्येक शब्दों की व्युत्पत्ति देकर स्पष्टीकरण किया है आर अपनी दृष्टि में आए कुछ और पर्यायवाची शब्दों को शामिल कर दिया है। उनके भाष्य की अहीं मरण पद्धति है जो कि अमरकोश की प्रसिद्ध टीका में क्षीरस्वामी ने अपनायी है।

सम्पूर्ण कृति का सम्पादन स्थाननामा पण्डित शम्भुनाथ त्रिपाठी व्याकरणाचार्य संपत्तीयं ने बड़ी सावधानी से तथा प्रभागों का उपयुक्त उद्धरण देते हुए किया है। उनको टिप्पणियों का अध्ययन करने से, मुझे अनेक बार प्रतीत हुआ है कि पण्डित त्रिपाठी-युवित और शुद्धि दोनों में कहीं-कहीं भाष्यकार को भी मात कर गये हैं, इतना ही नहीं, उनके व्युत्पत्ति सबन्धी स्पष्टीकरण और भी अच्छे हैं। मुझे विश्वास है कि विद्वान् लोग टिप्पणी में त्रिपाठी जी के प्रयत्न की प्रशंसा करेंगे।

ग्रन्थ में अनेक अनुक्रमणिका लगा दी गई हैं। उनमें सम्पादित दोनों कृतियों को शब्द सूची का सम्मिलित होना तो स्वाभाविक ही है परन्तु इसके अतिरिक्त अमरकीर्ति के भाष्य के अतिरिक्त शब्दों की सूची, योगिक शब्दों की सूची, उद्भूत ग्रन्थ और ग्रन्थकर्ताओं की सूची तथा ग्रन्थ में उद्भूत वाक्यों की सूची भी सम्मिलित की गई है। यह सब पण्डित शम्भुनाथ जी चतुर्वेदी व्याकरणाचार्यने किया है। स्वसुच म ग्रन्थ का सम्पादकीय भाग उतना पूर्ण बना दिया गया है जितना मानवी शक्ति में सम्भव था। और इस सब के लिए मे प्रधान सम्पादक पण्डित महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य की योग्यता को संग्रहना करता हूँ जिन्होंने ऐसे ग्रन्थ के प्रकाशन में इस प्रकार की विट्टन्मण्डली को एकत्रित किया है।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
६ सितम्बर, १९४९

पी० एल० वेदा
एम० ए० डी० लिट०
मध्यरभज प्रोफेसर तथा
अध्यक्ष, संस्कृत पाली विभाग।

शब्दशास्त्रान्तरा

“शब्दशास्त्राणि निष्णान परत्राणां विगच्छनि”—ब्रह्मबिन्दु०

शब्दशास्त्र में पारगत व्यक्ति परब्रह्म को प्राप्ति कर सकता है। यह सिद्धान्त इस बात को सूचना देता है कि साधक को पहिले शब्दशक्ति और उसको मर्यादा तथा भाव का ज्ञान आवश्यक है। यदि उसे शब्द के वाच्यार्थ भावार्थ और तात्पर्यार्थ की प्रक्रिया का बोध नहीं है तो वह भटक सकता है। वस्तुतः शब्द भावों के दोने का एक लगाड़ा वाहन है। जब तक सकेतप्रहण न हो तब तक उसकी कोई उपयोगिता ही नहीं है। एक ही शब्द सकेतभद्र से भिन्न भिन्न अर्थों का वाचक होता है। इसीलिए दर्शनशास्त्रों में एक पक्ष यह भी उपलब्ध होता है कि शब्द केवल वक्ता की विवक्षा को सूचित करते हैं, वदार्थ के वाचक नहीं हैं। 'घट' शब्द का सकेत वक्ता ने जिस रूप में जिस श्रोता को ग्रहण करा दिया है उसी अभिप्राय का दौतन वह शब्द उस श्रोता को करा देगा। शब्द विद्यमान अर्थ को भी कहता है और अविद्यमान को। एक खरनिषाण भी शब्द है जिसका अखड़ वाच्य पदार्थ इस सार में नहीं है और घट शब्द भी है जिसका वाच्य घड़ा मौजूद है। अतः शब्द के मम्बन्ध में यह निश्चय करना कि—यह शब्द अर्थवाची है और यह अनर्थवाची-टेली खीर है। फिर भी शब्दिकों ने यह प्रयत्न किया है शब्द के सार्थकत्व और अनर्थकत्व का विवेक हो जाय।

उसका मुख्य उपाय है शक्तिप्रह या सकेतप्रहण। जिस अर्थ में जिस शब्द का सकेतप्रहण होता है वह उस अर्थ का वाचक हो जाता है। यह सकेत कब किसने ग्रहण कराया इसका निर्णय कर्त्तन है। ईश्वर को सकेत ग्रहण कराने के लिए घटोटना श्रद्धा को वस्तु है। उसका इतना ही अर्थ है कि वृद्धपरम्परा से शब्द सकेत का ग्रहण बराबर होता आया है और वह अनादि है। उसमें विशेष हेर फेर होकर भी सामान्यतया सकेत की परम्परा अनादि है। जब से यह जीव है तभी में शब्दसकेत है। इस सकेतप्रहण के उपाय निम्न लिखित हैं—

“शक्तिप्रह व्याकरणोपमानकोशानवाक्याद् व्यवहारनन्तः ।

वाक्यम्य शेषाद् विवर्तदन्ति मानिष्यन मिद्दपदम्य वृद्धा ॥”

अर्थात्—व्याकरण, उपमान, कोश, आप्तवाक्य, व्यवहार, वाक्यशेष, विवरण और प्रसिद्ध शब्दके सामिन्द्र्य से सकेत ग्रहण होता है। इनमें व्याकरण से यौगिक शब्दों का व्युत्पत्ति द्वारा सकेत ग्रहण हो भी जाय पर रुद्ध और योगरुद्ध शब्दों का सकेत ग्रहण व्याकरण से नहीं हो सकता। अन्ततः कोश ही एक ऐसा उपाय वचता है जिसमें सभी प्रकार के शब्दों का सकेत-ग्रहण हो जाता है।

कोश अर्थात् खजाना या भडार। व्याकरण से मिद्द या वृद्धपरम्परा से प्रसिद्ध कैसे भी यौगिक रुद्ध या योगरुद्ध आदि शब्दों का अनेकार्थ के साथ सग्रह कोश में होता है। भाषा वही समृद्ध और जीवित समझी जाती है जिसका शब्द भडार पर्याप्त हो और जिसमें व्यवहार और परमार्थ के लिए उपयोगी सभी शब्द विद्यमान हो। जिसमें अन्य भावाओं के या विदेशी शब्दों के पचाने की या उन्हें स्व-स्वरूप करने की सामर्थ्य हो। इस दृष्टि से स्कृत भाषा उतनी समृद्ध नहीं बन सकी। इसका कारण यह रहा है कि इस भाषा पर एक वर्ग का प्रभुत्व रहा और उसने इसकी पाचन शक्ति को धर्म अधर्म के कल्पित बन्धन से जकड़ दिया था। उस वर्ग ने उस युग में प्रचलित अपभ्रंश और प्राकृत बोलियों का जो उस समय की जनबोलिया थीं उच्चारण करना पाय तोषित किया था। फिर भी स्कृत की जो प्रकृति प्रस्तुत उपर्युक्त आदि के योग से शब्दोत्पादन शक्ति थी

उसीके कारण यह बन्धनबद्ध होकर भी चिन्द्रभोग्य अवश्य बनी रही। सस्कृत को लोकभाषा का पद या सबकी छोली होने का सौभाग्य नहीं मिल सका। इस भाषा सम्बन्धी धर्मधर्म विचार ने संस्कृत के कोशागार को भी सीमित कर दिया।

भाषा के एकाधिकारियों ने तो यहा तक कह डाला है कि अपभ्रंश या अन्य लोकभाषा के शब्दों में वाचक शक्ति ही नहीं है। यस्ति का अपभ्रंश लट्ठी या लाठी है। ये लट्ठी या लाठी शब्द में वाचकशक्ति स्वीकार नहीं करना चाहते। इनका कहना है कि वाचकशक्ति तो 'यस्ति' शब्द में ही है। लट्ठी या लाठी शब्द सुनकर जो श्रोता को लाठी पदार्थ का ज्ञान होता है उसकी विधि इस प्रकार है—प्रथम ही श्रोता लाठी शब्द को सुनकर सस्कृत 'यस्ति' शब्द का स्मरण करता है और कि उस 'यस्ति' शब्द से पदार्थबोध होता है। अर्थात् ऐसे श्रोता को जिसने स्वप्न में भी 'यस्ति' शब्द नहीं सुना उसे भी लाठी शब्द से पदार्थ बोध के लिए सस्कृत 'यस्ति' शब्द का स्मरण आवश्यक है।

इस भाषाधारित वर्णप्रभुत्व से सस्कृत भाषा एक विशिष्ट वर्ग की भाषा बन कर रह गई। या० महाभाष्य के पृष्ठशा आत्मिक में लिखा है कि—“तस्माद् ब्राह्मणेन न म्लेच्छन वै, नापभाषित वै, म्लेच्छो ह वा एष अपशब्द ।” अर्थात् ब्राह्मण को न तो म्लेच्छ शब्दों का व्यवहार करना चाहिए और न अपभ्रंश कहा हो। अपशब्द म्लेच्छ है। अपशब्द का विवरण भी वहीं यह दिया है—“प्रदि तावच्छदोपदेश त्रियने, गौरित्येनस्मन्मुपदिष्टे गम्यत एतद् गाव्यादयोजगन्दा इनि ।” अर्थात्—गौ शब्द है और गावी गेया आदि अपशब्द हैं।

यद्यपि भाषा को सस्कृत रखने के लिए व्याकरण का सस्कार आवश्यक है तभी वह एक अपने निश्चित रूप में रह सकती है, लिंग और वचन का अनुशासन भी इसीलिए आवश्यक होता है, परन्तु उसके उच्चारण में किसी जाति विशेष का या वर्ग विशेष का अधिकार मानने से उसकी व्यापकता तो रक ही जाती है। नाटकों में स्त्री, शूद्रों तथा दामों से प्राकृत भाषा का बुलवाया जाना उक्त रूपि का ही साक्षी है।

इतना ही नहीं, धर्मक्षेत्र में साधु शब्द अर्थात् सस्कृत शब्द का उच्चारण ही पुण्य माना गया। इसका यह महज परिणाम था कि धर्म का ठेका भी भाषा प्रभुत्व के द्वारा एक वर्ग विशेष को मिला। हुआ भी यही। धर्म का अधिकार और उससे आर्थिक सम्बन्ध एक वर्ग का हो गया।

इस सम्बन्ध में मोर्निक क्रान्ति महाश्रमण महावीर और बुद्ध ने की। उनने भाषा के इस कठिपत बन्धन को तोड़ कर जनभाषा में धर्म का उपदेश दिया और स्त्री शूद्र तथा पापर से पापर व्यवित्यों के लिए धर्म का क्षेत्र खोला। धर्म के उच्च पद के लिए जाति का कोई बन्धन इनने स्वीकार नहीं किया। इस भाषाक्रान्ति से प्राकृत भाषाओं का विकास हुआ। यह नहीं है कि प्राकृत भाषाएं व्याकरण और लिंगानुशासन से मुक्त हो। उनके अपने व्याकरण हैं, अपने नियम हैं, जिनके अनुसार वे पल्लवित युष्मित और फलित होती रही हैं।

महावीर और बुद्ध के काल से लेकर ईसा की तोसरी सदी तक प्राकृत भाषाओं को गति मिलती रही। अशोक के शिलालेख प्राकृत भाषा में उपलब्ध होते हैं। शासनादेश प्राकृत भाषा में चलते रहे हैं। पुन सस्कृत युग में इन भाषाओं की गति मन्द पड़ी। इस युग में जैन और बौद्ध आचार्यों ने भी प्रन्थरचना सस्कृत में ही की। यही कारण है कि दोनों के विपुल साहित्य से सस्कृत का कोशागार भरा हुआ है। वाश्विक क्षेत्र में उथल पुथल तो नामार्जुन विग्नाग समन्तभद्र सिद्धासेन अकलक आदि के प्रन्थों से ही मची। तात्पर्य यह कि अपन परम्परा ने मध्यकाल में संस्कृत भाषा के विकास में भी अपना महत्वपूर्ण योगदान किया।

प्रस्तुत ग्रन्थ—

नाममाला कोश का एक सुन्दर और व्यबहारोपयोगी आवश्यक शब्दों से समृद्ध ग्रन्थ है। महाकवि धनञ्जय ने २०० श्लोकों में ही संस्कृत भाषा के प्रमुख शब्दों का चयन कर गागर में सागर भर दिया है। शब्द से शब्दान्तर बनाने की इनकी अपनी निराली पढ़ति है। जैसे पृथिवी के नामों के आगे 'धर' शब्द जोड़ देने से पर्वत के नाम, 'मनुष्य' के नामों के आगे 'पति' शब्द जोड़ देने से राजा के नाम, 'वृक्ष' के नामों के आगे 'चर' शब्द जोड़ने पर बन्दर के नामों का बन जाता आदि।

इसपर अमरकीर्ति विरचित भाष्य सर्वप्रथम प्रकाशित किया जा रहा है। इस भाष्य में प्रत्येक शब्द की व्याकरणसिद्ध व्युत्पत्ति सूत्रनिर्देश पूर्वक बताई गई है। उणादि से सिद्ध हो या अन्य रीति से पर कोई भी शब्द निवृत्पत्ति नहीं रह पाया है। इन व्युत्पत्तियों की प्रामाणिकता के लिए महापुराण, पद्मनन्दि शास्त्र, यशस्त्रिलक चम्पू, नीतिवाक्यामूल, द्विसन्धानकाव्य, बृहत्प्रतिक्रिमण भाष्य, महाभारत, सूक्तिमुक्तावली, शब्दभेद, अनेकार्थध्वनिमञ्जरी, अमरसह भाष्य, आशाधार महाभिषेक, नीतिसार, शाश्वत, हैमीनाममाला आदि ग्रन्थों तथा यश कीर्ति, अमरसह, आशाधार, इन्द्रनन्दि, क्षीरस्त्वामी, पद्मनन्दि, श्रीभोज, हलायुध आदि ग्रन्थकारों को नाम निर्देशपूर्वक प्रमाणकोटि में उपस्थित किया है। अनेक व्युत्पत्तिया तो अमरकीर्ति की कल्पना के अच्छे उदाहरण हैं। यथा—

“प्रियन् धुद्रजल्वोऽर्य स्पर्शेनेनि मर्हत्” अर्थात् जिसके स्पर्श से धुद्र जन्तु मर जाय वह मरत् ह।

“न नन्दनि भ्रातृजाया यस्या सत्या सा ननान्दा” जिसकी मौजूदगी में भौजाई खुश न हो वह ननादा—नन्द है।

“यज्ञाना पशुकारणलक्षणानामरि यज्ञारि” अर्थात् पशुयज्ञ का विरोधी महादेव है। आदि।

इसके साथ ही एक अनेकार्थ निघण्टु भी मुद्रित किया गया है। इसके अन्त में निम्नलिखित पुस्तिका लेख है—“इति महाकविधनञ्जयकृते निघण्टुसमये शब्दसकोर्णे अनेकार्थप्रलृप्णो द्वितीय-परिच्छेद ।” इसकी एक मात्र अशुद्धतम प्रति प० जुगलकिशोरजी मुख्तार अधिष्ठाता बीरसेवा-मन्दिर से प्राप्त हुई थी। रचना शैली आदि से यह निश्चय पूर्वक नहीं कहा जा सकता कि यह उन्हीं धनञ्जयकी कृति है, यद्यपि पुस्तिका वाक्य में स्पष्ट रूपसे धनञ्जय का उल्लेख है। इसके साथ ही एक अज्ञानकर्तृक एकाक्षरी कोष का भी मुद्रण किया है। इसकी हस्तलिखित प्रति भा बीर-सेवा-मन्दिर से ही प्राप्त हुई थी।

प्रस्तुत संस्करण—

अमरकीर्तिकृत भाष्य की एकमात्र अशुद्ध प्रति ऐलक पन्नालाल सरस्वती भवन ज्ञालरापाटन से प्राप्त हुई थी। इसीके आधार से इसका सम्पादन प० शम्भुनाथजी त्रिपाठी ने किया है। संस्करण में जो अनेक परिशिष्ट हैं वे सब प० महादेवजी चतुर्वेदी व्याकरणाचार्य ने तयार किये हैं। टिप्पणिया प० शम्भुनाथ जी त्रिपाठी ने वडे परिश्रम से लिखी है। मुझे यह लिखते हुए आनन्द होता है कि उनके सर्वतोमुखी अगाध पाण्डित्य का परिचय टिप्पणी में दद पद पर मिलता है।

ग्रन्थकार

[महाकवि धनञ्जय]

नाममाला के कर्ता महाकवि धनञ्जय हैं। इन्होने स्वयं अपने किसी ग्रन्थ में अपने समय आदि के बारे में निर्देश नहीं किया है। ये गृहस्थ थे। द्विसन्धानकाव्य के अन्तिम श्लोक की व्याख्या में उसके टीकाकार ने धनञ्जय के पिता का नाम वसुवेव, माता का नाम श्रीदेवी और गुरु का नाम दशरथ सूचित किया है। इनकी ख्याति 'द्विसन्धानकवि' के नाम से थी। नाममाला के अन्त में पाया जानेवाला यह श्लोक स्वयं इसका साक्षी है --

"प्रमाणमकलङ्घस्य पूज्यपादस्य लक्षणम् ।

द्विसन्धानववे काव्य रत्नव्रयमपश्चिमम् ॥"

अर्थात्-अकलङ्घदेव का प्रमाण शास्त्र, पूज्यपाद का लक्षण-व्याकरण शास्त्र और द्विसन्धानकवि का द्विसन्धानकाव्य ये तीनों अपूर्व रत्नव्रय हैं। यह श्लोक नाममाला के भाष्यकार अमरकोटि के सामने था, उनने इसकी व्याख्या भी की है। इसमें इनका उप-नाम 'द्विसन्धानकवि' सूचित किया गया है। टीक भी है, क्योंकि महाकवि धनञ्जय की सर्वश्रेष्ठ चमत्कारिणी कृति द्विसन्धानकाव्य ही है। वाविराज सूरी ने पार्वतनाथ चरित के प्रारंभ में द्विसन्धान काव्य की प्रशंसा करते हुए लिखा है --

'अनेकभेदसन्धाना खनन्तो हृदये मुहु ।

वाणा धनञ्जयोन्मुक्ता कर्णस्येव प्रिया कथम् ।'

अर्थात् धनञ्जय के द्वारा कहे गए अनेक सन्धान-अर्थमेद वाले और हृदयम्पर्णी वचन कानों को ही प्रिय केसे लगेंगे जैसे कि अर्जुन के द्वारा छोड़े जाने वाले अनेक लक्षणों के भेदक मर्मभेदों वाण कण को प्रिय नहीं लगते ?

द्विसन्धान काव्य अपने समय में पर्याप्त प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका था। इसका उल्लेख धारा-धोश भोजगञ्ज के समकालीन आचार्य प्रभाचन्द्र ने अपने प्रमेयकमलमार्त्तांड (पृ० ४०२) में किया है।

जल्हण (१२वीं सदी) विरचित सूक्ति मुकुतावली में राजशेखर के नाम से धनञ्जय की प्रशंसा में निम्नलिखित पद्य उढ़त है --

'द्विसन्धानं निपुणता स ता चक्र धनञ्जय ।

यग्य जात फल तम्य सता चक्रं धनञ्जय ॥'

इस श्लोक में राजशेखर ने धनञ्जय के द्विसन्धानकाव्य का मनोमुग्धकर सरणि से उल्लेख किया है।

धनञ्जय कवि के द्वारा एक विषाप्हार स्तोत्र भी बनाया गया है। यह अपने प्रसाद थोज और गाम्भीर्य के लिए प्रसिद्ध है। कहते हैं कि यह स्तोत्र कवि ने अपने सर्वदृष्ट पुत्र का विष उत्तारने के लिए बनाया था।

समयविचार-

इनके समय निर्णय के लिए निम्नलिखित प्रमाण हैं --

(१) प्रमेयकमलमार्त्तांड आदि के रचयिता प्रभाचन्द्र (ई० ११वीं सदी) ने इनके द्विसन्धान-काव्य का उल्लेख किया है अत ये ११वीं सदी के बाद के विदान् तो नहीं हैं।

(२) इसी तरह बादिराज सूरि (सन् १०३५) ने पाश्वनाथ चरित में धनञ्जय और द्विसन्धान का निवेदा किया है अत ये ११वीं सदी के बाद के नहीं हैं।

(३) जहण (१२वीं सदी) ने राजशेखर के नाम से सूक्ष्मितमूक्तावली में जो पछ उद्भूत किया है, वह राजशेखर काव्यमीमांसाकार राजशेखर है। इनका उल्लेख सोमदेव (ई० ९६०) के यशस्तिलक चूप्त में पाया जाता है अत राजशेखर का समय ई० १०वीं सदी सुनिश्चित है। राजशेखरके द्वारा प्रशस्ति होने के कारण धनञ्जय का समय १०वीं सदी के बाद का नहीं हो सकता।

(४) डॉ हीरालालजी ने पट्टलंडागम प्रथम भाग की प्रस्तावना (पृ० ६२) में यह सूचित किया है कि जिनसेन के गृह वौरसेन स्वामी ने धबला टीका (पृ० ३८७) में अनेकार्थ नाममाला का निष्ठलिखित श्लोक प्रमाणरूप में उद्भूत किया है—

“हेतावेव प्रकाराद्यै व्यवच्छेदे विपर्यये ।

प्रादुभर्ति ममाती च इतिशब्द विदुर्बुधा ॥”

यह श्लोक अनेकार्थ नाममाला का है। धबलाटीका विं स० ८७३ सन् ८१६ में समाप्त हुई थी अत धनञ्जय का समय ११वीं सदी के बाद नहीं हो सकता।

(५) धनञ्जय ने अकलक देव का उल्लेख ‘प्रमाणमकलङ्कस्य’ श्लोक में किया है। अकलक का समय ई० ७वीं सदी निश्चित है, अत धनञ्जय ७वीं सदी से पूर्व के नहीं हो सकते। सस्कृत साहित्य का सक्षिप्त इतिहास के लेखकद्वय ने धनञ्जय का समय ई० १२वा शतक का मध्य निर्धारित किया है। (पृ० १७४) उनने अपने इस मत की पुष्टि के लिए डॉ बी० पाठक महाशय का यह मत^१ भी उद्भूत किया है कि—“धनञ्जय ने द्विसन्धान महाकाव्य की रचना ई० १२३ और ११४० के मध्य में की है”。 पर उपरोक्त प्रमाणों के आधार से धनञ्जय का समय ई० ८वीं सदी का अन्न और नवीं का पूर्वार्थ सिद्ध होता है। जलहण की सूक्ष्मितमूक्तावली में जो ई० १२वीं सदी की रचना है, राजशेखर के नाम से उद्भूत ‘द्विसन्धाने निपुणता’ श्लोक काव्यमीमांसाकार राजशेखर का ही हो सकता है, न कि प्रबन्धकोश के कर्त्ता राजशेखर का। सस्कृत साहित्य के इतिहास के लेखकद्वय यहाँ आन्ति कर दैठे हैं, वे स्वयं जलहण को १२ वीं सदी का विद्वान् लिखकर भी उसमें उद्भूत राजशेखर को १४वीं सदी का जैन राजशेखर कहते हैं।

अत धनञ्जय का समय उपर्युक्त प्रमाणोंके आधार से ई० ८वीं का उत्तर भाग और नवीं का पूर्व भाग प्रमाणित होता है।

भाष्यकार अमरकीर्ति—

महापण्डित अमरकीर्ति ने नाममाला के भाष्य के अन्त में यह पुष्टिका वाक्य लिखा है—“इति महापण्डितश्रीमद्मरकीर्तिना त्रैविद्येन श्री ऐन्द्रवशोत्पन्नेन शब्दवेदसा कृताया धनञ्जयनाममालाद्वां प्रथमकाण्ड व्याख्यातम्” इससे इतना ही ज्ञात होता है कि अमरकीर्ति ‘त्रैविद्य’ उपाधि से विभूषित थे और वे सेन्द्रवश (सेनवश) में उत्पन्न हुए थे।

इन्होंने अपने को ‘शब्दवेदा’ उपाधि से अलड़कृत किया है।

मंगल श्लोकों में पूज्यपाद अकलङ्क विद्यानन्द और समन्तभद्र के साथ ही साथ एक कत्याण-

१ इसी के आधार से कल्पद्रुकोश की प्रस्तावना (P XXXII) में थी गमावतार शर्मा ने भी भी धनञ्जय का समय १२वीं सदी लिखा है।

कीर्ति को भी नमस्कार किया है। इन्होने पन्थ के बीच में जहा आवश्यकता भी नहीं है वहां भी अपना नाम देने में सकोच नहीं किया है। कई स्थानों पर धनञ्जय के इलोकों की उत्थानिका में भी “सम्प्रति सनुष्यवर्गं आरभ्यते अमरकीर्तिना” (पृ० १३) ग्रन्थि लिखा है। जो स्पष्टतः अम उत्पन्न करता है। एक जगह तो धनञ्जय के इस इलोकाश की व्याख्या करते हुए स्वयं अपना ही नाम लिख दिया है—“वारिधिवर्ष्यंतेऽधुना। अयुता इवानीं वारिधिवर्ष्यंते कथ्यते। केन भाष्यकत्रा श्रीमद्भरकीर्तिना। स्पष्टतया यहा 'केन' का उत्तर 'धनञ्जयेन' होना चाहिए था।

अमरकीर्ति नाम के तीन विद्वानों का पता लगता है—

- (१) 'छक्षमोवएस' आदि पन्थों के रचयिता अमरकीर्ति^१। इन्होने वि० स० १२४७ भादो सुदो १४ के बिन छक्षमोवएस प्रथा समाप्त किया था। अर्थात् ये ईसदीय १२ वीं सदी के अन्तिम भाग और तेरहवीं के प्रारम्भ में विद्यमान थे। ये अमितगति आचार्य की परम्परा में हुए हैं। इनकी गृह परम्परा यह है:—अमितगति, शान्तिषेण, अमरसेन, श्रीषेण, चन्द्रकीर्ति और चन्द्रकीर्ति के शिष्य अमरकीर्ति।
- (२) वर्धमान के प्रगृह अमरकीर्ति। इनकी परम्परा इम प्रकार है^२। देवेन्द्र विशालकीर्ति, शुभकीर्ति, धर्मभूषण, अमरकीर्ति, धर्मभूषण वर्धमान। वर्धमान ने शक संवत् १२९५ बैशाख सुदी ३ बृद्धवार को धर्मभूषण की निष्ठा बनवाई थी। इस शिलालेख के अनुसार अमरकीर्ति का समय शक १२५० के आसपास सिद्ध होता है। ये ईसदीय १४वीं सदी के विद्वान् थे। इनके इस समय का समर्थन शक १३०७ में उत्कीर्ण विजयनगर के शिलालेख से भी होता है।
- (३) दशभक्त्यादि महाशास्त्र के रचयिता वर्धमान के समकालीन, विद्यानन्द के पुत्र विशालकीर्ति के सधर्मा अमरकीर्ति। इनके सम्बन्ध में दशभक्त्यादिशास्त्र में लिखा है—

“जीयादमरकीत्यस्मिभट्टारकगिरोमणि ।
विशालकीर्तियोगीन्द्रसधर्मा शास्त्रकोविद ॥
अमरकीर्तिमुनिविमलाशय कुसुमचापमदाचलवज्रभृत् ।
जिनमनापहृतारितमात्र यों जयति निर्मलधर्मगुणाथ्य ॥”

अर्थात्—शास्त्रकोविद विमलाशय कामजेता निर्मलगुण और धर्म के आश्रय तथा जिनमतके प्रकाशक अमरकीर्ति भट्टारक विशालकीर्ति के सधर्मा थे।

विशालकीर्ति के पिता विद्यानन्द का स्वर्गावास शक १४०३ सन् १४८१ में हुआ था। यह उल्लेख दशभक्त्यादि महाशास्त्र में विद्यमान है^३। अत उनके पुत्र विशालकीर्ति के सधर्मा अमरकीर्ति का समय करीब सन् १४५० अर्थात् ईसदीय १५ वीं शताब्दी सिद्ध होता है^४। दशभक्त्यादि शास्त्र का समाप्तिकाल १४०४ शक अर्थात् १४८२ ई० है।

१ देखो डा० हीरालाल का 'अमरकीर्तिगणि और उनका षट्कर्मोपदेश' लेख। जैन मि० भास्कर भाग २ अक ३।

२ जैन शिलालेख संग्रहका १११वीं शिलालेख।

३ प्रशस्तिसग्रह के समाप्तक प० के० भुजबली शास्त्री ने 'शाके वह्निखराविधचन्द्रकलिते सवत्सरे' का अर्थ शक १४६३ किया है। जब कि दशभक्त्यादि शास्त्र की समाप्ति सूचक 'शाके वेदखराविधचन्द्रकलिते' का अर्थ १४०८ शक किया है। दोनों जगह ख का शून्य लेना चाहिये। यदि दशभक्त्यादि शास्त्र शक १४०४ में समाप्त हुआ है तो उसमें शक १४६३ में हुई विद्यानन्द की मृत्यु की चर्चा कैसे आ सकती है? ४. देखो प्रशस्तिसग्रह, पृ० १२८।

इन तीन अमरकीर्ति में प्रस्तुत ग्रन्थ के रचयिता छक्कमोबाएस के रचयिता नहीं हो सकते क्योंकि उनका काल वि० १२४७ के आसपास है, जब कि नाममाला के भाष्य (पृ० ६२) में आशाधर के भाष्याभिषेक से उद्धरण दिया है। आशाधर ने अपना अनगारधर्मामृत वि० १३०० में समाप्त किया था। अत अप्रथम अमरकीर्ति इस ग्रन्थ के रचयिता नहीं हो सकते।

इस से यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रस्तुत ग्रन्थ के भाष्यकर्ता अमरकीर्ति वि० १३०० अर्थात् ईसवीय १२४३ तेरहवीं सदी के पहिले के विद्वान् तो नहीं है। इन्होंने भाष्य में भोज (११वीं सदी) इन्द्रनन्दि (१०वीं सदी) पद्मनन्दि (१२वीं सदी) सोमप्रभ (१२वीं सदी) हेमचन्द्र (१२-१३वीं सदी) आदि के ग्रन्थों से भी नामोलेख पूर्वक अवतरण लिए हैं। शेष दो अमरकीर्ति पृथक् ध्यक्ति तो हैं ही। द्वितीय अमरकीर्ति की प्रशासा में विजयपुर के शिलालेख में निम्नलिखित पद मिलते हैं-

“गिव्यस्तस्य गुरोरासीदानर्गलतपेतिथि ।
श्रीमानमरकीर्त्यार्यो देशिकाप्रेसर शमी ॥
निजपक्षपुटकवाट घटयित्वानलरोधतो हृदये ।
अविचलितबोधदीप नममरकीर्ति भजे तमोहरणम् ॥”

अर्थात्-अमरकीर्ति महान् तपस्वी शान्त और लम्बी समाधि लगानेवाले योगी थे। इस वर्णन से ज्ञात होता है कि ये अमरकीर्ति शास्त्रकार की अपेक्षा योगी और तपस्वी ही विशेष रूप से थे। नाममाला भाष्य में जिस प्रकार की यशोलिप्सा टपकती है वह एक योगी और तपस्वी में नहीं हो सकती। अत मेरे विचार से द्वितीय अमरकीर्ति भी प्रस्तुत ग्रन्थ के रचयिता नहीं है।

तृतीय अमरकीर्ति के वर्णन में 'शास्त्रकोविद' विशेषण उनके पाण्डित्य का निर्देश कर रहा है। अत हमारे प्रकृत ग्रन्थकार दशभक्त्यादि महाशास्त्र के रचयिता वर्धमान के समकालीन, विद्यानन्द के पुत्र विशालकीर्ति के सधर्मा अमरकीर्ति हैं। वे सन् १४५० के आसपास अर्थात् पन्द्रहवीं सदी के विद्वान् थे। इस समय का साधक एक प्रमाण यह भी हो सकता है कि इन्हें कल्याणकीर्ति को नमस्कार किया है। कल्याणकीर्ति का एक जिनयज्जलोदय ग्रन्थ मिलता है।^१ उसको प्रशस्ति से ज्ञात होता है कि ये भट्टारक ललितकीर्ति के शिष्य थे। कल्याणकीर्ति ने जेट सुदी ५ वर्ष सबत् १३५० में जिनयज्जलोदय समाप्त किया था। अर्थात् सन् १४२८ में यह ग्रन्थ समाप्त हुआ था। यदि यही कल्याणकीर्ति अमरकीर्ति के द्वारा स्मृत हुए हैं, तो मानना होगा कि अमरकीर्ति पन्द्रहवीं सदी के विद्वान् हैं।

आभार-

इस ग्रन्थ के सम्पादक प० शशभुनाथजी त्रिपाठी व्याकरणाचार्य सत्ततीर्थ अनेक शास्त्रों के गभीर विद्वान् हैं। वर्षों तक उनने जैन विद्यालय इन्दौर में साहित्य और व्याकरण का अध्यापन कराया है। वे जैन परम्परा से पूरी तरह परिचित हैं। उनके जैसे अगाध ज्ञानी निरहूँकारी और विद्याजीवी विद्वान् विरल हैं। उनके तलस्पर्शी गभीर पाण्डित्य का निदर्शक यह सत्करण है। ज्ञानपीठ इस ग्रन्थ के सम्पादक के रूप में उन्हें पाकर गौरवान्वित है।

डॉ० पी० एल० वैद्य ने इस ग्रन्थ का प्राक्कथन लिखकर हमें उपकृत किया है। प० हरगोविन्दजी शास्त्री व्याकरणाचार्य ने अनेकार्थ निघण्टु का सम्पादन किया है। प० महावेच चतुर्वेदी ने सम्पादन परिशिष्टनिमण और प्रूफ सशोधन में पूरा योग दिया है। प० द्रजनन्दनजी मिश्र व्याकरणाचार्य ने भी प्रेस कापी आदि में पूरा सहयोग दिया है। गुलाबचन्द्रजी व्याकरणाचार्य एम० ए०

१ देखो प्रशस्ति सग्रह प० १६।

ने प्राक्कथन का हिन्दी अनुवाद किया है। पं० जुगलकिशोर जो मुख्तार ने अनेकार्थनिघण्टु और एकाक्षरी कोश की प्रति भेजी। प० श्रीनिवासजी शास्त्री ने भाष्य की प्रति भेज कर अनुग्रहोत्तम किया है।

भारतीय ज्ञानपीठ के स्थापक सेठ शान्तिप्रसाद जो तथा अध्यक्षा सौ० रमा रानी जी की सस्कृतिनिष्ठा, उदार दृष्टि, ज्ञानानुराग और सौजन्य इस संस्था के जीवन हैं। अपनी स्व० पुण्यश्लोका माता मूर्तिदेवी के स्मरणार्थं मूर्तिदेवी ग्रन्थमाला के सस्कृत विभाग का यह छठवर्ती ग्रन्थ प्रकाशित हो रहा है। इस भद्र दम्पति से ऐसे ही अनेक लोकोदयकारी सास्कृतिक कार्यों की आशा है।

इस संस्था के कर्मनिष्ठ मन्त्री श्री अयोध्याप्रसाद जी गोयलीय की कार्यदृष्टि, सत्प्रेरणा और प्रयत्न से इस संस्था का इस रूप में सञ्चालन हो रहा है। मेरे इन सब का आभार मानता हूँ।

'भारतीय ज्ञानपीठ काशी,
पौष शुक्ल १५
वीर स० २४७६
३।१।५०

—महेन्द्र कुमार जैन
ग्रन्थमाला सम्पादक

प्रकाशन-व्यय

४००)	कागज २० रोम २२×२९/३२ पोण्ड	५८५।।)	कार्यालय व्यवस्था प्रूफ संशोधन आदि
९७५)	छपाई पृष्ठ १९६ दर ५०) प्रति फार्म	४२६।।)	सम्पादन
२००)	जिल्द बैंधाई	५००)	भेट आलोचना, विज्ञापन आदि
६०)	कवर छपाई	७८७।।)	कमीशन
४०)	कवर कागज		

कुल लागत ३९३४।।)

१००० प्रति छपी। लागत एक प्रति ३।।।)

मूल्य ३।।।)

सभाष्या नाममाला

अनेकार्थनिघण्टुः एकात्मरी कोशश्च

महाकविधनङ्गप्रणीतां

नाममाला

अमरकीर्तिविरचितभाष्योपेता

श्रीपूज्यपादमकलङ्गमनन्तब्रोध विद्यादिननिदिनमिन च समन्तभद्रम् ।
कल्याणकीर्तिमल प्रणिपत्य वीर भाष्य करोमि परम बुधबुद्धिसिद्धयै ॥ १ ॥

सरस्वत्या. प्रसादेन रचयतेऽमरकीर्तिना ।

भाष्यं धनञ्जयस्येदं बालाना धीविवृद्धये ॥ २ ॥

यद्यपि धनञ्जयो (येनो) क्तो भावो वक्तु न शक्यते ।

तथाऽप्यह प्रवक्ष्यामि वाग्देव्याश्र प्रसादत ॥ ३ ॥

पूर्वान्तर्यकृता प्रायो व्युत्पत्तिरूपदिश्यते ।

क्वापि क्वापि स्वबुद्धयाऽपि क्षम्यतामत्र मे तुष्टैः ॥ ४ ॥

५

शिष्टासमाचार (ष्टाचार) परिपालनाथ नमस्कारसमुद्गतधर्मदारेण निर्विघ्नशास्त्रसमाप्त्यर्थं

च धनञ्जयब्रुवः इष्टाधिकृतदेवतानमस्कारार्थं श्लोकमाह—

१०

तन्मामि परं ज्योतिरवाङ्मनसगोचरम् ।

उन्मूलयत्यविद्यां यद् विद्यामुन्मीलयत्यपि ॥ १ ॥

तत्परं ज्योतिः—

“णमो^१ अरहताशं णमो सिद्धारणं णमो आइरियाण । णमो उवजक्षायाणं णमो लोण सब्बसा-हूण ॥” ईदग्विधम् । नमामि नमस्करोमि । किंविशिष्टम् ? अवाङ्मनसगोचरम् वाक् च वाणी मनसः^२ १५
च चित्त वाङ्मनसे तयोर्वाङ्मनसयोर्न गोचर न प्रत्यक्षीभूतम् अवाङ्मनसगोचरम् अलद्यस्वरूपत्वात् ।
तथा चोक्त शब्दभेदे—

“नभन्तु^३ नभसा सार्वं मनस मनसाऽपि च । तमसेन तमः प्रोक्तं तपन्तु तपसा सह ॥”

तथा च पद्मनन्दिशास्त्रे—

“४स्वानुभूत्यै भवेद् गम्य रम्य यच्चात्मवेदिनाम् । जाने तत्परं ज्योतिरवाङ्मनसगोचरम् ॥” २०

१ एतत्पञ्चनमस्कारात्मकमन्त्रप्रतिपाद्यमहत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुरूपमत्र ज्योतिः । २ नम तु
नभसा सार्वमित्यादिशब्दभेदोक्तप्रमाणतोऽकारान्तोऽपि मनसशब्दः साधु । ३ साम्रात निर्णयसागरयन्त्रा
लयमुद्विते शब्दभेदप्रकाशग्रन्थे एतत्पद्य किञ्चिदन्यथोपलब्धम् । तदित्यम्—

कुमुद कुमुदा चापि योगित्याद् योगिता सह । तमसा प्रोक्त रजसाऽपि रजः स्मृतम् ॥ ३४ ॥
अत्र कालप्रकर्षाद्यापि मनसशब्दः प्रभ्रष्टस्तथापि तदानीन्तनमूलपुस्तके तत्त्वैवासीदिति भूषम् ।

यत् अविद्या पापविद्याम् चारुकारसूत्रम्, वैद्यकसूत्रम्, चित्रकर्मादिसूत्रम्, नृत्यसूत्रम्, गन्धर्व-सूत्रम्, पटहसूत्रम्, अगदसूत्रम्, योद्धसूत्रम् मद्यसूत्रम्, धूतसूत्रम्, राजनीतिसूत्रम्, चतुरङ्गसूत्रवच्च । गज-तुरगपुस्यबीज्ञवगोख्दगण्डजनाना [च विद्या पापविद्या] कथते, ताम् उन्मूलयति मूलादुच्छेदयति । यत्^१ विद्यामपि उन्मीलयति स्थापयतीत्यर्थः ।

५ द्वयं द्वितयमुभयं यमलं युगलं युगम् ।

युगम् द्वन्द्वं यमं द्वैतं पादयोः पातु जैनयोः ॥२॥

दश युगमे । द्वौ अवयवौ यस्य तद् द्वयम्, “द्वित्रिभ्यामयद्वा^२” द्वितयम् द्वौ अवयवौ यस्य तद् द्वितयम्, उभयम् उभौ अवयवौ यस्य “द्वित्रिभ्यामयद्वा” इत्यनुवर्तमाने “उभान्या नित्यम्^३” इत्ययद् न तु तयद् । यमलं यम लालोति यमलम् । युगलं युग लालोति युगलम् । युगडं युगडकं च । युगं १० युज्यते धर्मवृत्त्या युगम्^४ । समाश्रेयत्यन्यं युगम् । युगम् युनक्ति द्वितीयेन युज्यते शिलस्यते युगम् । “युजिरुचितिज्ञा धर्मकू”^५ द्वन्द्वम् द्वौ द्वावित्यर्थं द्वन्द्वम् । यन्छत्युपरमत्येकत्वात् यमम् । द्वावित्यामित द्वीतम्, द्वीतमेव द्वैतम् । पातु रक्षतु ।

त्रृष्णपूर्वनिर्यतिर्भिक्षुस्तापसः संशितो व्रती ।

तपस्वी संयमी योगी वर्णी माध्युश्च पातु वः ॥३॥

१५ द्वादश मुनौ । ऋषिति कालत्रय जानातीति ऋषिः । “रिषिशुचिगृनाम्युपधातिकः”^६ । तथा च यशस्तिलके^७—

“रेपणात्क्लेशराशीनामृषिमाहुमनीषिण ॥”

यतिः यो देहमात्राराम सम्यविद्यानौलाभेन तृष्णामरितरणाय योगाय शुक्लध्यानधर्म-ध्यानाय यतते स यतिः^८ । तथा च यशस्तिलके —

२० “यः पापपाशनाशाय यतते स यतिर्भवेत् ।”

मुनिः, तपःप्रभावात् सर्वमन्यते मुनिः । “मन्यते: किरत उच्च”^९ । तथा च—

“१३ मान्यत्वादापविद्याना महाद्विः कीत्यते मुनिः ।”

भिक्षु भिक्षते इत्येवशीलो भिक्षु । “सचन्ताशसिमिक्षामु”^{१०} । तापसः, तपो विद्यते यस्य स तापत । “अण्”^{११} च । तप सहस्रान्या न केवलमस्यर्थं विनीनौ अण् च, वृद्धि । संशितः सशायते २१ स्म सशितः । “१४ श्वतेव ते नित्यम् ।” श्वस्थितिविभाषया शौ तनकरणे इत्यस्य व्रतेऽर्थे नित्यमिकारी भवति, विकल्पो नास्ति । व्रती, “हिसाऽनृतस्तेयाऽन्नद्वापरिग्रहेभ्यो विरतिर्बनम्”^{१२} । वत विनातेऽस्य व्रती । तपस्वी “अनश्नावमौदर्यवृत्तिपरिसख्यानरसपरित्यागविविक्षशयग्रामनकायक्लेशा बाह्य तपः”^{१३} । “प्रायशिच्चत्तर्विनयवैयावृत्यस्वाध्यायव्युत्सर्गध्यानान्युत्तरम्”^{१४} । तपःच विद्यते यस्येति तपस्वी । सयमी, सयमन सयमः इन्द्रियप्राणलक्षणं । सयमो विद्यते यस्यति सयमी । योगी, ^{१५} युजिर्^{१५} ।

१६. यत् इत्यस्य पूर्वम् ‘तथा’ इति पद योज्यम् । २. है० श०४।१।१५१ । ३. एतस्तत्र है० श० नोपलब्धम् । परतु द्वित्रिभ्यामयद्वा इत्यनुवर्तमाने उभान्या नित्यमिति दीक्षोनवचनात्तस्यमेवै तत्मूलमिति निश्चीयते । ४. कालवाचकयुगपरतयेय व्युत्पत्ति, प्रकृतायै तु युग लालीतयेव । ५. का० उ० १।५७ इति धम्क् प्रत्ययः कुत्व च । ६. गुनाम्नुपधातिकः का० उ० ३।१५ इति किप्र० । ७. यशस्ति० आ० ८. का० ४४ । ८. यती प्रयत्ने । है० सर्वधातुम् का० उ० ३।१४ इप्र० । ९. यश० आ० ८ कल्प ४४ । १०. का० उ० ४।३ इति किप्र० । मनु अवचोधने । ११. यश० आ० ८ कल्प ४४ । १२. का० स० ४।४।५।५१ । १३. या० स० १।२।१०३ । १४. इतेरित्वं व्रते नित्यमिति पातःजलभाष्यम् ७।४।४। १५. त० स० ३।१। १६. त० स० १। १७. त० स० । १८. एवन्निच्छिताशस्थाने युजिर् योगे रुद्धादौं परस्मैपदी युज् समाधौ वा दिवादौ आत्मनेपदी इत्येवभ्याटः सुगमः ।

योगे, युज समाधौ पर० युज् समाधौ वा० दि० । आत्म० युज् रुधादौ । पर० युज समाधौ वा दि० । आत्म० * युनक्ति युज्यते वा इस्त्वेवंशील योगी । युज्मजेत्यादिना॑ विनिष्ट् । वर्णा॑, वर्णो॑ व्रक्षन्वर्यमस्त्यस्य वर्णां । स्नान्तुः॑, शिष्याणा॑ दीक्षादिदानाभ्यापनपराह्मुख सकलकर्मोन्मूलनसमयो॑ मोक्षमार्गाङ्गुष्टानपरो य. स साधु । सिद्धि साधयति साधयिष्यति वा साधुः ।

“स व्याख्याति न शास्त्रं न ददाति दीक्षादिक च शिष्याणाम् ।
कर्मोन्मूलनशक्तो [धर्म] ध्यानः स चात्र साधुर्ज्ञेयः ॥”
“कृवापाजिमीस्त्वदिसाभ्यृष्टिनिचरित्यु उण्” । वो युष्मान् पातु रक्षु ।

दीक्षितं मौण्डं शिष्य च तमन्तेवासिनं विदुः ।

चत्वारं शिष्ये । [दीक्षितम्] दीक्षा सजाताऽस्येति । ३तारकितादिदर्शनात्सजातेऽर्थ इतच् ।
मौण्डयम्॑ मुण्डे मस्तके भव वपनादिक मौण्डयम्॑ । शिष्यम्॑, शिष्यते व्युत्पादयने गुरुणा शिष्यः । १०
“वृज्ञद्वजुरीणाशासुस्तुगुहा क्यप्” ।” गुरोरन्ते वसत्यन्तेवासी तम । विदु, कथयन्ति ।

कृतान्ताऽगमसिद्धान्ताः

त्रयं सिद्धान्ते । लोकाना सन्देहस्य कृतः अन्तो विनाशो येन मः कृतान्तः । आगच्छतीत्यागमः;
आगमनमागमो वा । सिद्धान्तो । सिद्धोऽन्तो । निधयो यस्य स सिद्धान्तः, समयोऽपि । सर्वे पुति ।

ग्रन्थः शास्त्रमतः परम् ॥ ४ ॥

१५

ग्रन्थाति॑ रचयतीति ग्रन्थः । शास्त्रि शास्त्रम् ।

भूमिर्भूः पृथिवी पृथिवी गहरी मेदिनी मही ।
धरा वसुमती धात्री क्षमा विश्वम्भराऽवनिः ॥ ५ ॥
वसुधा धरणी क्षोणी क्षमा धरित्री क्षितिश्च कुः ।
कुम्भनीलोर्वर्ग चोर्वी जगती गौर्वसुन्धरा ॥ ६ ॥

२०

सप्तविशार्तिर्भूमौ । भवति सर्वमत्र भूमिः । “ऊर्मिभूमिरस्य॑” । भवत्यस्मात्सर्व भूः ।
रेकान्तव्याव्ययम् । प्रथते पृथिवी पृथिवी च । गुह्यतीति॑ गहरो । स्त्रहरीति पाठ । न्याये मेद्यति स्त्रिव्यति
मधुकैतमेदोयोगद् वा मेदिनो । मध्यते मही । मह पूजायाम् । धरत्यगान् धरा । वस्त्यस्यस्या
वसुमती । दधाति सगृह्णति भेषजायेऽवैयो यामिति धात्री । “कर्मणि॑ षट् पून् ।” केचिद्वातेरपीच्छुन्ति॑
क्षमण क्षमा । “पाऽनुवन्धिमिदादिभ्यत्वद्” ।” । विश्व विमर्ति विश्वम्भरा । “नाम्नि तृभृत्यजिधारि-
तपिदमिसहा मजायाम् ।” खप्रत्ययः । भूतानवति श्रवनिः । छियामीः । ३३ “ऋत्युत्त्रव्यश्यविकृति-
प्रहिन्योऽनि ।” अनि. प्रत्ययः । वसु दधातीति वसु गा । धरति पर्वतानिति धरणि । “वृत्रोऽनि॑” ।
क्षोति क्षुपम् क्षोणि॑ । छियामी । क्षोणी । “दृष्टु क्षुरु कु शब्दे” । क्षमते भार क्षमा क्षमा च । धरति
सर्व धरित्री । क्षयति क्षय प्राप्नोति प्रलयकाले क्षितिः । कायति क्षयते वा कुः । कुम्भो गत्नोत्पत्तिग्रीषो-
इस्त्यस्या॑ कुम्भनी॑ । एति जन इमाम् इला । “इगसुराकपिलिकादिदर्शनाललत्वम् ।” ३० “शृष्टादय—

१. युज्मजमुज्जिष्ठद्विहृष्टाऽक्रीडत्यजानुरुधाऽयमाऽमाऽयमसरज्ञाऽयाऽहना च इति पूर्णं का०
सू० ४४१२१ २. का० उ० १११ ३. तदस्य सजात तारकाशेरितच् इति का० सू० ५०८ ।
४. मोण्डयमस्यास्तोत्यपि विग्रहे निवेश्यम् । अर्श आदिभ्योऽच् । ५ का० सू० ४२१२३ । ६. ग्रथयते
रच्यते इति कर्मणि॑ विग्रहो योग्यः । ७ का० उ० ३१२ इति भवतेर्मिप्र० कित्व च । ८ गृहीतीति गहरी
स्त्रहरी इत्यर्पि पाठ इति युक्तम् । ९ का० सू० ४४४६० इति पून् । १० वस्तुतस्तु क्षमते इति क्षमा,
पचादित्वादच्, दाप् । ११ का० सू० ४५१८२ । १२. का० सू० ४१३४४ । १३ का० उ० २१४३ ।
१४ का० उ० २१४३ ऋतुसूधृत्य० इत्यादमूलम् । १५. का० उ० २१७ ।

“शद्गोप्तव्रिष्टिप्रभर्गांरमेरीरा!“ एते रक्षप्रत्ययान्ता निपत्यन्ते । क्लेशमुर्वति हिनस्ति फलेन उर्वरा । उर्वा । उर्वा शुर्वा दुर्वा धुर्वा हिसार्था । सर्वमूर्वति व्याप्नोति उर्वि । खियामी उर्वा । राजान्तर गच्छति जगति । खियामोः जगती । पूजा गच्छति गौः । खीनौः । गमेडोः । “गोरौ धुटि“ हृत्यैत्वम् । धृत् धारणे । धृः । धरति धरते । हश् । अस्य वृद्धिः । धारि जातम् । वसु वदूनि वा धारयति वसुन्धरा । नाम्नि ५ तृभू०^२ लग्रत्यय । कारित्स्या०^३ कारितलोपः । अभिधानात् हस्तः । “हस्वा रुवोर्मोऽन्तः ।“ “खिया“ मादा ।” भूतधात्री, रत्नगर्भा, विपुला, सागराभ्यरा, रत्नवर्ती, रसा, अचला, अनन्ता, डथाम्— काढ्ययी, गोत्रा, स्थिरा, सर्वसहा ।

तत्पर्यायधरः शैलस्तत्पर्यायपतिर्नपः ।

तत्पर्यायरुहो वृक्षः शब्दमन्यं च योजयेत् ॥ ७ ॥

१० योजयेत् योटयेत् अन्यं शब्दं च । तत्पर्यायधरः शैल । भूमिधर, भूधर, पृथिवीधरः पृथ्वीधरः, गहरीधर, मेदिनीधर, महीधरः, धराधरः, वसुमतीधर, धात्रीधरः, विश्वभराधरः, अवनीधरः, वसुधाधरः, धरणीधर, क्षाणीधर, द्वामधर, धरित्रीधरः, त्रितिधरः, कुधरः, कुम्भिनीधरः, इलाधरः, उर्वाधरः, उर्बीधरः, जगतीधरः, गोधरः, वसुन्धराधरः । समविशति नामानि शैलस्य ज्ञेयानि । तत्पर्यायपत्तिरूपं । भूमिपतिः, भूति, पृथिवीपतिः, पृथ्वीपति, गहरीपति, मेदिनीपति, महीपति, धरापति, वसुमतीपति, धात्रीपति, क्षमापति, विश्वभरापति, अवनीपति वसुधापति, धरणीपति, क्षोणीपति, द्वामपति, धरित्रीपति, त्रितिपति, कुपति, कुम्भिनीपति, इलापति, उर्वापति, उर्बीपति, जगतीपति, गोपति, वसुन्धरापति । समविशति नामानि दृप्सस्येति ज्ञातव्यानि । तत्पर्यायरूपो वृक्षः । भूमिरूपः, भूरूप, पृथिवीरूप, पृथ्वीरूप, गहरीरूपः, मेदिनीरूप, महीरूप, धरारूपः, वसुमतीरूप, धात्रीरूप, क्षमारूपः, विश्वभरारूपः, अवनीरूपः, वसुधारूपः, धरणीरूपः, क्षोणीरूपः, इमरूपः, धरित्रीरूप, त्रितिरूपः, कुरूपः, कुम्भिनीरूपः, इलारूपः, उर्वारूपः, उर्बीरूपः, जगतीरूपः, गोरूपः, वसुन्धरारूपः । समविशतिपर्यायनामानि वृक्षस्येति ज्ञातव्यानि ।

दरीभृद्धचलः श्रङ्गी पर्वतः मानुमान् गिरिः ।

नगः शिलोच्चयोऽद्रिश्च शिखरी त्रिकुन्मरुत् ॥ ८ ॥

द्वादश पर्वते । दरीं विमर्त्तीं तिदरीभृत् । स्वस्थानात् न चलति अचल । शृङ्गमस्यास्तीति
 २५ शृङ्गी । पर्वाणि सन्त्यस्य पर्वते । “पर्वमरुभ्या त ।” सानुरस्त्यस्य सानुमान् । जल गिरतीति गिरिः ।
 “गुनाम्युपधात्तिक ।” न गच्छतीति नग । “डोऽमज्ञायामपि ।” नाम्युपदे गमेऽर्दो भवति । शिला
 उच्चीयतेऽत्र, शिलोच्य । खम् आकाशम् अतीति अद्वि । “भूमदिभ्य कि ।” शिवरमस्त्यस्य
 शिखरो । त्रिक पृष्ठाधर स्फुन्नाति विस्तारयतीति त्रिककुत् । वर्णविकारत्वाद् भकारस्य १० तकर ।
 स्तम्भुः स्तुमसुक्षमस्तुमकुञ्ज्य स्तुशन्ति वक्तव्यमत्राम्य धातो प्रयोग ।” मिथ्यन्ते क्षुद्रजन्त्वोऽस्य
 ३० स्पर्शेनाति मरुत् । “मृग्रोति ।” शैल, क्षितिधर, गोत्र, आहार्य, कुप्र., ग्रावा ।

प्रस्थं पाश्वं तटं सानुभेष्टोपत्यका तटी ।

नितम्बमन्तो दन्तश्च तद्वानपि गिरिः स्मृतः ॥ ६ ॥

१ का० सू० २। २।३। २ नाम्नि तृष्णुजिधारितपिद्मिसहा शक्यायाम् इति पूर्णे का० सू० ४।३।४। ३ कारितस्यानामिद्विकरणे इति पूर्णम् का० सू० ३।६।४। ४ का० सू० ४।१।२। ५ का० सू० २।४।४। ६ पर्वमरुतस्त श० च० सू० ४।१।७। ७ का० उ० ३।१।३। ८ का० सू० ४।३।४। ९ का० उ० ३।१।५। १० वर्णविनाशेन सकारस्य लोपोऽपि वौद्ध्य। ११ श० च० २।१।९। त्रीणि कुदानि शृङ्गाण्यस्येति विप्रहो दुन्यत्र। त्रिकुटपर्वते पा० स० ५। ४।१।६६ इत्यकारलोप। १२ का० उ० १।३।

पर्वतमेखलाया दश । प्रस्थीयते जनेनात्र प्रस्थम् । “१ नामिनस्थश्च” क । उभयम् । पाति रक्षति जनान् पाश्वर्म् । तदति उच्छ्रुत्य गच्छति तद्भूम् । त्रिषु लिङ्गेषु । सनोतीति सानु । २ कृबाप-जिमीम्बदिसाध्यशूदृष्टिजनिचरिचटिन्य उण् । “शण दाने” अस्य धातो प्रयोग । मेहनस्य ख तस्य मा-लातीति निरुक्ति । मिनोति प्रक्षिपति कामिचित्तानिति वा मेखला । उपत्यका उप सभीपे भवा उप-त्यका । “३उपाधिम्या त्यक्तासन्नारुद्योः ।” तदमस्यास्ति तटी । कीडार्थं जनस्ताम्यतीति४ नितम्बः । अमतीत्यन्तः । “५मृगवाहस्यमिदमिल्लूपूर्यस्त ।” एम्यस्तप्रत्ययो भवति । दम्यतेऽनेन दन्तः । “६मृगवाहस्यमिदमिल्लूपूर्यस्त ।” तप्रत्यय । तद्वानपि यिरिः स्मृतः । प्रस्थवान्, पाश्ववान्, तत्वान्, सानुमान्, मेखलावान्, उपत्यकावान्, तटीमान्, नितम्बवान्, अन्तवान्, दन्तवान् ।

गजाधिपः पतिः स्वामी नाथः परिवृढः प्रभुः ।

ईश्वरो विभुगीशानो भर्तेन्द्र इन ईशिता ॥१०॥

५

चतुर्दश रात्रि । न्यायमार्गेण राजते इति राजा । “७वृष्टिद्वाराजिविप्रदिवियुन्य” कनिः । “को यण्वद्भावार्थ । एव्य. कनि प्रत्ययो भवति । अधि ऐश्वर्यो पति रक्षतीति अधिप । तथा च उपसर्गवृत्तौ-अधि बशीकरणाधिप्रानाध्ययनैश्वर्यस्मरणाधिकेषु ।” पात्यवति पति । “पातेऽर्डति । अस्माऽ-ड-डतिप्रत्ययो भवति । ‘अमु गर्ता’ सुर्वं । शोभनममनीति स्वामी । ‘सावमेस्ति’ दीर्घेश्च ।” साकुपपदे५ अमेर्धानोरिन्प्रत्ययो भवति । नाथयति गिषु नाथः । “तृहि त्रुहि वृद्धो” । हो वृह । अत एव वृहः १५ परिपूर्वान्तं परित्वं हति परिवर्हति स्म वा परिवृढः । “८गत्यर्थ०” इति क । “९परिवृद्धदो प्रभुवलवतो” एतौ प्रभुवलवतोरर्थयोर्यथासख्य निषायेते । परिपूर्व्यं वृहैरिडभावो नलोपश्च । वृहत्रुहोः प्रकृत्यन्तर-योरपीत्यन्ते । ये तु रुद्रात्यन्तरयोरिच्छान्ति, तेषाम्भते “तृहु त्रुहि वृहु त्रुहि वृहु वृद्धो” इति पाठान्तर वर्तते । तेन पाठान्तरेण वृहस्य वा “तृहुः वृह” इति निपातः । तत्र वर्हति स्म दर्हति स्म इति वाक्य क्रियते । प्रभवतीति प्रभुः । “१०मुवौ डुर्विश्वप्रेषु च” । “११डानुवन्ध०” उकारलोपः । “१२श ऐश्वर्यै” इष्टं इत्येवशील ईश्वर । “१४कशिपिसि भासीशस्याप्रमदा च ।” एषा वरो भवति तन्त्रीलादिषु । विभवतीति विभु । दुप्रत्ययः । इष्टे शक्नोति सृष्टिस्थितिप्रलयान् करुम ईशानः । आश्रितजनान् विभर्ति पोपयति भर्ता । इन्दरित परमैश्वर्यसुकर्तो भवतीति इन्द्रः । “१५स्कायितश्चिवश्चिकिदिपिषुदिदिमदिमन्दचन्ननुन्दीनिद्यो रक् ।” एतीति इनः । “१६इण्जिक्षिपिन्यो नक् ।” इष्टं ईशिता ।

२०

अनोकहस्तसः शास्त्री विटपी फलिनो नगः ।

२५

द्रुमोऽड्डप्रिपः फलेश्वाही पादपोऽगो वनस्पतिः ॥ ११ ॥

द्वादश वृक्षे । अनस, शकटस्य अक गति हन्तीति अनोकह । “१७ओकहप्रत्ययेन वा अनोकह । तरन्त्यनेनात्प तरुः ।” “१८भूमृतच्छिंसिरितनिमस्त्रिशीड्यु उ ।” शास्त्राः सन्त्यस्य शास्त्री । विटपी विस्तारो-

१ का०स० ४।३।५। वल्लुतस्तु नामिन स्थर्चति कप्रत्ययस्य कर्तृरि विधानादत्र घनर्ये कविधान-मिति क । २ का०उ० १।१ । ३. पा० स० ४।२। ३४ इति त्यक्त् प्रत्ययाप्त्य च । ४. कीडार्थं जनैस्त-म्यते काड्यते इति कर्मणि विग्रही न्याय । ५ का० उ० ४।२।७ । ६. का० उ० २।३ । ७ उ०व० १।१ । ८ का० उ० ३।५।२ इति पातेऽर्डिप्र० टिलोपश्च । ९ का०उ० ६।६।८। पाणिनीयैस्तु स्वामिनैश्वर्ये पा०स० ४।२।१।२।६ इति त्वशब्दादामिनप्रत्ययेन साधितः । त्वमेश्वर्यमस्यास्तीति विग्रहः । १०. गत्यर्थाकर्मकश्ल-षशीड्यात्यासवसजनरुहजीर्यतिन्यश्च इति पूर्णं का० मू० ४।६।४। ११. का०स० ४।६।९। १२ का० स० ४।४।५। १३. डानुवन्ध० इत्यस्वरादेलोप इति पूर्णं का० मू० २।६।४।२ । १४. का० स० ४।४।४। १५ का० उ० २।१।४ । १६ का० उ० २।५।१ । १७ अन प्राणे । अनिति श्वामीऽङ्गास करोतीति । अन धातोरोकहप्रत्यय औणादिक इत्यपेक्षिताशः । १८. का० उ० १।५ ।

५ उत्स्यस्य विटपी । फलानि सन्त्यस्य फलिनः । ६ “फलवर्हाम्यामिनच् ।” न गच्छतीति नगः । ७ “डोऽ-
सशायामपि” । द्रवति वृद्धि गच्छति आयवा द्रुवृद्धैकदेशोऽस्यास्तीति द्रुमः । श्रद्धिभिश्चरणैः पिबति
पाति वा अङ्गुष्ठिपः । अङ्गुष्ठिपश्च । फलानि गृहणातीति फलेश्राही । अभिधानादीर्घः । ८ “९फलमलरजःसु
ग्रहेः” । पादै पिबति पानीय पादपः । न गच्छतीत्यगः । ९ “नगस्याऽप्राणिनि वा” विकल्पेन नकारलोपः ।
वनस्य पति वनस्पतिः । १० “पारस्करादित्वात्सुद् । महीरुह्, कुटः, शाल, पलाशी, हुः, वृक्षः, कुञ्जः,
विष्टरः, अगश्चापि ।

तत्पर्यायिचरो ज्ञेयो हरिवलिमुखः कपिः ।
वानरः मुवगश्चैव गोलाङ्गूलोऽथ मर्कटः ॥१२॥

१० एकोनविशति नामानि हगौ । अनोकहचर, तरुचरः, शाखिचर, विटपिचर, फलिनचरः,
१५ नगचरः, द्रुमचरः, श्रद्धिपिचरः फलेश्राहिचर पादपचर, आगचर, वनस्पतिचरः । इत्यादिद्वादशनामानि
मर्कटस्य जेयानि । हरतीति हरिः । ११ “ह सर्वघातुभ्य ।” वलयो मुखेऽस्य घलिमुखः । कम्पते वायुना शरीरे
कपिः । “अहिकम्प्योर्न लोपश्च ।” आम्या कि प्रत्ययो भवति नलोपश्च । वन वनति सम्भवते वानरः
नरोऽपि । लवेन उङ्कालेन गच्छति प्लवगः । १२ “डोऽस्मज्ञायामपि” च । गा भूमि लङ्घतीति गोलाङ्गू
लम् गोनाङ्गूनम् यामो गोलाङ्गूल उणादित्वात् “लगे दीर्घश्च” । “मृद्ग्राण्यागे ।” प्रियते मर्कट ।
१५ १३ “जटा मर्कटो” एतावटप्रत्ययान्तां निपात्येते । वनौका । लवङ्गम् । कीश । शाखा गः ।

विपिनं गहनं कक्षमण्य कानन वनम् ।

कान्तारमटवी दुर्गम्

२० नव वने । वेष्यते कम्पयते भयेनात्र विपिनम् । १४ “वेपितुक्ष्योर्हस्यऽन्त्यन्त्यन्ते” इतीनच् । उणादौ
उत्यते । १५ जूजिनाऽजिनेरिणविपिनतुहिनमहिनानि ।” एतानि इनप्रत्ययान्तानि निपात्यन्ते । १६ गायते
मृगादिर्मिर्गहनम् । उभयम् । कप्रति वर्षति कक्षम् । अर्पते गम्यते श्वापदै अररण्यम् । प्रतिभ्रायति अत्र
वा अरण्यम् । १७ “अत्तेरन्य” अस्मादन्य प्रत्ययो भवति । उभयम् । कन्यते गम्यतेऽन्मिन् काननम् । १८
वन्यने सेव्यते घनम् । कान्तम् जलान्तम् गच्छति इच्छनि वा कान्तारम् । अरन्यस्थामटवि । लियामीः ।
अटवी । दुर्खेन महता कटेन गम्यते दुर्गम् । नानाऽर्थे । सत्रम्, हव्यम्, दावम्, अरण्यानी, फलम्
(१९ अफलम्) ।

१. पात० भाष्य० ५।२।१२२ । २ का० स० ४।३।४७ इति गमेर्डः । ३. का० स० ६।२।४७
अर्नेन ग्रहेण्ठिन् । एव सर्ति वृद्धयथावात् फलेश्रहिरिति रूप सम्भवति । तत्राभिधानादीर्घ इति टीकाकारः ।
तथाभिधायकवचनाभावात्कोपान्तरेतु फलेश्राहीति दीर्घरहितयैव दर्शनाच्च फलेश्राहीति रूप चिन्तयम् ।
४ नेदश किमपि सूत्र कातन्पै । नगोऽप्राणिनि वा इति है० श० स० ३।२।१२७ । ५ पारस्करप्रभृतीनि
च सज्जायाम् पा० स० ६।१।१५७ । ६ अत्र अ० चि० ४।१८० प्रमाणम् । तटुकम्-वृक्षोऽग्न शिखरो
च शाखिकलदावदिर्हर्दुर्दुमी जीर्णोद्विटपी कुटः त्वितिरुहः कारस्करो विष्टरः । नन्दावर्तकरालिकौ तरुवर्ष
पर्णी पुलक्यद्विष सालानोकहगच्छपादपनगा रुक्षागमौ पुष्पदः ॥ इति । ७ का० उ० ४।४। ८ का०
म० ४।३।४७ । ९ खर्जिक्षुभिसिपिङ्गादिभ्य ऊरीलां का० उ० ३।६।० इन्द्र्यलूप० उणादित्वाल्लगे दीर्घश्चैति
दुर्गवृत्ति । १०. का० उ० ३।५८ । ११ पा० उ० २।५५ । १२ का० उ० २।२२ । इतीनप्रत्यय वपेर-
कारेकारश्च । १३. गाहू विलोडने । बहुलमन्यतापीति युच् । कृच्छ्रगहनयोरिति निर्देशाद्प्रस्तवः ।
१४ का० उ० ३।२। १५ कानयति दीपयति स्मरादि । कनी दीपती । युच् । कम जलम् अनन जीवनमस्य
वेति विग्रहोप्यूक्त्य । १६ फलपुष्परहिते वन्य-अवकेशि अफल शब्दा कल्पद्रुकोशे दृष्टाः । तटुकम्—
‘नवर्थात्फलपर्यायोऽवकेशी वन्य इत्यपि । फलपुष्पैविरहित एते वन्यादयस्त्रिपु ॥

तच्चरं स्याद् वनेचरः ॥१३॥

चरशब्देन युक्ते शब्दस्य नव नामानि । विपिनचरः, गहनचर, कक्षचर, अरण्यचरः, कान-
नचर, वनचर, कान्तारचर, श्रटवीचर, दुर्गचर ।

पुलिन्दं शवरो दस्युनिपादो व्याघलव्यकौ ।

धानुष्कोऽथ किरातश्च सोऽण्यानीचरः स्मृतः ॥१४॥

पोलति भ्रमति महत्व याति गच्छति पुलिन्दः । पुलीन्दश्च । शवति^१ निर्देयत्व गच्छतीति शवरः । तालव्यः । शवति अरण्य शवर । दस्यति अन्यमपक्षिणीति दस्युः । “जनिमनिदिस्म्यो यु^२ ।” एव्यो यु प्रत्ययो भवति । निषेदिति पापकर्मात्र निपाद । निषदश्च । वा^३ ज्वलादितुनीभवो णः । “व्यध ताडने” व्यध विधतीति व्याधः । “दिहि^४लिहिश्लगिवस्मिविधतीणश्याता च ।” एवा णो भवति । लुम्यते गृह्यते मामे लुम्यधः । स्वार्थेः लुम्यधकः । धनुषा^५ सह वर्तते दति धानुष्कः । किरति शरान्^६ किरातः । अरण्यस्य अरण्यानी (तत्र) चरतीति अरण्यानीचर । इन्द्र^७ वरुणभवशवकृमुडहिमयमारण्यव-
यवनमातुलाचार्यणामानुकृतेऽच । अरण्यानीति ।

वार्वारि कं पयोऽम्भोऽम्बु पाथोऽर्णः मलिलं जलम् ।

मरं वनं कुश नीरं तोयं जीवनमविपम् ॥१५॥

श्रष्टादश पार्वीये । वार्यति तृष्णमिदम् वारि, त्रुणोति वा चारि । “शृवसिवपिराजिवैनन-
भेरित्”^८ ॥१६॥ य इत्र प्रत्ययो भवति । त्रकार इज्वदभावार्थ । गन्तम् वार् । छीक्क्लिते । काम्यते इत्यते
कम्, कायतीति (वा) । “कायते उत्तिडमौ” प्रत्ययो भवति । पीयते पयते वा पयः । “पीड़ पाने”^९ ॥१७॥
“सर्वं धातु-योऽसुन् ।” अमति गच्छति स्वादुत्व सन्तम् अमम् । “अम गत्ता”^{१८} ॥१८॥ अमे^{१९} मोऽन्तन्तच । अकार
उन्नचारणार्थः । “अवि शब्दे” “अम्बु” इति सौंत्रो वा “सेवायाम्” । अम्यते तृणात्तिरित्यस्तु । “अच्चिव-
कम्बिन्यामुः”^{२०} ॥१९॥ आम्याम् प्रत्ययो भवति । पीयते पाति वा पाथ । “रमिकासिकुपिषात्वर्चिरचिसि-
चिगु-यस्थक्”^{२१} ॥२१॥ प्रयम्यक् प्रत्ययो भवति । को यग्नवद भावार्थः । ऋणोत्तर्यण् । गम्यते “स्नानपानार्थः”
मान्तम् अण्णस् । सरति गच्छति सलिलम् । उणादौ “पच सेचने”^{२२} ॥२२॥ “धान्वादः पः सः”^{२३} ॥२३॥ “सचते”^{२४}
इति सर्वालिलम् । “मन्तर्लिलस्त्रच चत्य लुक्”^{२४} ॥२४॥ मन्तर्लिलः प्रत्ययो भवति चत्य लुक् च । जडति नीच
गच्छति जलम् । जड च । शशानि हिनस्ति तृष्णाम् इति शरम् । बन्यते सेवते एनत वनम् । कोशते
कुशम् । प्राणिनेष्टा तृद्धि नयतीति नीरम् । मीयते हिनस्ति तृष्णा मीरम् च । तुर्दति तृष्णाम् तोयम् ॥२५॥
सोत्र आवरणार्थां वा । जीव्यतेऽनेन जीवनम् । जीवनीयम् च । आनुवन्ति समुद्रमित्यापः । आनोतः किवप्
प्रत्ययो भवति । हस्वश्च । अप् स्त्रिया बहर्यः । क्वचिदेकत्वम् । कलीवत्वम् । अपशब्दो बहुवचनान्तः ।

१ शव गत्ता न्वादि । बहुलकादर । २ का० उ० ४११ । ३ का० स० ४२२५५ ।
४ का० स० ४२२५८ । ५ धनु प्रहरणमस्येति व्युत्पन्नियंका । प्रहरणमिरण् । ६ किरतीति
किरः । कृ विक्षेपे । कप्रत्यय । अततीत्यत । अत सातत्यगमने । पचायन् । किरचासावतश्चैति किरात
इति पूरणव्युत्पत्तिः । ७. महादरण्यमरण्यानी तत्र चरतीति विग्रहो युक्तः । ८ इदं पाणिनीय ॥११॥८० अत्र
यमन्यधिकः पाठः । ९ का०उ० ४१५ । १० का०उ० ५१५० । ११ का०उ० ४१५६ । १२ का०उ० ५१६६ ।
अमति स्वादुत्व गच्छतीति शेषः । रामाश्रमम्भु अमिशवं इन्यतोऽसुन् प्रत्ययमाह । १३ का० उ० ५१३४ ।
१४ का० उ० २१० । १५ अर्थते इत्यस्य पर्ययो गम्यते । यतोऽर्णस् शब्दो नसप्रत्ययान्तः । ऋृ गत्तौ ।
१६ का० स० ३१०२४ । १७ सलति गच्छति निम्नमिति विग्रह सल् गतौ इत्यस्मात् सलिलत्यनि०
इत्यादि १५४७० सूत्रेण साधितोऽन्यत्र । १८ का० उ० ६३९ ।

“अपश्च”^१ इति घुटि दीर्घः । आपः । अघुट्स्वरत्वात् शसादेन दीर्घः । अपः । “अपा” भेदः^२ । इति विभक्तिभे पस्यदः । अद्विदः । अद्भ्यः । अद्यम् । अप्सु । “^३ वर्गदिः शष्सेषु द्वितीयो वा ।” अप्सु । अप्सु । आमन्त्रयो-है आपः । वैतेषि देह शैत्येन व्याप्तोतीती विषयम् । उभयम् । घनरसः, पुष्करम्, मेघपुष्पम्, पानीयम्, उदकम्, क्षीरम्, भुवनम्, दक्षम्, कमलम्, कीलालम्, अनृतम्, कवन्धम्, सर्वतोमुखम्, ५ आनंदं इति नानायेऽ ।

तत्पर्यायचरो मत्स्यस्तत्पर्यायप्रदो घनः ।

तत्पर्यायोद्भवं पदम् तत्पर्यायधिरम्बुधिः ॥ १६ ॥

तस्य पर्यायस्तत्पर्यायः, तत्पर चरशब्दे प्रयुज्यमाने मत्स्यनामानि भवन्ति । वार्चर, वारिचरः, कन्चरः, पयश्चरः, अभृश्चरः, अम्बुचरः, पाथश्चरः, अर्णश्चरः, सलिलचरः, जलचरः, शरचरः, वनचरः, १० कुशचरः, नीरचरः, तोयचरः, जीवनचरः, अप्चरः, विषचरः । प्रदप्रयोगे वारिपर्यायशब्दाग्रे घनस्य नामानि भवन्ति । वार्प्रदः, वारिप्रदः, कम्प्रदः, पयःप्रद, अभःप्रदः, अम्बुप्रदः, पाथःप्रदः, अर्णःप्रदः, सलिलप्रद, जलप्रदः, शरप्रदः, कुशप्रद, नीरप्रदः, तोयप्रदः, जीवनप्रदः, अप्प्रदः, विषप्रदः । इत्यादीनि घननामानि । तत्पर्यायोद्भव पदाम् । वारिपर्यायशब्दाग्रे उद्भवप्रयुज्ये उद्भवशब्दप्रयोगे कमलनामानि भवन्ति । वारुद्भवम्, वारुद्भवम्, कमुद्भवम्, पयुद्भवम्, अभुद्भवम्, अम्बुद्भवम्, पाथुद्भवम् अर्णुद्भवम् १५ सलिलोद्भवम्, जलोद्भवम्, शरोद्भवम्, वनोद्भवम्, कुशोद्भवम्, नीरोद्भवम् तोयोद्भवम्, जीवनोद्भवम् अवुद्भवम् विषोद्भवम् । तत्पर्यायधिरम्बुधिः । वा शब्दा (शब्दपर्याया) ग्रे धिग्रयुज्ये धिशब्दप्रयोगे अम्बुधिनामानि ज्ञेयानि । वार्षिं, वारिधि, कन्वि, पयोधि, अभोधि, अम्बुधि, पाथोधि, अर्णोधि, अलिलधि, जलधि, शरधि, वनधि, कुशधि, नीरधि, तोयधि, जीवनधि, अवधि, विषधि ।

पृथुगोमा पदक्षीणो यादो वैमारिणो झाषः ।

विसारी शफरी मीनः पाठीनो (५) निर्मिपस्तिमिः ॥ १७ ॥

२० एकादश मस्ये । पृथूनि विस्तीर्णानि रोमाण्यस्य पृथुरोमा । षट् अक्षीणि स्पर्शन-रसन-प्राण-चक्षु-शोत्र-मनासि यस्य स. पदक्षीणः । याति गच्छति जले, याद । विसरति “ग्रहादेर्षिन्”^४ विसारी मस्य इति । स्वार्थङ्ग । वैसारिण । भपति जन्मन् द्विनस्ति भप । “सु गतौ” । सु गृ गृ गतौ वा” । सृ विष्वर्वा^५ विसरति विसर्ति वा इत्येवशील, विसारी । “विप्रतिन्यामाद सत्तेणिन् ग्रत्यय । अस्योऽ २५ (स्य) वृद्धि । विसरिन् इति जाते सि । “इनहृ [पूर्ववत्] (पूर्षायमणा शौ च)” । शक्तिं शफरः । शका (न्) त्रायते (राति) शीघ्रगत्वान्वृपर्षरी । मीयते हिम्यतेऽन्योऽन्यत, मीनः । वृद्धपृत्वान् पाठयति भद्रयत्वेन पाठयते वा पाठीनः । निर्मिषति परस्पर द्विनस्ति हन्तीति वा निर्मिष । “नाम्युपद्ध (धात्) पृकृगृजा क.” । तिम्यति जलेनाद्रौ भवति तिमि । मस्य, अण्डजः, शकली, विसार, जलचर, शल्की ।

३० घनाधनो घनो मेघो जीमृतोऽभ्रं बलाहकः ।

पर्जन्यो मिहिगे नग्राट्

१ का० सू० २।२।१९ । २ का० सू० २।३।४३ । ३ का० सू० पू० सू० २५७ ।
४ का०सू० ४।२।५० इति णिन् प्र० । ५ पा०सू० ३।२।७६ उत्प्रतिन्यामादि सर्तेषुपसंख्यानम्
इति काशिकावृत्ति । ६ का०सू० २।२।२१ । ७ निमेपरहितत्वान्मीनानाम् । कोषान्तरेषु तेषामनिमिपसज्ञा-
दर्शनान्त्व अग्राप्यनिमिष इत्येव छेदो युक्त । ८ तु निमिष इति । तदुक्तम्-‘विसार शकली शल्की
शवरोऽनिमिषस्तिमि’ अ० चिं ४।१।१० । ९ का० सू० ४।२।५१ ।

नव मेघे । हन हिसागत्यो । हन्तीति धनाधनः । 'अच् 'धनाधन' इति सूत्रेण धनाधन इति निपातः । अथवा "२चिकिलदचक्नसच्चाचरच्चलाचलपतापतवदावदधनाधनपादूपता वा" इति नामभूता सद्वा रुद्धाः । तत्र किलदे' " ३नाम्युपधात्" कः । कनसिचरिचलिपतिवदिहनिपाटयत्यो उच्चप्रत्ययो द्विर्वचननिपातन चेति । वाशन्दात् किलदः कनसः, चरः, चलः, पतः, वदः, धनः, पटः, इत्यपि भवति । हन्यते वायुना धन । "४मूर्ती धनिदच ।" अल् । मिह सेचने । मेहति सिङ्गति भूमिमिति मेघ । "५च्यु चाम् (दिन्यश्च)" अच् । नामिनो गुण । "न्यद् कु ६" इत्येवमादीना चजोः क्गौ भवत । हश्च (हस्य च) घो भवति । जीवनस्य जलस्य मूत्र पुटवन्ध इति निमक्षया जीमूत । जीवन्त्यनेन भूतानि वा जीमूत । जीव प्राणने । अश्रन्यपो राति वा अश्रम् । अप्न गत्यर्थ । न भ्रश्यति तपो यस्मादित्येके । आनोति मर्वा दिशो वा अप्र क्लीबे । ७बलाकादिभिर्हीते बलाहक । वारिवाहको वा । प्रवर्षति जल पर्जन्य । उणादौ "पृजी सभ्यके" पृज्ञे पृणक्ति वा पर्जन्य । "८पर्जन्यपुष्ये" इति अन्यप्रत्ययान्तो निपात्यते । मेहति सिङ्गति विश्व मिहिर । महिर मुहिरश्च । न भ्राजते न शोभते न भ्राद् । "क्विवध्यजिपृवृर्विभासाम्" एषा क्विव भवति । अब्द., स्तनयिन्तु, पयोधर., धाराधर., धूमयोनि, तडित्वान्, वारिद, अम्बुभूत, मुदिर, जलमुच् ।

ગ્રંથા સૌદામિ (મ) ની તરફાની ॥૧૮॥

आकालिकी क्षणरुचिर्विद्युत्

24

पट् शम्भवायाम् । शाभ्यति शीघ्रं शम्भा । शम्भा च । शभिवति वा शम्भा । सुदामा अद्रिणा एकदिक् सौदामि (म) नी । १० तेनेकदिग्यत्यर्थ् । शोभनस्य दाम्भो वन्धनरजोरिय सदृशी सौदामि (म) नी । सौदामी नी । सौदामिनी च । ताडयति तडित् । ताडयतेर्गिलुक् । ताडयति मेघ ताडयतेर्सौ वेति तडित् । तान्तम् । आकलयति स्तोककाल रोचते वा आकालिकी । । “आड् मर्यादाऽभिविष्यो ।” क्षणे क्षणे रोचते शालते क्षणरुचिः । विद्योतते विद्युत् । चपला, क्षणिका, शतहदा, हादिनी, अचिराशुः, २० ऐरावती, चब्रला, चट्टला, दिश्या ।

तत्पतिग्मवृदः ।

विशुन्नब्दाये पतिशब्दे प्रयुज्यमाने अम्बुदनामानि भवन्ति । शम्पापति, सौदामनीपति, तडित्पति, आकालिकीपति, क्षणस्त्रियपति, विशुल्पति, निर्धातपति, अशनिपतिः, वप्रपतिः, उत्कापति, इत्यादिमेघनामानि स्य । ३५

निर्धार्तमशनिर्वज्रमुल्काशब्दं च योजयेत् ॥१६॥

चत्वारो वक्त्रे । निर्हन्त्रेऽनेनेति निर्धातम् । पर्वतादीनश्नाति, श्राशनिः । ११० श्रूतसुधृत्युभ्य-

१ हन्तेर्धन्वं च कां वार्तिकम् । अच् घनाघन इत्याकारक वचन न व्यचिद्-
पलव्यम् । शा० सू० ४।१५५ घनाघन पाटूपटम् इति । २ इदं तु नोपलव्यम् । चरिच-
लिपतिवीर्णा वा द्वित्वमच्याक् चान्यासस्थ वक्तव्यम् इति कात्यां वा० । ३ का०
सू० ४।२।५१ । ४ का० सू० ४।५।५० इति हन्तेरलप्र० घनिरादेशश्च । ५ का० सू०
४।२।४८ । ६ न्यद्व्यादीनाम् इति का० सू० ४।६।५७ इति हस्य व । ७ बलाकाभिर्हयते । ओहाद्-
गता० । कर्मणि कुरु । अथवा बलेन हीयते आहायते वा कुरु इति रामाश्रम । प्रपोदरादित्वाद् वारिवाह-
कशब्दस्य बलाहक इति निपातश्च । ८ का०उ० ३।८।८ का० सू० ४।६।५७ । १० तेन प्रोक्तमित्यत्त्वे-
नेत्यविकारे “एकदिक्” इति जै० सू० ३।३।८१ । ११ समानकालावायन्तौ यस्या इति विग्रहे आकालिकडा-
यन्तवचने इति पा० सूत्रेण समानकालशब्दस्याकाल आदेश इक्ट० प्रत्यये टित्वान्दीपि आकालिकोति
मूलोक्तमपि साधु । १२ का० उ० ३।४।३ ।

श्यविवृतिप्रिह्योऽनिः ।” एम्बोऽनिः प्रत्ययो भवति । “दु उ स्फूर्जा वज्रनिर्वेषे” स्फूर्जतीति वज्रम् । शूद्रादयः^३—“शूद्रोग्रवज्रविप्रभद्रगौरमेरीराः” एते रक् प्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । पर्वतेष्वपि वज्रति वज्रम् । उषति ज्वलति उल्का । उल् इति सांत्रोऽय धातुर्वा ।

परिष्टकर्दमः पङ्कः

५ त्रय. कर्दमे । परि समन्ताद् भाराकान्तः सीदति गन्तु न शक्नोतीति परिपत् । “३स्तसू द्विषद्वृ-हृद्युजविदभिद्विष्वजिनीराजामुपसर्गे” एषामुपर्वर्णेऽनुपर्वर्णेऽपि नाम्युपधातिक्वप् । कृषोति चेष्टा हिनस्तीति कर्दम् । “४पृथिव्यरिकदिन्योऽम्” । पञ्चयते विस्तार्यते वर्षाकालेन पङ्कः । उभयम् । उणादौ ‘पन च’ पनायते पन्यते वा पङ्कः । ‘पसिपनिन्या कः’^४ आन्या कः प्रत्ययो भवति । तत्रा चामरसिह—

“५निपद्वरस्तु जस्त्रालः पङ्कोऽख्या शादकर्दमो ।”

१० निपद्वर, जस्त्राल, शाद, इच्चिकिल, चिकित्सश्रानेकार्थे ।

तज्जम्

तस्मात् जम् उद्भवम् पङ्कजम्, कर्दमजम्, परिपजम्, इत्यादीनि कमलनामानि भवन्ति ।

तामरसं विदु ।

कमलं नलिनं पद्मं सरोजं सरसीरुहम् ॥ २० ॥

१५ खरदण्डं कोकनं पुण्डरीकं महोत्पलम् ।

दश कमलनामानि भवन्ति । ताम्यति जन कादृतिति तामरसम् । श्रमरसिहभाष्ये—“ताम प्रकर्पी रसोऽनुभ्य तामरसम् । तमः प्रकर्पीयुथस्तारतम्यवत् ।” केन मस्तकन मल्यते धर्यते कमलम् । श्रिया वासार्थ काम्यते वा । ‘पटिकमिमुशिकुशिन्यः कलः ।’ एम्य कल. प्रत्ययो भवति । कमल च । नला सन्त्यस्य नलिनम् । नलति आकृपति श्रिय वा नलिनम् । ‘पुलिनलितलिमलिट्रिहित्य किन’^५ । नल च । पवते पाति लक्ष्मीत्रव पद्मम् । “६० श्रतिष्वद्युम्बुद्धिरीपदभायास्तुस्यो म ।” उभयम् । सरसि तडांगे जातम् सरोजम् । सरस्या रोहति प्रादुर्भवति सरसीरुहम् । ७५ खरज्ज्व तदण्डज्ज्व खरदण्डम् । कोकाशचक्रवाका नदन्त्यत्र कोकनदम् । क्लीबे । [रक्त] कुमुदम्^६ । रक्तकमलज्ज्व । विशेषणम् [कुमुदकमलविशेषे । । पुणति माङ्गल्यात्वात्पुण्डरीकम् । मट (मुट) प्रमर्दने स्थाने । पुणिडरित्येके । पुण्डति पुण्डरीकम् । भाष्यकर्तृमने पुण शोभे । पुणति जल्पति २५ शोभा पुण्डरीकः^७ । “श्रनुनामिकान्ताद्वातोर्धं प्रत्ययो भवति । महज्ज्व तदुत्पल च महोत्पलम् । तथा च हुलायुधः—“पुण्डरीकं सिताम्बुजम् ।”

१ स्फूर्जतीति विग्रहे स्फूर्जधातो वज्रादेशो रक्प्रत्ययश्च निपात्य । वज गतौ । वजतीति विग्रहे केवल रक् । २ का० उ० २।१७ । ३ का० सू० ४।३।७४ । ४ का० उणादौ एतत्सूत्र नास्ति । पा० उ० सू० ४।८।४ कलिकद्योरम इप्यमप्त० । ५. का० उ० ५।३० । रामाश्रमस्तु पच्चि विस्तारे कर्मणि हलश्चेति धन् इत्याह । ६ अमर० १।१०।० । ७ द्वी० भा० १।१।४० = का० उ० ६।१ । ८. का० उ० ६।६ । ९०. का० उ० १।५।३ । ११ खरो दण्डो यन्येति विग्रहो न्यायय । १२ श्र श्र कोकन रक्तकुमुदे रक्तपक्जे इति मेदिनी तदिशेषे प्रमाणम् । १३-पर्षरीकादयश्च पा० उ० ४।२० इति मुदधातो रीकन-प्रत्ययान्तः पुण्डरीकशब्दो निपात्यते । रामाश्रमस्तु पुडिधातोररीकनप्रत्ययमाह । भाष्यकर्तृमते पुण धातोररीकप्रत्ययो डान्तागमश्चेत्युभय विशेषम । केवल डप्रत्ययस्तु न युक्तः । १४ इलायुध । ३।५८ ।

इन्दीवरं चारविन्दं शतपत्रं च पुष्करम् ॥२१॥

स्यादुत्पलं कुवलयम्

सप्त नीलोत्पले । इन्दति शोभैश्वर्ये प्राप्नोति इन्दीवरम् । अरान् राजी, विन्दति इति अरविन्दम् । विद्लृ लाभे, विद् अग्पूर्वः । अरान् विन्दतीति अरविन्दः । “कर्मणि च विद्” श-प्रत्ययो भवति । इति परसूत्रम् । स्वमते-अन्यत्रापि चेति [कर्मण्यण्^१] अण् बाधक । “साहिषाति-वैचुदेविचेतिधरिपरिलिपि(भिपि)विन्दा त्वनुःसर्गे” एषामनुपसर्गे शो भवति । चक्ष्याऽवयव अरविन्दम् । षिण्डी (पुण्डरीक) कन्तेऽये तु (अपि) अरविन्दम् । राजविशेषस्तु अरविन्दः । केचित्कमलेऽपि पु स्त्व मन्यन्ते । शत पत्राण्यस्य शतपत्रम् । बलीबे । शोभा पोषयति पुर्यति वा पुष्करम् । शोभामृतर्णेण पलति गच्छतीत्युत्पलम् । कौ बलते प्राणिति कुवलयम् । कुक्षितो बहिर्वलयः पत्रवैष्णन-मस्ति श्रीभोजः ।

५

१०

विशेषमाह—

अथ नीलाम्बुजन्म च ।

इन्दीवरं च नीलेऽस्मिन् सिते कुमुदकैरवे ॥२२॥

नीलाम्बुजन्म । इन्दतीन्दीवरम्^३ । कुवलय [दलनीलेति] सामान्यस्य [नीले] विशेष-वृत्ति । अस्मिन् सिते । रात्रौ विकास करोति चन्द्रेण काम्यते वा कौ मोदते वा कुमुदम् । दानतन्त्र । १५ के उदके जले रौति केग्वो हस्, नस्येद प्रिय कैरवम् । कलीबे ।

१५

तदृवती

तस्य कमलस्य पर्याये ‘वती’ इति प्रयुज्यमाने कमलिनीमानि भवन्ति । तामरसवती, कमलवती, नलिनवती, पद्मवती, सरोजवती, सरसीहस्रवती, कोकनदवती, पुण्डरीकवती, महोत्पलवती, अरविन्दवती, शतपत्रवती ।

२०

विसिनी ज्ञेया

दिनविकासिन्यामेक^४ । विसमस्त्यमा विसिनी । नलिनी । पुटकिनी । मृणालिनी ।

ब्रततीर्वन्लरी लता ।

बल्लीनामानि योज्यानि—

चतुर्वं (चत्वारो व) लर्याम । वृणोतीति ब्रतती । प्रकृष्टा ततिरस्या ब्रतती^५, ब्रततिश्च । २५ जपादित्वादत्वत्वम् । बल्लते घल्लरी । लाति ललति चित्त वा लता^६ । बल्लते वेष्टते घल्ली । बल्लादीः । बल्लिग्निदन्तोऽुपि । छियामी । बल्ली । ब्रातश्च । वीरुक् (व्), गुल्मिनी, प्रतानिनी, शारिवा^७, किर्मी च । वृक्षशाखायामपि ।

१ का० स० ४।३।१ । २ का० स० ४।३।५। ३. इन्दतीतीन्दी. लक्ष्मी. । सर्वधातुभ्य इन्दृ उ० स० ४।१।७ इतीन् । कृदिकारादत्तिन इति ढीप् च । तस्यावरमिष्टम् इति व्युत्पत्यन्तरमप्यूद्यम् । ४ एक. विसोनीशब्द इत्यर्थः । ५ अत्र चत्वारो वृण्यामिति युक्तम् । ६ प्रतनोतीति ब्रतति । तन् धातो किञ् । कौ च सज्जामिति किञ् । पृष्ठोदरा-दित्वात्पस्य व इत्यन्यत्र । ७ लति. सौत्रो धातुर्वेष्टनायां लततीति लता । पचाश्च इत्यन्यत्र । ८ सारिवाशब्दोऽनन्तमूलनामकौषधिविशेषवाचक । किर्मिं छी स्वर्णपुण्या स्यादपि मालापलाशयो-रिति-विश्वलोचनप्रमाणत किर्मिशब्दः । किर्मिशब्दो स्वर्णपुत्री-माला-पलाशवाचक । वृक्षशाखायां लताया वा उभावप्यप्रसिद्धौ । अतोऽत्रेदमेव प्रमाणम्

वारिधिवर्ण्यतेऽधुना ॥२३॥

अधुना हृदानीं वारिधिवर्ण्यते कथ्यते । केन १ भाष्यकर्ता मुनिश्रीमद्मरकीर्तिना ।
साम्रात् समुद्रनामानि प्रारम्भन्ते—

स्रोतस्थिनी धुनी सिन्धुः सूखन्ती निम्नगाऽपगा ।

५ नदी नदो द्विरेफश्च सरिन्नामा तरङ्गिणी ॥२४॥

एकादश नद्याम् । स्रोतः प्रवाहोऽस्यस्या स्रोतस्थिनी । धुनोति कम्पते धुनिः १ । छियामीं ।
धुनी । स्यन्दृति जले चलति सिन्धुः । त्रिषु । “स्यदेः” सम्प्रसारण धर्ष । तदेन्यो जल स्वति स्ववन्ती ।
निम्न गच्छति निम्नगा । आ समन्तादापानोति अद्भिरगति वा आपगा ३ । आपेन वा गच्छति आपगा ।
नदत्यव्यक्त शब्द करोति नदी । नदति नदः । “अच्” पचादिम्यश्च अच् । द्वौ रेकौ तटौ यस्य द्विरेफः ।
१० सरति समुद्र गच्छति सरित् । तान्तम् । तरङ्गा सन्त्यस्या तरङ्गिणी । तटिनी, नर्भरिणी, कूलङ्गासा,
शेवलिनी, सरस्वती, समुद्रान्ता, हादिनी, स्रोत, कर्तुं, कुल्या, द्वीपवती, रोधोवक्त्रा ।

तत्पतिश्च भवत्यव्यिः,

तस्या धुन्या पतिर्भुनीपतिरित्यादिसमुद्रनामानि भवन्ति । स्रोतस्थिनीपतिः, धुनीपति, सिन्धु-
पतिः, सूखन्तीपतिः, निम्नगापति, आपगापति: नदीपति, नदपति, द्विरेफपति: सरित्पति, तरङ्गिणीपति: ।

१५ पारावारोऽमृतोद्भवः ।

अपारवारकूपारौ रत्नमीनाऽभिधाऽकरः ॥२५॥

समुद्रो वारिराशिश्च सरस्वान् सागरोऽर्णवः ।

नव समुद्रे । पारमावृणीति पारावार । अन्तस्योदभव अमृतोद्भव । अपार वार् जल
यत्राद्दो अपारवा । न कु पृष्ठोति मर्यादापालनाद्कूपारः । हलायुधे—“न कु पृथिवी पिपर्ति व्या-
२० प्नोतीति अकूपारः ।” अकूपारे उपि । रत्नमीनशब्दयोरग्रे आकरे प्रयुज्यमाने समुद्रनामानि भवन्ति ।
रन्नाकर, पृथुरोमाकर, पदक्षीणाकर, यादाकर, वेमारिणाकर, क्षपाकरः विसार्थ्याकर, शफराकर,
मीनाकरः, पाठीनाकरः, निमिषाकर, तिम्याकर । ‘उन्दी क्लेदने’ सम्पूर्व । समन्तादुन्त्यस्मादिति
समुद्र ४ । “स्कायिति-चर्वाच्चशकितिपिक्षुदिरुदिमदिमन्दिचन्द्र्यन्दीन्द्र्यो रक्” “अनिदनुव्यवानाम-
गुणेऽनुषङ्गः” । तथा च हलायुधे ५—“मुदन्ति मिश्रीभवन्ति भौमाऽन्तरीक्षनादेयजलान्यत्र समुद्रः ।”
२५ अमरसिंहे—“समुनत्ति समुदः” । वारीणा जलाना राशिर्वारिराशि । सरासि जलप्रसारणानि
सन्त्यस्य सरस्वान् । सागरस्यापत्य सागर, सगरतनयै खात्वात् । अणासि सन्त्यस्य अर्णव ।

१ धुनोति कम्पयति वेतसादीन् । धुत् कम्पने । किंप् । पृष्ठोदरादित्वाचुक् । नान्तवान्दीप् धुनी
इति रामाश्रमः । २ का० उ० १७ । ३ अद्भिरगतोति विग्रहेऽप पकारस्य जद्वाभावोऽकारस्य
दीर्घत्वं च पृष्ठोदरादित्वेन निपातात्साध्यम् । ४ का० म० ४२२४८ । ५ अत्र कर्तृरिति दीपोकारान्तपाठो
युक्त । तदुक्तम्—कर्तृनंदी करोपाम्योरिति शाश्वत ६७२ । ६ यादम् शब्दस्य सकारान्तवाद् याद आकर
इत्येव न त यादाकर । ७ समन्तादुन्ति आद्रीकरोति भूभागानेताबानेव विग्रह । अत्रास्मादित्यपा-
दानार्यष्टीकोक्तो नापेक्षणीय । समीचीना मुदा जलचरविशेषा यस्मिन् सह मुदया मर्यादया वर्तते वेति
व्युत्पत्यन्तरमप्यूक्तम् । ८ का० उ० २१४ । ९ का० म० ३६१ । १० मुद ससर्गे चुरादि सम्पूर्व ।
कथादावदन्ते तत्पाठाच्चुरादिगिन्चो वैकल्पिकत्वान्मुदन्तीत्यपि पक्षे । समो मकारलोप पृष्ठोदरादित्वात्तत्र
बोध्य । ११. क्षी० भा० १६१।

तथा च क्षीरस्वामिभाये—“अर्णोऽस्यास्त्यर्णवः । ‘अर्णसो लोपश्च’ इति वः सलोपश्च ।” उदधि, उदन्वान्, तोयनिधिः, जलराशिं वीचिमाली, शशध्वज ३ । तदभेदा सात-लवणोद॑, क्षीरोद॑, सुरोद॑, इक्षुद॑ स्वादूद॑, दधुद॑, धूतोद॑ ।

सीमोपकण्ठ तीरञ्च पार रोधोऽवधिस्तटम् ॥२६॥

सप्त समीपे । पित्र॑ बन्धने । सिनोति बन्धातीति सीमा । “३ष्वर्मोमाश्रीमाऽधमा:” ५ एते मक्षप्रत्ययान्ता निषात्यते । कण्ठस्य समीपे उपकरणम् । तरन्त्यम्यान्तीरम्४ । तरति प्लवते इव के तीरं वा । “पिपर्ति वृणोति जलेनेति पारम् । पार्यते समाप्यतेऽस्मिन्निति वा । रुणद्वि जल वेगेन रोधस् । सान्तम् । उभयम् । अवधानम् अवधिः । “५उपसर्गे दं किं” । तटयते आहन्य-तेजमसा तटम् । त्रिपु । तट । तटी । इदन्तो वा । तटि । स्त्रियामी, तटी । कूलम्, कच्छु, प्रपात, तीरम् । १०

भङ्गस्तगङ्गः कल्पोलो वीचिस्त्कलिकाऽवलिः ।
पाली वेला तटोच्छ्रवासौ विभ्रमोऽयमुदन्वत् ॥२७॥

एकादश तरङ्गे । भजयते जले स्वयमेव भङ्ग । तरति प्लवते तरङ्ग । “६त्रिभ्यामङ्” आन्यामङ् प्रत्ययो भवति । कल्पन्तेजेन नव कल्पोल । कुत्सित लोडति कल्पोल इन्येक । याति (वयति) गच्छति वीचि ७ । स्त्रियामी, वीची । त्रुदिसुत्कर्षेण कलयति उत्कलिका । स्त्रि- १५ याम । आ समन्ताद् वलते आवलि । पाल्यते पालि । स्त्रियामी । पाली । वेलयति पूर्णिमादि-कालमपदिशति वेला । स्त्रियाम । तटश्च उच्छ्रवासश्च तटोच्छ्रवासो । तटति तट । उच्छ्रवमनम् उच्छ्रवास । विभ्रमति विभ्रम विकार । कस्य १ उदन्वत् समुद्रस्य । ऊर्मि, लहरी ।

सम्प्रति मनुष्यवर्ग आरन्यते श्रीमद्भरकीर्तिना—

मनुष्यो मानुषो मर्त्यो मनुजो मानवो नरः ।
ना पुमान् पुरुषो गोद्या ॥

२०

एकादश मनुष्ये । मनोरपत्य मनुष्य । *१०कुरुनिषादेन्य प्रथमाऽप्त्येऽपि” । कुरुनिषादान्या-मणीपि मनो मानृतश्च । व्यचिद्दिव्यस्वरस्य न वृद्धि । अण्वा । * मनुष्य । मानुष । उणादौ च । मन्यते सुखदृखादिकमिति मनुष्य । “११मनेन्य” उस्यप्रत्यय । मानयति मान्यते इति वा मानुष । “१२मानेन्म” उस्मृत्यय । उभयम् । २५

१ क्षी० मा० १६ । २ कोपान्तरेपु समुद्रस्य शशध्वज इति नाम नोपलव्यम् । कथ चित्समाधानापेक्षावा शशध्वज इति पाठो बोव्य । राशी चन्द्रो ख्वर्जस्त्वच्छ्रव वशमरुपापक यस्येति तद्विप्रह । चन्द्रस्य समुद्रप्रभवत्वं पुराणप्रसिद्धम् । ३ का० उ० १५६ । ४ तृ० झ्लवनतरणयो । क-प्रत्यये अत इर्दीर्घत्वं च । अत्रोणादि शरणम् । सरल पन्थास्तु पार तीर कर्मसमानां । ततस्तीरयतीति विग्रह पचायच् । ५ पालनपूरणयो पृधानुस्तेन पिपर्तीन्यस्य पूरयतीति पर्यायो युक्तो न तु वृणोतीति । ज्वलादित्वाण्ण । क्षीरस्वामी तु परे पार्श्वे भव कूलम् पारम् इत्याह । ६ का० स० १५७० इति कि । ७. का० उ० ५१२२ । ८ कल्प अव्यक्तं शब्दे कल्पन्ते इत्यस्य शब्दायन्ते इत्यर्थ । उणादित्वादोलच्चूप्र० । क जलम् तस्य लोलश्चन्चलोऽवयवः । अनुस्वारस्य परस्परणो लकार इति रामाश्रम । ९ वेज॑ संवरणे । वेत्रो डिच्च उ० स० ४१३२ इतीचिप्र० । १०. *एव चिह्निताशस्याने “मनो पण्प्यै” का०ल०प० ४९३ इति प्य व्य प्रत्ययो इति पाठो युक्त । ११ का० उ० ६११० । १२. का० उ० ६१११ ।

“उड्डीय वाङ्गिष्ठत यान्तो वरमेते भुजङ्गमः ।

न पुनः पक्षर्हानन्तश्चात् पद्मुप्रायन्तु मानुषम् ॥”

भ्रियते मर्त्यं । “‘उडस्यः’ । स्वार्थं त्यो वा । मनोर्जातं मनुजं । मनोरपत्वं मानवः ।

५ नृणाति विनयति नरः, ‘णीञ् प्राणे’ नयतीति वा । “‘नियो डाङ्जुबन्धस्च’ । अस्मात् ऋन् प्रत्ययो भवति, स च डाङ्जुबन्ध इष्यतेऽन्यस्वरादिलोपार्थः । पूर्यते कुलमनेन सान्त-पुमान् । उणादौ पूडः पवते पुनातीति वा पुमान् । “‘सिर्मनन्तश्च’ । अस्मात्सिं प्रत्ययो भवति, श्रस्य च मन् अन्त चकाराद् हस्तवत्वं च । इकारं उच्चारणार्थः । पुरि पुरि शयनात् पूरणाद् पुरुषः । पृणाति पूर्यति वा स्त्रैणामुदरं गर्भेणोति पुरुषः । “‘पुणाते’ । कुषः” । अस्मात्कुषं प्रनयया भवति । कोङ्जुबन्धः । अन्येषामर्माति वा दर्श । पूरुषः । लत्वे पुरुषः, पुलुपश्च । “गुधं परिवेष्टने” । गुध्यति गोधा ।

१० धवः स्यात्तरपतिनृपः ॥२८॥

तस्य मनुष्यशब्दस्याप्ने धव-पतिशब्दप्रयोगे नृपनामानि भवन्ति । मनुष्यधवं, मानुषधवं, मर्त्यधवं, मनुजधवः, मानवधवं नरधवं, ऋधवः, पुन्धवं, पुरुषधवं गोधाधवः । मनुष्यपतिः, मानुषपतिः मनुजपतिः, मानवपतिः, नरपतिः, नृपतिः, पुम्पतिः, पुरुषपतिः गोधापतिः ।

भृत्योऽथ भृतकः पत्तिः पदातिः पदगोऽनुगः ।

१५ भटोऽनुजोऽयनुचरः शस्त्रजीवी च किङ्करः ॥२९॥

एकादशं सेवकं । भ्रियते इति भृत्यः । “‘मृत्रोऽमज्ञायाम्’ । भ्रियते गजा भृतः । स्वार्थं क । भृतकः । पतति श्रवो गच्छति पत्तिः । पतन वा । [पदान्याम] अतति [पदातिः ।] पादातिक । अँगादिक इक । ५० विनयादित्वात्वार्थं ठण् । पद्म्या । ३० गच्छतीति पदगः । अनु पश्चाद् गच्छति अनुगः । भट्टि युद्धं विभर्ति भटः । अनुजीवीतयेवशीलं अनुजीवी । अनु पश्चाचरतीत्यनुचरः । २० शन्तैण आयुधेन जोवतीत्येवशीलं शस्त्रजीवी । कि कुत्सितं कार्यं विद्वाति किङ्कर । सहाय, सेवक, पदज्येष्ठ, पद्मा, पदिकत्र । तथा च यशस्मित्तलके-(श्लो० १३०)

“सत्यं दूरं विहरति सम साधुभावेन पुसा धर्मश्चित्तात्सह करुणया याति देशान्तराणि ।

पाप शापादिव च तनुते नाचवृत्तं सार्वं सेवावृत्तेः परमिह पर पातकं नास्ति किञ्चित् ॥”

स्त्रीं नारीं वनिता मुग्धा भामिनी भीरुहङ्गना ।

२५ ललना कामिनी योपिद् योषा सीमनितीति च ॥३०॥

१ का० उ० ६।१७ । ० वाणपये का० रू० पू० ४७३ इत्यण् । ३ का० उ० २।४१ । ४ पाति पुनाति वा पुमान् । पातेङ्गुमन् पूजा इम्मन्, पा० उ० ६।१७० इति प्रक्रियाऽन्यत्र । ५ का० उ० ८।४२ । ६ पुरि शयनादिति तु निश्चलप्रकारो विभ्रहस्तु पूणातीत्यादिरेव । ७. का० उ० ३।५४ । ८ गोधाशब्दस्य पुरुषार्थं कोपान्तरप्रमाणं नोपलध्यम् । तदुकम्- गोधा तलनिहःक्योः । विंश्लो० । गोधा प्रणिविशेषं स्यज्ज्याघातयच वारेण । आकारान्तर्भीलिगत्वं च सर्वत्रास्योक्तम् । अ०स० २४३। अर्तोऽस्य मूलं मृग्यम् । गोद इति पाठे तु गोदो मस्तिष्कमस्यातीति गोद । मुख्यमस्तिष्कवत्वात् पुरुष इति समाधेयम् । तदुकम् गोद तु मस्तकस्नेहो मग्निकों मधुलुडक अ० चिं ३।२८९ । ९. का० स० ४।२।२५ इति क्षप् । १ अँगादिकस्ति, किन्चकों च मज्जाचामिति वा किंच् । पतन वा इति व्युत्पत्तिस्वप्रासङ्गि-कत्वादुपेदेवा । ११ अज्यतीत्यर्थं च पा०उ० ४।२।३० इत्यतेऽन्तः । पादस्य पदाज्यातिहतेणु इति पदादेशश्च । १२ विनयादेष्टण् जै० स० ४।२।४० । १३ पदान्या पदान्या वेति वक्तव्यम्, न तु पदान्यामिति । पाद इत्यापते । पादस्य पदाज्यातीति पादस्य पद् ।

नितम्बन्धवला बाला कामुकी वामलोचना ।

भामा तनूदरी रामा सुन्दरी युवती चला ॥३१॥

द्वाविशति: छियाम । “स्तूरु आच्छादने” स्तुरात्याच्छादयति स्वदीपान् परगुणानि-
ति रुदी । उणादौ । स्तुरात्याच्छादयति लजयाऽमानमिति रुदी । स्तुरातेष्ट्” प्रत्ययो भवति ।
अकामात्रः । “रमूर्वर्णः” । अथवा द्रूदूषाठः । डाऽनुवन्धेऽन्त्यस्वरादिलोपार्थ । डकारो ५
नदाचर्थः । रकारमात्र एव । अमरसिहभाष्ये—“स्त्यायत्य(ते) स्त्या गभः स्त्री॒” तथा च हलायुधे—
“स्तूरु॒नि विवेकमा॒न्द्वर्नर्त्त स्त्री॒” । नरस्य द्वा जातिस्तेतनाती । नर वनति भजते वनिता । मुहू वैचित्र्ये
कायेषु मुद्दति मुग्धा । मुहेष्ट्॒हस्य गः॒” भामते कुप्यते (ति) भामिनी । [भामः] क्रोधोऽस्यस्या॒
वा भामिनी । विभेष्यस्माद्(त्यसौ)भीरु । “भिभो रुद्गुकौ च॒” भीरुः । प्रशस्तान्यद्वान्यस्या अद्वाना॒ ।
लाडयति (लडति) विलमति, ललयति (ललति) नरमीप्सते वा ललना॒ । “लल ईसायाम” । भोगान् १०
कामयते कामिनी । युप॒ सौंत्रोऽय धातु सेवाऽर्थे । योषति पुरुष गव्यति रतेच्छया आत्मनो योषा ।
“कष शिष जप भष दष मष रुष रिष यूष जृष हिसार्था॒” । योषति हिनस्ति हन्तीति योषित् । “हस्तडि॒
रुहियुपिभ्य इति॒” एन्य इतिप्रत्ययो भवति । इकार उच्चारणार्थः । अमरसिह—“योनि पुमा योषित्॒”
अजादित्वादा॒प्रत्यये योषिता॒ च । सीमन्तोऽस्त्या॒ सीमन्तिनी॒ । बधाति चित्त बधू॒ । नितम्बोऽस्यस्या॒
नितम्बिनी॒ । न विष्टते बलमस्या अबला॒ । ‘ब्रा॒ सांभाग्य लार्त यह्नातीत बाला॒ । ‘कमु कन्तो॒’ कम् । १५
“कमेरिन्दू॒ कगितम” इन् । “अस्योप॒” दीर्घ । कामयते इत्येवशीला कामुकी॒ । “शकमगमहन्तुप॒
मूस्थालपपतपदामुकत्र॒” । कारितलोप॒ । “निमिष॒” दीर्घभाव । त्रकाराऽनुवन्वत्वात्सूर्वस्योप॒ दीर्घ॒ ।
वासे मुन्दरे लोक्यने नत्र यस्या सा वामलोचना॒ । “भाम क्रोधे॒” चुरादो॒ । भामयति॒ । “भाम क्रोधे॒”
वादावकाराऽनुवन्ध आत्मनेपदी॒ । भामते भामा॒ । चक्षुदोषादिदर्शनात्॒ । तनु सूक्ष्मसुदर यस्या सा॒
तनूदरी॒ । नरेषु रमते, मनासि रमयति वा रामा॑२ । मुहु द्रियते आद्रियते ज्ञोऽनुव शोभनो दरो॒ २०
वराऽच्छुद्रमस्या वा॑३ मुन्दरी॒ । अथवा ‘मुन्दर’ इति सौंत्रोऽय धातु॒ । युवत्शब्दाद्वदादिविहितमि॑४,
युवति॒ । यु मिश्रणं योनि नगन् मिश्रयति आंशादिको वा अति युवति॒ । छियामा॒ । युन्ती॒ ।
यूनीत्यन्य । तथाहि प्रयोग—

“भर्ता॒ मगर एव॒ मृत्युवसति॒ प्राप्तः॒ सम॒वन्धुभि॒,

यूनी॒ काममयं॒ दुनोनि॒ च॒ मनो॒ वैघव्यदुःखाद॒ वधृः॒ ।

बालो॒ दुस्यज्ञ॒ एक॒ एव॒ च॒ शिशु॒ कष्ट कृत॒ वैधसा॒,

जीवासीति॒ महीपते॒ प्रलपति॒ यदूवैरसीमन्तिनी॒॥”

चलचित्तान्पुरुपान् चालयतीति चला॑५ । वामनेत्रा पुरुषी॒ वासिता॒ वर्णिनी॒ प्रमदा॒ रमणी॒

२५

१ का० उ० १०३६ । २ का० सू० १२१० । ३ क्षी० भा० २१६२ । ४ का०३०
६१-८४ इति घिक् प्र० हस्य गश्च । ५ का०३० ४१४५६ । ६ का०३० १०३५ । ७. क्षी० भा०
२१६२ । ८ का० र०० ३० ४६२ । ९ का० र०० ४१०३४ । १० कारितस्यानामिद्विकरणे का० र००
३१६१४४ इतीनो लोप । इन् कारितमज्ञा कातन्त्रव्याकरणे । ११ निमित्तापाये॒ नैमित्तिकस्याप्यपाय इति॒
परिभाषेन्दुशेखरे अकृतव्यूहपरिभापार्थस्य । १२ रमते रामा॒ । ज्वलादित्वाण्ण । रमयतीति तु न युक्तम्
प्यन्तस्य ज्वलादित्वाभावात् । १३ सु अतीव उनात सुन्दरी॒ । उन्दी क्षेदने॒ । बाहुलकादप्र० । शक्त्वादि॒
त्वादुकारस्य पररूपम् । गौरादित्वान्डीप॒ इति रामाश्रम । १४. का० सू० २१४५० । १५. चलचित्ति॒
पुरुषश्वलती॒ त चलत्येव विग्रह । पचायत्त्वा॒ । एतन्तातु चाला॒ इति स्यात्॒ ।

दयिता, प्रतीपदशिनी, कान्ता, वशा, महिला, महेला च ।

भार्या जाया जनिः कुल्या कलत्र गेहिनी गृहम् ।
महिला मानिनी पत्नी तथा दारा: पुरन्ध्रयः ॥३२॥

दश कलत्रे । हुभृत् धारणपोपण्यो । भ्रियते पूज्यते गर्भेण भार्या । “^१कृवर्णव्यञ्जना-५ न्तात्प्रथ्यण्” । यकारमात्र । अत्योपधावृद्धि । भार्या इति जातम् । “^२ब्रियामादा” । आप्रत्यय । प्र० सि । “^३श्रद्धाया सिलोपम्” । मिलोप । “ज्या व्योहाने” जा (जि) नाति जाया । जनी प्रादुर्भावे च । सुखी जायते आत्मा उत्रजाया । “^४सन्ध्यादय-सन्ध्या वन्ध्या जाया इत्यादय शब्दाः यक्प्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । जनयति पुत्राञ्जनिः । इ “सर्वधातुभ्यः” । कुले साधु कुल्या “यदुगवादित” । “कड मदे” कड तांदादि । कडति माद्यति योवनेनेति ^५कलत्रम् । “अभिनित्किंडिम्योऽत्र” अत्रप्रत्यय । १० कडवम् । डलयोरैक्यम् । प्रथ मि० नपु० “अका० सुरा० । ^६मोऽनु० । गेहमस्त्यस्या गेहिनी । “ग्रह उपादाने” । गृहांति प्रत्युपाजित गृहम् । “^७गेहेत्वक्” अक्प्रत्यय । “ग्रहिज्या”^८—सम्प्रसारणम् । मध्यते पूज्यते । मोहला । मान प्रणयकोपेऽत्या मानिनी । पति पतिति याति पत्नी । “ह विदरणे” । १० क० । दोर्यने शतवण्डीभवति पुरुष एभिरिति दारा । “^९भावे” व्रज् । अकारमात्र । ^{१०}वृद्धि । दार इति जातम् । प्रथमा जम् । प्रया बहुत्व च । पुर धमयन्ति, नेत्रान्ते पुर शरीर धरन्तीति ^{११}पुरन्ध्रयः । १५ नेत्रम्, सहधर्मचारिणा, गृहा, महर्ची, सहचरा ।^{१२}

वल्लभा प्रेयसी प्रेष्टा गमणी दयिता प्रिया ।
इष्टा च प्रमदा कान्ता चण्डी प्रणयिनी तथा ॥ ३३ ॥

एकादश वल्लभायाम् । वल्लते पत्युच्चित्त सत्रृणोतीति वल्लभा । “^{१३}कृप्रशलिगर्दिरासि-वलिवलिम्योऽम्” ग्रम प्रत्यय आप्रत्यवा । अतिशयेन प्रिया प्रेयसी । “तर^{१४}तमेयच्चिष्ट” प्रकर्षाऽुर्ये २० “तर तम ईयसु इष्ट” इत्येते प्रत्यया भवन्ति । अतिशयेन प्रिया प्रेष्टा । रमते जनोऽत्र, मनासि रमयति

— — —
‘ का० स० ४१२।३५ इति ध्यणप्रत्यय । २ का० स० २।४।४१ । ३ का० स० २।१।३७ ।
४ का० उ० ४।३० । ५ का० उ० ३।१४ । ६ का० स० २।६।११ इति यत्प्र० । ७ का० उ० ३।५१
गड सेचने । गडति गडयते वा “गडेरादेश्च कः” पा० उ० इत्यत्रन् । डलयोरेकत्वम् । कड शासने मदे ।
कडति कड्यत वा गाहुलकादत्रन् । कल मधुर धनि त्रायते रक्षति वा । त्रैदृ पालने क इत्यन्यत्र ।
८ ग्राहारादसन्तुद्बो युश्च इति पूर्णे का० स० २।२।७ इति सेलापो युरागमश्च । ९ मोऽनुस्वार
व्यञ्जने इति पूर्ण का० स० १।१।५ इत्यनुस्वार । १० का० स० २।२।६० । ११. का० स० ३।४।२
ग्राहज्यावयव्याविष्ट्वा च प्रचिछुवृश्च भ्रस्तीनामगुणे इति पूर्णसूत्रम् । १२ का० स० ४।५।१३ । १३ का०
स० ३।३।१० । अस्योपयावा दीर्घा वृद्धिनामिनामिनिचत्पु इति सत्त्वस्वरूपम् । १४ स्यातु कुट्टम्बनी पुरन्त्री
२।६।६ । इयमरादिकोशेतु दर्शकारान्तपुरग्नीशब्दस्यैव सत्त्वादत्र पुरन्ध्रय इति पाठोऽयुक्त इति न
भ्रमितध्यम् । पुर धरन्तीति विग्रहे “अन इ” पा० उ० ६।१।३९ इति इ । पुषोदरादित्वात्पुरोऽुकारान्तत्व
मुमागमन्तनि रोप्या तस्यात्प्रत्यये । अत एव “ तौ मनातकैव्युमता च राजा पुरन्त्रिभिश्च क्रमश
प्रयुक्तम्” इति रघु । पुरन्ध्रयन्तीति न विचारसहम्, तसाधकानुशासनविरहात् । १५. भार्यादिपुरन्ध्रयन्त-
शशेषु सामान्यविशेषभावादर्थभेदो न विस्मर्तव्यः । तद्यथा-भाया, जाया, कुल्या, कलत्र, गेहिनी, गृह, पत्नी
दारा परिणामज्ञोवाचका । महिलामानिन्यौ विशिष्टनायिके । पुरन्त्री पतिपुत्रती । १६. का० उ० ३।१२ ।
१७. एतच कातन्त्रसूत्र नोपलव्यम् । गुणाङ्गदेष्टेष्यम् शा० स० ३।४।७।९ इतीयमुपत्ययो ब्राध्य ।

वा रमणी । नरेषु दयने गच्छति ईष्टे वा दयिता । प्रीणति पतिचित्त रज्यति प्रिया । इज्यते इध्यते वा इष्टा । प्रकृष्टो मदोऽस्या प्रमदा । काम्यते नरेण कान्ता । चण्डते कुम्यति चारडी । चण्डका च । प्रणयोऽस्या अतीति प्रणयिनी ।

सती पतिव्रता साध्वी पतिवत्येकपत्यपि ।
मनस्विनी भवन्यार्या-

सप्त पनिव्रतायाम् । एक पतिरस्तीति संती^१ । पतित्रत करोति पतिरेव वत सेव्यो नाम्यो यस्या इति वा पतिव्रता । पतिसेवैव व्रत यस्याः पतिव्रता । यत् उति — “नास्ति^२ छीणां पृथग्यज्ञो न व्रतमिति”^३ । साधयति साध्वी । पतिरस्या अस्तीति पतिवती^४ । एक पतिर्यस्याः सा एकपती । मनोऽस्या अस्तीति मनस्विनी । अर्थते सेव्यते आर्या । मुचरिता ।

विपरीता निरूप्यते ॥ ३४ ॥

मया धनञ्जयेन, भाष्यकर्ता अमरकौर्तिना वा कथ्यते विपरीता असदृशा । १०

बन्धको कुलटा पुनर्भूः पुनर्भली खला ।

पट् बन्धक्याम् । बन्नाति तरुणचित्तानि बन्धको । कुलमटति कुलटा । तथा चोणादै “टल टल वकल्पे” हेताविन । अस्योपायावा दीर्घ । कुलपूर्व । कुल टालयति कुलटा । “कुले” टाले-रिलुक् डृश्य “कुले उपरेद टालेरिल्लन्तस्य डः प्रयो भवित इलुक् च । स्वाचार मुच्यते (स्म) पत्या जनैवा मुक्ता । पुनर्भवतीति पुनर्भूः । पुमास चालयति पुंश्चली । य व पञ्चेन्द्रियोत्पन्नमुख लाति गहातीति १५ खला, अन्यपुरुषलम्पटत्वात् । पाशुला, स्वरिणी, अस्ती, इत्वरी, धर्मरी, अविनीता, अमिसारिका, चपला ।

स्पर्शाऽभिसारिका दृती स्वैरिणी शम्फली तथा ।

पत्र दूत्याम् । ‘स्पृशा सप्तर्षा’ । स्पृशति, स्पृह्यति, अस्त्राक्षीति, पप्सर्षा वा वज् । स्पर्श । “पद्-रुजविशस्तुशोचा घन”^५ । नामिन् श्व गुण । ‘ज्यायामादा’ आप्रत्यय । स्पर्शा । पुरुषान्तरसभिसरति अभिसारिका । दूयन्तेऽस्या^६ मालयात दृती । “ईं गतौ कम्पने च” । ईर् । ईरणग ईर । “भोव”^७ २० घन् फ्रय । त्वस्य ईर्, स्वर । स्वैरो विग्रहेऽस्या स्वैरिणी । “तदस्याऽस्तीति” मन्त्रवत्कीन्^८ इन् । “‘नदाद्यन्तवाहू’ इ ग्रन्थयः । रपूवणम्य^९” नस्य णात्वम् । श मुखम् कलनि निष्पादयतीति शम्फली । तथा तेनैव प्रकारेण ।

गणिका लज्जिका वेश्या स्पृशाजीवा विलासिनी ।

पण्यस्त्री दारिका दामी कामुकी मर्ववल्लभा ॥ ३६ ॥

नव वेष्यायाम् । गण, पेटकोऽस्त्वया, गणयतीश्वरानीश्वरो वा गणिका । ‘लज्जि लाजि लाजि लज तर्ज भर्त्तने’ । लज्जयति निः स्वान्तुरुषान् तत्रयतीति लज्जिका । वेशो वेश्यावाटे भवा वेश्या^{१०} । रूपेण आ समन्ताजीवतीति रूपाजीवा । विलासोऽस्याऽस्तीति विलासिनी । तथा चौकम् —

“हातां मुखविकारः स्याद् भावश्चित्तसमुद्भवः ।

विलासो नेत्रज्ञो ज्ञेयो विभ्रमोऽत्र दग्धन्तयो ॥

१ अस्त्रातो शत्रुप्रत्ययान्तो दीवन्तः सतीशब्द । २ “नास्ति छीणा पृथग् यज्ञो न व्रत नाप्युपोवणम् । पतिं शुश्रूपते येन तेन स्वर्गे न हीयते” इति मनुस्मृति ५।१५५ । ३ पतिवर्ती, एकपत्नी इति पाठो युक्त । ४ का० ३० ५।४७ । ५ का० सू० ४।५।६ । ६ का० सू० ३।५।२ नामिनश्वोपायावा लघो इति पूर्णसूत्रम् । ७ दूयन्ते परितप्यन्ते । अस्य कर्तार छीपुमासः । ८ का० सू० ४।५।३ । ९ का० सू० २।६।५ । १० का० सू० २।६।५० । ११ का० सू० २।४।४८ । “रपूवणेभ्यो नोममन्त्य स्वरह्यकवर्गान्तरो ऽपि” इति पूर्णे सूत्रम् । १२ वेशेन नेपथ्येन शोभते, “कर्मवेशाद्यत्” इति यत् । वेशो भवा दिग्गदित्वाद्यत् ।

पर्याप्तं छी परायरुदी । परिमाणं कृत्वा रमयतीत्यर्थः । दृष्टाति विदारयति कामिनम् दारिका । दस्यति परिकर्मणा क्षयति, ददात्यात्मानं वा दासी । दाशी । तालव्यदन्त्यः । कामयते इत्येवशीला कामकी । सर्वेषां पुरुषाणां वल्लभा सर्वदृष्टभा । सैरिन्प्री ।

“‘चतुषष्टिकलाभिज्ञा शीलरूपादिसेविनी ।

प्रसाधनोपचारश्च सैरिन्ध्री कथ्यते बुधैः ॥”

गन्धकारिका । पण्यस्त्री च ।

कान्तेष्टै दयितः प्रीतः प्रियः कामी च कामुकः ।

वल्लभोऽसुपतिः प्रेयान् विटश्च रमणो वरः ॥३७॥

त्रयोदश कान्ते । काम्यतेऽभिलायते कान्त । इष्यते इष्ट । दया कृपा सजाता अस्येति दिव्यितः ।

१० “तारगकितादिदर्शनात्सजातेऽयं इतच् ।” “इवर्णावर्णयोर्लोपः स्वरे प्रत्यये पे च ।” आकारलोपः । सौरेकः । प्र प्रक्षेपणं ह कामसुखम् इत प्राप्तः श्रीत । पूर्णोदारदित्वात् आकारलोपः । प्रीणातिस्म प्रीतः । प्रीणाति प्रीणीते वा प्रियः । “नाम्युपधीकृगृजा कः” । “स्वरादाविवर्णोवर्णान्तत्य धातोरिजुवौ ।” कामोऽस्थात्मीति कामी । कामयते इत्येवशील कामुक । वल्लते वल्लभः । “कृशशलिगदि-रासिवतिवल्लभोऽभः ।” अभ प्रत्यय । असूना प्राणाना पति । असुपति । अतिशयेन प्रिय प्रेयान् ।

१५ “प्रियस्थिरस्किंचुबलगुरुवृद्धत्र प्रदीर्घवृन्दारकाणा प्रस्थस्कवर्बाहिगर्वर्धित्यवृद्धाधिवृन्दाः ।” विट शब्दे विटति कामोद्रेकशब्दं करोतीति विटः । “इगुपधेति क । ‘रमु कीडायाम् ।’ रम् । रमते कश्चित् । त प्रयुक्ते इन् । अस्योपधादीर्घः । “मानुवन्धाना हस्तः ।” रमयतीति रमणः । “नन्द्यादेव्यु ।” १६ “युवुक्तानामनाकान्ता” अन् । “कारितस्य” कारितलोपः । “३रपृ०” नस्य गत्वम् । वृणोति वर-यति वा वर । कमिता । पति । वरयिता । भर्ता । भोक्ता । धवः । सृच्य । अभीक । “अप्य-२० नुभ्या कामपितरि को वा दीर्घस्च” जनयति कः । अभीक । अमुक । प्राणाश्रिनाथः । सेता ।

सवित्री जननी माता

त्रयः मातरि । सूते जनयति सविश्री । जनयति जायतेऽस्या वा जननी । माति गर्भांत्र
१० मानयति वा माता । श्रमा ।

जनकः सविता पिता ।

२५ त्रयं पितरि । जनयति उत्त्वादयतीति जनक । पुत्रान् सुजते (सूते) सविता । अहितान् पाति रक्षतीति पिता । “उणादौ” पा रक्षणे, पातीति पिता । ‘रक्षादयः’^{१८} । ‘स्वसुनपूनेष्टुत्वष्टु क्षत्तुहोत्प्रासाद्युपितृमातृद्वितृजामातृभ्रातरः’ एते शब्दास्तुनप्रत्ययान्ते । निपात्यन्ते ।

१. 'चतुष्प्रथिकलाभिज्ञा शीलरूपादिसेविनी । प्रसाधनोपचारजा सैरस्त्री स्ववशेति चेति कात्य' । इत्यमरकोशे त्री० स्वा० । २ का० रू० पू० ५०८ । ३ का० मू० २१६।४४ । ४ का० स० ४।२।५१ । ५ का० स० ३।४।५५। इतीप् । ६ का० उ० स० ३।१।२ । ७ पा० स० ६।४।१५७। इति प्रियशब्दस्य प्रादेश । ८. 'हुगुपत्ताप्रीकिर क.' पा० स० ३।१।१।३।५। ६ का० मू० ३।४।६।५। इति हस्त । १०. का० स० ४।२।४।४। इति युप्रत्यय । ११ का० स० ४।६।५।४। इति योरनादेश । १२ का० स० ३।६।४।४। इतीनो लोप । १३ का० स० २।४।४।८। १४ कातन्त्रे नैतस्त्रमुपलब्धम् । जैनेन्द्रियाकरणो-''शृद्धखलि-कोदरिके'' त्वादि सूत्रम् ४।१।१७। तेन कप्रत्ययान्तः पक्षे दीर्घान्तश्चाभिकोऽभीक इति निपातितं । १५ मानयतीर्थं , विग्रहस्तु मातत्वेव । मा माने । तच प्रत्ययान्तः । १६. का० उ० २।४।२ ।

देहापघनकायाङ्गं वपुः संहननं तनुः ॥ ३८ ॥
कलेवरं शरीरं च मूर्तिः

दश देहे । देहश्च अपघनश्च कायश्च अङ्गं च । समाहरसमासत्वादेकवचनम् । दिह । देखीति देहः । “दिहितिहितिलिपिश्वसिन्यथतीपृथ्यातां च” । एष शो भवति । अपहन्यते अपघनः । ‘मूर्तीः वनिश्च’ अल् । चित्रं चयते । चि । चीयतेऽसौ कायः । ‘शरीरनिवासयोः कश्चादेः’ ५ चिनोते शरीरे निवासे चायै धन् भवति आदेश्च को भवति । उख, खल, वल, मख, रख, लखि, इखि वला, रगि, लगि, अगि, वगि, मगि, स्वगि, इगि, रिगि, लिगि गत्यर्था । अङ्गति मरण गद्भृतीति अङ्गम् । उप्यते पुरुषार्था अनेनेति वपुः । ‘ऋूपविष्वक्षिजनितनिधनिभ्य उस्’ १० एव्य उस् प्रत्ययो भवति । सहन्यते सप्तवन्ते धातवोऽन् संहननम् । धातुभिः रसासृग्रामास-मेदोऽस्थिमज्जुक्तस्तन्यन्ते तनुः । तनू । उणादो तनुवित्तरे । तनोतीति तनू । ‘कृषि’ चमितनिधनि-१० चधिसर्जिलविज्ञय त्तु ॥” एव्य ऊप्रत्ययो भवति । कलते स्थिरत्वं गच्छति कलेवरम् । कडति माद्यति वा कलेवरम् । कडेवर च । अपरसिंहभव्ये ‘कलयते कलेवरम्’ । शीर्यते क्षय गच्छति रोगज्वरादिभि शरीरम् । ‘कृ॒शशोण्ड॒भ्य ईर् ।’ एव्य ईरप्रत्ययो भवति । उणादित्वात् । मूर्ढा मोहसमुच्छ्राययो । मूर्ढू । मूर्ढेन मूर्तिः । मित्र्या कि । ‘घोपवन्योश्च कृतिः’ ११ इति नेट् । “राल्लोप (पंगो) ॥११ इति छुकार-लोप । “नामिनार्वोदकुर्चुरोर्यज्ञने” १२ दीर्घ । व्यज्ञनम्” १३ । प्रथं सि । ‘रेक०१०’ । विग्रह । १५ वर्षम् । पुरम् । चेत्रम् । गोत्रम् । धन । पुद्गल । प्रतीक । अवयव ।

अस्मिन् भवः

अस्मिन् काये भवः कायभव । देहभव । अपघनभव । अङ्गभव । वपुभव । सहनन-भव । तनुभव । कलेवरभव । शरीरभव । मूर्तिभव । कायज । देहज । अपघनज । अङ्गज । वपुर्ज । सहननज । तनुज । कलेवरजः । शरीरजः । मूर्तिजः । एतानि पुत्रनामानि भवन्ति । भव २० प्रयोगे ।

सुतः ।

पुत्रः सनुरपत्यं च तुक् तोकं चान्मजः प्रजा ॥३९॥

अष्टौ पुत्रे । सूयते सूत । पुनातीति पुत्रः । “१०पूत्रो हस्त्वश्च” १० अस्मात् त्रकृपत्ययो भवति धातोर्हस्त्वश्च । कोजुणार्थ । तथा च सोमनील्याम्” ११ “य उत्पन्नः पुनाति वशं स पुत्रः । अथ २५ पुन्नाम्नो नरकात्त्रायते वा पुत्रः । सूयते सूतुः । “१०सूविष्म्या यावत्” १२ आन्या तु प्रत्ययो भवति, स च यण्वत् । “११०प्राणिगर्भमिमोचने” १३ पल शल पत्नू पये च गतौ ।” पल नन् पर्व । न पतति येन जातेन पूर्वजा नरकादौ तदपत्यम् । “नन्जि १४ पतेर्य” यप्रत्ययः । नस्य १५ तत्पुरु ० सि । नपुरु

१. का० सू० ४२२५८ २. का० सू० ४४४५८ इत्यल् घन्यादेशश्च । ३. का० सू० ४५५३५ । ४ का० उ० २४६६ ५. का० १३१६ कले शुके मधुराव्यक्तव्यनो वा वर श्रेष्ठम् । ‘हलदन्तादि’ ति सप्तम्या अलुक् । इत्यन्यत्र । ७ जीर० भा० २१६७० ८ का० उ० ३१४८ ९ का० सू० ४५५७२ इति किप्रत्यय । १० का० सू० ४१६८० ११. का० सू० ४१५५८ १२. का० सू० ३१८११४ १३. ‘व्यज्ञनमस्वर पर वर्णं नयेत्’ इति पूरण कातन्त्रसत्रम् । १४१२१। इति व्यज्ञनस्य पर-वर्णयोगः । १४. “रेकतोर्विसर्जनीय” इति पूर्णम् । का० सू० २१३६३। इति सकारस्य विसर्गः । १५. का० उ० ४१४१ १६ नी० वा० समु० ५ सू० ११ । १७. का० उ० २१८० १८ का० उ० ६३० १९. “नस्य तत्पुरुषे लोप्य” इति पूर्णम् । का० सू० २५४२१। इति नलोप ।

अका० । मोऽनु० । तोजति 'तुक् । स्त्रयते तोकम् । आत्मनो जात आत्मज । प्रकर्षेण जाता प्रजा । “ “सप्तमीपञ्चम्यन्ते जनेऽर्ड॑ ।” बाल, पाक, अर्मक, गर्भपोतश्च । पुशुक, शिष्ठु, शाव, डिम्ब, वटु, माणवक, भ्रूण ।

उद्धवस्तनयः पोतो दारको नन्दनोऽर्भकः ।

स्तनन्धयोत्तानशयौ—

५ श्रष्टो बालक । उद्धवतीति उद्धव । खश् । तनोति विस्तारयति वशम्, तनयः । “तनेऽ॑ क्यं ।” पवते वातेन पोत । दारयति दणाति वा तस्याना मनानि “दारक । ‘टुनदि समृद्धौ ।’ नद् । अत एव नन्द । नन्दति कश्चित्सम्भ्यः प्रयुड्के॑ । “॑धातोश्च होतो (हेतौ)” इत् । नन्दयतीति नन्दन् । “नन्दि ।” वासिमविद्यूषिषाविशोभिवर्धिण्य इनन्तेऽयोऽसज्जायाम् । युप्रत्ययः । स्वमते “नन्दादे॑ र्यु” यु प्रत्ययः । “॑युवकानाम०”— इति युस्थाने अनः । “॑०कारितस्यानामि० कारितलोप । १० अहं मह पूजायाम् । अहत्यर्भकः । “॑३मूकादय ।” मूकयुकाऽर्भकपृथुकवृकसकरूका एते कप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । स्तनौ धयतीति स्तनन्धयः । “॑०गुर्जीस्तनसुन्नज्जूलास्यपुष्टेषु घेटः ।” खश् । उत्तान, शेते उत्तानशयः । “॑१उत्तानादिषु कर्तुयु” अच् ।

स्त्री चेद् दुहितरं विदुः ॥४०॥

पुत्र्या दुहिनरं॑६ दोग्धि मातृकुल दुनोति वा विदु, कथयन्ति । तनया, पुत्री ।

१५

वयस्याऽली सहचरी संत्रीची सवयाः सखी ।

पट् सख्याम् । वयसा तुल्या वयस्या । वयसी च । आ समन्ताच्चित्त लाति आलिः । ज्ञियामी । आली । सह सार्धं चरतीति सहचरी । सहात्रतीति सध्यृद् । “॑०सहसन्तिरसा सत्रिमर्मित-रय ।” ईप्रत्यये संत्रीची । सह वयसा वर्तते सवयाः॑० । समान ख्यातीति सखि (खा) । ज्ञियामी सखी । “॑०सख्यादय” सखि अथि प्रहि इत्यादयो दिग्रत्ययान्ता निपात्यन्ते ।

२०

आलीविवर्जितं मित्रं मम्बन्धो मित्रयुक् मुहूर्त ॥४१॥

तत्वारो मित्रे॑ । आली रहितानि वयस्यादीनि नामानि मित्रवाच्यानि सुरित्यर्थः । ‘त्रिमिदा स्नेहने’ । मेवति स्म मेदते स्म वा स्नेहयुक्तो भवति स्म वा मित्रम् । “॑०च्चिमिदिम्या त्रक्” आस्या॑०

१ “अकारादसम्मुद्धो मुश्च इति पूर्णम् । का० सू० २।२।७। इति सेलोंपी सुरागमश्च । २ ‘मोऽनुस्वार व्यञ्जने’ इति पूर्णम् । का० सू० १।५।१५। ३ ‘तुज हिसाबलादाननिकेतनेषु’ । चुरादौ वा णिच् । तोजति पितृवनमादरो तुक् इति टीकाशय । ४. तौति पूर्यति पितृकार्यं पितृरभावेऽपीति तोकम् । तु सौत्रो धातुर्हिमाग्रतिरूप्तिर्पु । चाहुलकात्क इति व्युत्पत्यन्तरमप्यूहम् । ५ का० सू० ६।५।५। इति जनेऽर्ड॑ । ६ का० उ० २।२।५। इति तन धातो, कयप्रत्यय । ७ पवते वातेनेति विग्रहस्तु नौकावाचकपीते बोव्य । पुत्रार्थे तु पुनाति पवते वा वशं पोत । मूर्गवाह्यमि॑० इति का० उ० ४।२।७। सूत्रेण तपत्ययः । ८ युवतिमनोदारणं बालदागं न घटते । अतीत दणाति वा मातुर्यैवनम्, पित्रीनिस्सन्तानता जन्यातिवेति तदशयोऽनुव्रत्ये । ९ का० सू० ३।२।१०। १० का० सू० ४।२।४। “नन्दादे॑ र्यु.” इति सूत्रं दुर्गवृत्तिः । ११ का० सू० ४।६।५।४। १२ का० सू० ३।६।१।४। इतीनो लोपः । इन कारितसज्जा कातन्ते । १३ का० उ० २।५।८। १४ का० सू० ४।३।३।१। १५. का० सू० ४।३।१। अत्र दुर्गवृत्ति । १६ दोग्धि पितृकुलं दहति दुनोति वा मातृकुल दुहिता । स्वसादित्वात्तृन्प्रत्यय इत्याशयः । १७ का० सू० ४।६।७।१। इति सहस्य संत्रीदेश । १८ समान वयो यस्या इति विग्रहो न्याय । ज्योतिर्जनपदेति समानस्य सादेश । १९ का० उ० ४।९। २० का० उ० ४।४।०। २१. मेवति मेदते इति वर्तमानकालिको विग्रहो युक्त, न तु भूतकालिक ।

प्रकृ प्रत्ययो भवति । ककारो यण्वद्भावाऽर्थस्तेनागुणत्वम् । सम्यक् स्नेहेन बधार्ताति सम्बन्धः । मित्र युनक्तोति मित्रयुक् । सुषु हरति चित्त सुहृद्^१ । शोभन हृदय यस्य वा । सत्ता, मित्रः ।

सहकृत्वा सहकारी सहायः सामवायिकः ।

चत्वारः सहाये । सहकृतवान् सहकृत्वा । ‘कृष्णैः’ क्वनिप् प्रत्यय । प्र० सि० । ‘त्रुटि३ चा०’ दीर्घः । सह समन्तात्करोतीति सहकारी । ‘नाम्यजातौ४ णिनिस्ताच्छील्ये’ । सह सार्थम् अयते ५ गच्छति सहाय । समवाये नियुक्तः सामवायिकः । इकण् ।

सनाभिः सगोत्रो वन्धुश्च सोदर्यः

चत्वारो भ्रातरि । समाना नार्भिर्यस्य सनाभिः । समान गोत्र यस्य सगोत्रः । बधाति स्नेहेन बन्धुः । ‘पट्यसि’ वसिहनिमनित्रपीन्दिकनिदब्निवृत्यणिम्यश्च’ एन्य एकादश्य उ प्रत्ययो भवति । सोदर्यः । समानोदर्य, सगर्भ., सोदर, समानोदर, आत्मीय, स्वजनः, आपः, शातिः, १० सनाभेयः, सपिण्ड ।

अवरजोऽनुजः ॥ ४२ ॥

कनीयान्-

द्वौ (त्रयो) लभुश्रातरि । अवर पश्चाजातः अवरजः । (अनु) पश्चाजात अनुजः । ‘सतमी५ पञ्चम्योर्ज (म्यन्ते ज) नैर्दृ’ । अयमनयोरतिशयेन युवा कनीयान् । ‘युवाऽल्पयो६ कन्वा । कनिष्ठः । १५

अग्रजो ज्येष्ठः

अग्रे जात अग्रजः । प्रकृष्टो वृद्धो ज्येष्ठ । ‘जृदस्यै७ ज्यै८’ वृद्धशब्दस्य ज्य आदेशो भवति । पूर्वजः, वरिष्ठ, वर्षीयान्, अग्रिय ।

भ्रातृजानी स्वसाऽनुजा ।

त्रयो भगिन्याम् भ्रातुर्जाता भ्रातृजानी९ । स्वस (स्य) ति क्वाप्ति क्विपति चित्त स्वस्तु१० । २० श्रद्धन्तः । अनु पश्चाजाता अनुजा । भगिनी भग्नी च । जामि । यामिश्र ।

भर्तुः स्वसा ननान्दा स्यात्-

स्यान् भवेत् । भर्तुः स्वसा भगिनी । ननान्दा । ‘टुनदि समृद्धौ११’ । नद् । ‘अत१२ एव०’ नज् पूर्वै१३ । न नन्दति भ्रातृजाया यस्या सत्या सा ननान्दा । ‘नजि१४ च नन्देश्वर्ण॑५ दीर्घश्च’ नजि उपपदे

१ सुषु॑ इतीतिव्युत्पतिस्तु तान्त्रसुहृद्दशब्दे सम्भवति । मित्रवाचकदान्तसुहृद्दशब्दे तु शोभन हृदय यस्येत्येव । हृदयस्य हृददेश समासे । २ का० स० ४।३।१०। ३. “त्रुटि चासम्भुद्धौ॑”।४. का० स० १।२।१७। का० स० ४।३।७६। ५. का० ठ० १।६। ६. का० स० ४।३।०। ७. वर्तमानकातन्त्रे नोपलब्धम् । ८ वर्तमान-कातन्त्रे नोपलब्धम् । ९. नाम्यस्मिन्कोषे भ्रातृजानीशब्द उपलब्ध, नायेत्साधक क्रिपति ध्याकरण-सूत्रम् । भ्रातुर्जातेति विग्रहोऽपि भगिन्यर्थ॑१० सगत । तथापि भ्रात्रा सह मातुर्जातेति विग्रह्य बाहुलकादौ-णादिकमण्णप्रत्यय जनधातो प्रकल्प्य अरान्तत्वान्वैपि भ्रातृजानीति शब्दो ग्रन्थकारप्रत्ययात् कथचित् समाख्ये । १० स्वस्यति क्विपति चित्त भ्रातु भ्वसेति विग्रहो बोध्य । “अमु॑ क्षेपणे” दिवादौ । सुपूर्वकात्तत “सुज्जसेश्वर्ण॑८” इति शृण्प्रत्यय । कातन्त्रोणादौ तु ‘स्वसादयः’ इति ‘स्वस् प्राणने’ इत्यत शृण्प्रत्यये शकारस्य सकारे च “श्वसितीति स्वसा” इत्याह । अत्र क्विपतीति दर्शनात् ‘अमु॑ क्षेपणे इत्येव भाष्य कर्तुरभिप्रेत इति शायते । ११. “अत एव वर्जनादिदमनुवन्धाना नोऽस्तीति” दुर्गृह्यति । का० स० ३।६।१०। १२ का० उ० स० २।३।१।

सति नन्देष्वातोश्चृंगून् प्रत्ययो भवति अकारो दीप्तश्च भवति । ननान्दा इति जातम् ।

मातुलानी प्रियाम्बिका ॥ ४३ ॥

द्वौ मातुलभार्यायाम् । मातुलस्येय भार्या मातुलानी । “इन्द्र-वर्षणभवशर्वदहिमयमारण्य-यवयवनमातुलानीयामातुक् द्वैपूच्” । अम्बैव अम्बिका । ‘अम्बादिन्यो ड्लेका’ ड, ल, इक, प्रत्यया ५ भवन्ति । प्रिया चासौ अम्बिका प्रियाम्बिका ।

वैर्यारातिरमित्रोऽरिद्विद् सपत्नो द्विषद्रिपुः ।

आतृव्यो दुर्जनः शत्रुदुष्टो द्वेषी खलोऽहितः ॥ ४४ ॥

पञ्चदश शत्रौ । विशिष्टाम् इ लक्ष्मीम् इरयति निर्गमयति वीर, वीरस्य कर्म वैरम् । [वैरमन्यास्तीति वैरी ।] वैरिपुरमित्यर्ति गच्छति आरातिः^३ आरातिश्च । न मित्रम् अमित्रम् । १० अथर्वान्तदिवत् । “विषेषे नन्” इति सारस्वत “सूत्रम् । शत्रुविषयर्ति आरिः । द्वेषीति द्विद् । “सत्” सूदिप्रद् हृषुप्रज्विवदभिद्विजिनीराजामुपसर्वेऽपि” क्विप् । एकार्याऽमिनिवेशेन समान पतति सपत्न । द्विष्टे द्विषन् । निष्टुर रथति रिपु । “रज्जुतर्कुवल्गुफल्नुशिशुरिपृथुनघव ।” एते उत्प्रथयान्ता निपात्यन्ते । निपातनमशाम प्रापणार्थं प्राप्तस्य बाधनार्थम् । लक्षणं यद्यदसिद्धं तत्सर्वं निपातनात्सद्धम् । तथा क्वीरस्वामिन—“रेपयनि रिपुः । रेषु गतो । भ्रातर व्ययति मारयति १५ आतृव्य । दुष्टजन दुर्जनः । परमभद्राकशीयश कीर्तिसम्भावितप्रभ्य—

“प्रशस्या न नमस्याऽपि दुजैर्यो विधीयते ।

कण्टकः पादलग्नोऽपि न शुभाय प्रजायते ॥”

तथा च सूक्ष्मिकावल्याम् ॥

“वर श्लिष्मः पाणिः कुपितफणिनो वक्ष्मकुहरे

वरं भस्मापातो ज्वलनलकुण्डे विरचितः ।

वर प्राप्तप्राप्तः सपदि जठरान्तर्विनिहितो

न जन्य दोर्जन्यं तदपि विपदा सद्दम विदुषा ॥”

अत्र ये केचिद् दुर्जना, मन्ति, तेषा मस्तकेऽशनिपातो भवतु । तथा च^४—

“दुर्जन सुहियउ होर जगि सुयणु पयासिउ जेण ।

अमित विसे वासरु तिसिण जिमि मरगउ कच्चेण ॥”

शृणाति शीर्यते वा “शत्रु । दूष्यते निन्दयते लोके दुष्ट । द्वेषि^५ द्वेषोऽस्त्यस्य वा द्विषन् ।

१ पा० सू० ८।१।४। अत्र सत्रे यमेत्यधिक पाठ । २. “हायनान्तयुवादिभ्योऽण्”युवादित्वादण् । ततो मत्वये “अत इनठनौ” इतीन् । ३. “अृ गतो” । आटूर्वकाद् अृधातोर्बहुलकादातिप्रत्यय । अन्यत्र तु न राति सुख ददातीति नन् पूर्वकात् ‘रा’ (दाने) धातो किंच् कोच सज्जायामिति किंच् । ४. “तदन्यतद्विद्वद्दतदभावेषु नन् वर्तेत” इति वक्तव्यम् । “अन् स्वरे” सार० समा० १४ सू० । ५ का० सू० ४।३।७।४। ६ का० उ० सू० १६। ७ क्वीर० भा० २।१।१०। ८ “व्येत् सवरणे” धातूनामनेकार्थ-त्वाद्विसाऽये वृत्ति । आतोऽतुपर्गे क । ९. निर्णयसागरयन्त्रालयप्रकाशितकाव्यमालासप्तम गुच्छेसूक्ति-मुक्तावलौ ६। श्लो० । १० सावयध० दो० २। ११ “जत्वादय । जत्रशमसु शिग्रुशत्रव । एते इप्रयायान्ता निपात्यन्ते” । इति का० उ० दुर्ग० वृ० ३।६।१२ द्वेषोऽस्त्यस्येति केवलमर्थाऽभिप्रायेण । विग्रहस्तु द्वेषीत्यैव । शत्रूप० ।

खलति सज्जनगुणानान्नादयतीति खला । न मैत्रीं हिनोति गच्छति, न हितो वा, 'अहित । अभियाति; प्रतिपक्ष, अवहन, जिघासु, परिपन्थी, पर, असुद्धत, अपथी, पर्यवस्थाता, शात्रव, प्रत्यनीक, द्वेषण, दुर्दृद, दस्यु, अभिमन्थी ।

दीधितिर्भानुरुत्सोऽशुर्गमस्ति: किरणः करः ।

पादो रुचिर्मरीचिर्भास्तेजोऽर्चिगौर्युतिः प्रभा ॥४५॥

५

बोडश किरणे । दिघीते दीयने दीधिति । 'दीधीडो डिति' दीधीडो धातोर्दिति: प्रत्ययो भवति । 'भा दीनौ' भाति भानुः । २ "दामारिवृद्ध्यो तु" । एन्यो तु, प्रत्यय स्यात् । वसति रवौ ४ उस्त्र । पुसि । अशुते जगद् व्याप्रोति अंशुः । ब्री । उणादौ । अनन्च । अनितीति अशुः । अनेः" शु" अनेधोतो शुप्रत्ययो भवति । ["भा दीनौ" भाति भानुः; "दामारी"] गा मुव वमस्ति १० गमस्ति ।

"वर्णागमो गवेन्द्रदौ सिहे वर्णविपर्ययः ।

पोडशादौ विकारस्तु वर्णनाशः पृष्ठोदरे ॥"

१०

कीर्यते किरणः । हत्तायुषे—'किरति विक्षिपति तमांसि किरण' । ११ कृमून्या कन । कीर्यते करः । पद्यते पादः । १२ पदशब्दविशस्युशोचा घन् । रोचते रुचिः । ग्रियते तमोनेन मरीचि । स्त्रीनौ । उणादौ । म्रियते मरीचि । १३ "मृकणिम्यामीचि" आम्यामीचि प्रत्ययो भवति । भास्ते २५ विषि सान्तो भास्त् । स्त्रीनौ । पु स्तेवति शब्दभेद । भा । भासौ । भास । तेजयतीति तेजस् । अर्वयतीति अर्चिप् । अर्वयते पूजयते अर्चिः । अर्चि १४ "गुचिहचिह्नुपिछिद्विद्विद्विभ्य इसिः" । गच्छति तमोऽत्रोदिते गौ । स्त्रीनौ । योतन द्युति । योतने (वा) द्युति । प्रभाति प्रभा । रोचि, अभीषु, प्रद्योत, रश्मि, वृष्णि, रुचि, विभा, धाम वसु केतु, प्रग्रह, उपघृति, धृष्णि, पृश्नि, मयूख, विरोक, शेकन्च ।

२५

२०

दीमिज्योतिर्महो धाम गश्मरुजो विभावसुः ।

सप्त नेजसि । दीयने दीमि । योतनं ज्योतिः । 'ज्योतिरादय' १३ । ज्योतिर्विहिरादय । महति मह १४ । सान्तम । धीयने सूर्येण नान्तम् धामन् । रशि सोत्र । रशति अशुते रश्मि । 'ऊर्ज बलप्रणयो' । १५ ऊर्जयतीति ऊर्ज । क । [१६ विभा वसुरुस्य स विभावसुः ।] (विभा । वसु ।)

२५

शीतोष्णप्रायपूर्वाञ्चौ तदन्ताविन्दुभास्करौ ॥४६॥

तयोरस्तो १७ तदन्तौ । इन्दुभास्करौ । इन्दुश्च माम्करश्च इन्दुभास्करो । कथभूतौ १८ शीतोष्ण-

१ न मैत्रीं हिनोतिसेमेति भूते विश्रहो वोन्य । गत्यर्थाकर्त्तरि क । न हितमस्मादिति रामाश्रम । २ का० उ० म० ६२६ । ३ का० उ० म० २१० ४ "वस् निवासे" वस् धातो 'स्फायि तज्जी' त्यादि ८० भूतेन रक्तप्रत्यय सम्प्रसारण च । ५ का० उ० म० ५१८ । अशयति विभाजयति "अश विभाजने" उप्रत्यय व्युत्पत्यन्तर च । ६ पुनरुक्तत्वात्परिहार्य । ७ वमस्ति दीपयति । "भस मर्त्सनदी-प्त्यो" । तिप्रत्यय । पृष्ठोदरादिन्वात्प्रोडशादौ वर्णविकारवदोकारस्याकार । ८ शा० म० २१२१७२ । "पृष्ठोदरादय" इत्यत्र कारिकारूपेण पठित । ९ का० उ० म० ६१७४ । १० का० म० ४१५१ । ११ का० उ० स० ३१८३ । १२ का० उ० स० २१४८ । १३ का० उ० स० २१४५ । १४ महनं मह । महते पूजयते वेति रामाश्रम । १५ वसुतन्तु "विभा" इति 'वसु' इति च तेजसः सज्जा । समुदितो "विभावसु" शब्दस्तु सूर्याग्निवाची । तदुक्त 'सूर्यवही विभावसु' इति अम० को० ३।३।२२६ । १६ ते दीधित्यादयः शब्दा अन्ने यथोस्तौ तदन्तौ इत्येव समाप्तो बोन्यः । तयोरन्ताविति समाप्तु लेखकप्रमादात्प्रयुक्त ।

(प्राय) पूर्वाञ्चौ । शीतीणौ (प्रायेण) पूर्वाञ्चौ यथोरिन्द्रमास्करयो (तौ) शीतोष्ण (प्राय) पूर्वाञ्चौ । शीतदीधिति । शीतदीधितिमान् । शीतभानु । शीतभानुमान् । शीतांशु । शीतांशुमान् । शीतगमस्ति । शीतगमस्तिमान् । शीतकिरण । शीतकिरणवान् । शीतपादः । शीतपादवान् । शीत-रुचि । शीतरुचिमान् । शीतमरीचिचि । शीतमरीचिमान् । शीतार्चि । शीतार्चिमान् । शीतभा । ५ शीतभावान् । शीतगु । शीतगोवा^१ (मा) न् । शीतद्युति । शीतद्युतिमान् । शीतप्रभ । शीतप्रभमान् । शीतदीप्ति । शीतदीप्तिमान् । शीतज्योति । शीतज्योतिमान् । शीतमहा । शीतमहस्तान् । शीतधामा । शीतधामवान् । शीतरश्मि । शीतरदिमवान् । शीतोर्ज । शीतोर्जवान् । शीतविमावसु । शीतविभावमुमान् । किरणशब्दानां (व्देष्य) पूर्वे शोतशब्दप्रयोगे चन्द्रनामानि भवन्ति । उष्णशब्दप्रयोगे मूर्यनामानि भवन्ति । उष्णदीधितिमान् । उष्णभानु । १० उष्णभानुमान् । उष्णोक्त । उष्णोक्तवान् । उष्णाशु । उष्णाशुमान् । उष्णगमस्ति । उष्णगमस्तिमान् । उष्णकिरण । उष्णकिरणवान् । उष्णपाद । उष्णपादवान् । उष्णरुचि । उष्ण-रुचिमान् । उष्णमरीचिचि । उष्णमरीचिमान् । उष्णभा । उष्णभास्वान् । उष्णनेजा । उष्णनेजस्वान् । उष्णार्चि । उष्णार्चिमान् । उष्णगु । उष्णगोमान् । उष्णद्युति । उष्णद्युतिमान् । उष्णप्रभ । उष्ण-प्रभावान् । उष्णदीप्ति । उष्णदीप्तिमान् । उष्णज्योति । उष्णज्योतिमान् । उष्णमहाः । उष्णमह-स्तान् । उष्णवामा । उष्णवामवान् । उष्णरश्मि । उष्णोर्ज । उष्णोर्जवान् । उष्ण-विभाषमु । उष्णविभावमुमान् ।

शशी विभुः सुधासूतिः कौमुदीकुमुदप्रियः ।

कलाभृचन्द्रमाश्वन्द्रः कान्तिमानोपयीश्वरः ॥ ४७ ॥

दश चन्द्रे । शशो उत्थास्तीति शशी । विदधात्यमृत विधुः । “वौ धात्रश्च^२” । सुधा अमृत
२० सूते सूधासूतिः । कुमुदानामिय विकाश (स) हेतुत्वात्कौमुदी (ज्योत्स्ना तस्याः प्रिय. कौमुदीप्रिय.) । कुमुदाना प्रिय अमीट, कुमुदप्रियः । कला विर्त्तीति कलाभृत् । “मा माने” चन्द्र मातीति चन्द्रमाः^३ । ‘चन्द्रे’ माने उपरेऽप्यदावदकारलोपः । अग्नेवदभावादकारलोपः । भिन्नयोग स्मर्यार्थ गव । चन्द्रतीति चन्द्र । ‘स्त्रायि’ तत्त्वशिशक्तिपिक्षुदिस्तिमदिमन्दिचन्द्रन्दी-निद्यो रक्^४ । कान्तिगस्यास्त कान्तिमान् । श्रोत्रधीनामीश्वरः । श्रोत्रधीश्वरः । दन्दुः, सोमः, राजा,
२५ रोहिणीवल्लन्, अवज, ऋत्वेशः अत्रिनेत्रप्रसूतः । तथा चोक्त यशस्तिलके—^५

“आहु नेत्रोत्थमत्रे: मृतमृतनिवे य हरेन्मवन्धु
मित्र पुष्पायुधस्य त्रिपुरविजयिनो मौलिभूषाविधानम् ।
वृत्तिक्षेत्रं सुगर्णा यदुकुलतिलक बान्धव केरवाणां,
सम्प्रीत वस्तनोतु द्विजरजनियतिश्चन्द्रमाः सर्वकालम् ॥”

१ “मादुपथायाश्च” इत्यादि वत्वविधायक सूत्रम् । मवर्णाऽवर्णान्तान्मवर्णावर्णोपधाच्च मतोर्मकारस्य बकार शास्ति । अत्र तथात्वाभावान् “शीतगोमान्” इति वक्तव्यम् । वस्तुतस्तु शीत-गोशब्दत्वं कर्मवारये ततो “गोरतद्वित्तलुकि” इति इच्छो दुर्वारित्वात् “शीतगवान्” इति सुवचम् । सिद्धान्ततस्तु नेत्रशस्थले मतुविष्ट । तदुक्त “न कर्मधारयान्मत्वर्थीयो बहुवीहिश्चेत्तदर्थप्रतिपत्तिकर” । २. का० उ० स० ५१२। कुन्त्यय । ३. चन्द्र कपूर माति तुलयति सादृश्यनेति ग्रन्थोत्तविग्रहार्थ । चन्द्रमाहूलाद मिमीते तुलयति सादृश्यनेति विग्रहान्तरमप्यूद्यम् । ४ का० उ० स० ४५७। ५. का० उ० स० २१४। आश्वा० ३।४७ श्लो० ।

प्रालेयाणु, श्वेतरोचि, शशाङ्क, द्विजराज, रजनिकर, पीयूषरुचि, निशीथिनीनाथ, जैवानुक, मृगाङ्क, दाक्षायणीरमणः, मा॑ अयुच्यते, सत्यभामेतिवत् । सुधामृति अमृतनिर्गमः, समुद्रनवनीतम् । देश्याम्॒ ।

उडूनि भानि तारक्षं नक्षत्रम्—

चत्वारो नक्षत्रे । अवति प्रभाम् उडु॑ । बीङ्कीवे । तथा चामरसिह॑—

“नक्षत्रमृक्षं भन्तारा तारकाऽप्युडु वा त्रिश्याम् ।”

भाति दीप्यते भम् । क्षीरस्वामिनि—“भा विद्यते अस्य भम् ।” तरन्त्यतया तारा॑ । तारयति वा । ऋक्षणोति हिनस्ति तम् ऋक्षत्रम्॑ । नक्षत्रि खे याति न तम् कि (क) षोति वा नक्षत्रम् । “अमिनक्षिकडिंयोऽनः” । तारक क्लीवेऽपि । यच्च शाश्वत—

“नक्षत्रे वाऽक्षिमध्ये च तारकं तारकाऽपि च ।

५

१०

लक्ष्य च—

द्वित्रेव्येमिनि पुराणमौक्तिकघनच्छायै. स्थितं तारकैः”

तत्पतिः

(नक्षत्र पर्यायेभ्य पर) पतिशब्दप्रयोगे चन्द्रनामानि भवन्ति । उडुपति । तारापति । ऋक्षपति । नक्षत्रपति । उडुराजः । उडुस्वामी । उडुनाथः । नक्षत्रेश्वर । तारेन्द्र ।

१५

निशा ।

क्षणदा रजनी नक्षं दोषा श्यामा क्षिपा

सम रात्रौ । निशाति तनूकरोति चेषामिति निशा, निशो वा । “आत्॑ अचोपसर्गे” । क्षणमवसर ददातीति क्षणदा । तमसा रजति रजनि । ब्रियामी । रजनी । रजनशब्दाद् वा नदा-दित्वादीः । नेनेकि नक्षम् । दुष्ट दूपयति याऽत्र दोषा । आदन्तोऽव्ययाऽनव्यय । श्यायन्ते गच्छन्ति २० गत्रित्रया अत्र श्यामा । तथाऽनेकार्थ॑ (खनि)मर्जर्यम्—

“श्यामा रात्रिस्तु विद्युत्यामा श्यामा स्त्री सुग्रथयौवना ।

श्यामा प्रियज्ञुराख्याता श्यामा स्याद् वृद्धदारिका ॥”

क्षिप प्रेरणे । क्षिप् । क्षेपण क्षिपा । “१२२या उन्नवन्धमिदादिम्यस्त्वद् ।” क्षिप्यन्ते स्वापेन जनै, निर्गम्यते वा । तमी । तमा आदन्तोऽव्ययानव्यय । तमिक्षा । तमस्विनी । विभावरी । नक्षमुखा । शर्वरी । २५ प्रियामा । निशीथिनी । यामिनी । वसति । वासनेयी । रात्रि ।

१. “लोकः पूर्वपद्मय च अच्चपत्ये तथैवेष्ट” इति कात्यायनवार्तिकम् ५।३।८३। पा० सूत्रस्थ पूर्वपद्मोपविधायकमत्र प्रमाण बोधम् । २. “देशी” शब्द, प्रान्तभाषावाचकः । क्षीरस्वामि-कृतोऽपराध्येऽपि बहुत्र उपलभ्यते । साधुत्वमस्य पचादेशकृतिगणत्वात् “देवी” इतिवद् बोधम् । वस्तुत-स्तवयं शब्दो दैशिक एव । ३ अवति प्रभा रक्षतीति ऊ॑ “अव रक्षणे” क्षिप् । “ज्वरत्वे” त्यूट् । डयते हृति हुः । डयते हुप्रत्यय । ऊश्रासौ डुश्चेति कर्मधारय । नक्षत्राणा रक्षणार्हत्वादाकाशोत्पतनशीलत्वाच्च उडुत्वमुपपन्नम् । “इको हृत्व.” इत्युकारस्य हृत्व इति टीकाशयः । ४ अम० को० १।३।२।१ ५ क्षीर० भा० १।३।२।२ ६ भिदादित्वादद् । अडि परे गुणः । निपातनाददीर्घः । ७. ऋक्षपति गच्छति “ऋषी गतौ” तुदादि॑ । श्रौणादिकः सप्रत्ययः किं । षत्वकत्वक्षत्वानि । ऋक्षमिति । ८. का० उ० सू० ३।५।९. “यच शाश्वत.” इत्यारभ्य “स्थित तारकै” इत्यन्तं पाठ १।२।२।२ । क्षीरस्वामिभाष्यस्थोऽन यहीतः । १०. का० सू० ४।५।८।४ ११, ९६ श्लो० श्लोका० । १२. का० सू० ४।५।८।२ ।

करः ॥४८॥

(निशापर्यायात्परं) करशब्दे प्रयुज्यमाने चन्द्रनामानि भवन्ति । निशाकर । लग्नदाकर । रजनीकर । नक्षत्रकर । दोषाकर । श्यामाकर । ल्पाकर ।

तरणिस्तपनो भानुर्बध्नः पूषार्यमो रविः ।

५ तिग्मः पतङ्गो द्युमणिर्मार्तिण्डोऽर्को ग्रहाधिपः ॥४९॥
इनः सूर्यस्तमोध्वान्ततिमिरारिविरोचनः ।

सप्तदश सर्वे । तरन्त्यनेनेति तरणिः । “ऋतुः सूर्यु धम्यश्वतिप्रहिम्योऽनि ।” तपति त्रिलोकीं तपनः । भाति दीप्यते करैः भानुः । “द्वामारिवृत्यो तुः” तुः प्रत्ययः । “बन्ध बन्धने” बन्धाति जनुटटीब्रैधनः । “बन्धेवैविश्व” । अस्मान्नक् प्रत्ययो भवति ब्रह्मदेशश्च । इकार उच्चारणार्थः । १० पुष पुष्टे । पुष्णाति वर्धते तेजसा पूषा । पूषादय ४ — “पूषवर्यमनुकृतिवन् लाहन् मातरिवन् क्लेदनस्नेहन् मूर्धनयूषपदोषन्” एते कन्यन्ता निपात्यन्ते । इयर्त्तिं अर्यमा । “ऋ गतो” । रूप्यते स्त्रयते रविः । “इ “सर्वधातुभ्य” । तीतिकृतीति तिग्मः । “युजिष्वचितिजा “धमक्” । पतति नक्षत्रपथे पतङ्गः । “तुः ७ पतिभ्यामङ्गु” । आन्यामङ्गुः प्रत्ययो भवति । दिवो मणिरिव द्युमणिः । मृतण्डस्यापत्य मार्तरणः । मृतण्डश्च । आकाशमिथ्यति अर्कः । उणादौ “अर्च पूजायाम्” अर्च्यते अर्क । “इण्डमिकापाशल्य १५ चिकुदाधाराम्य क.” एत्यु. क प्रत्ययो भवति । ग्रहाणामधिप स्वामी ग्रहाधिपः । एतीति इनः । “इण्डजिकृष्णिभ्यो नक्” । सुवति (प्रेरयति कर्मणि) लोकान् सूर्यः । “सूर्यरूच्याव्यव्यु वर्तरि” । सर्वे इति यप्रत्ययान्तो निपात । तमश्च ध्वान्त च तिमिरश्च तमोध्वान्ततिमिरा, तेपामरिः — तमोऽरि, ध्वान्तारिः तिमिरारिः । विरोचते इत्येवशीलो विरोचन । “रुचादेश व्यज्ञनाद” । रुचा-दर्गणाद व्यज्ञनादेर्य भवति । आदित्य, सविता, सहस्रकिरण, प्रयोतन, भास्कर, तिग्माशुः, दिनमणि, २० भास्वान्, विस्वान्, हरि, विकर्तनं, भग., गोपतिः दिनकर, सूरः शुरुश्च, अशुमाली, मिहिरः, तिमिर-रिपुः, अशुमान, अशुः, हरिदश्व., सप्ताश्वः, प्रभाकर, भानुमान्, हस., खग, मित्र, चित्रमानुः, अर्हर्ति, कर्मसाक्षी, जगच्छुः, द्वादशात्मा, त्रयीतनुः ।

दिनं दिवाङ्गदिवसो वासरः—

पञ्च दिवसे । “दोऽवलुण्डने” व्रति खण्डयति अन्धकारमिति दिनम् । “दोनात् २ इ (यत्तेगि) २५ च” यते नैप्रत्ययो भवत्याकारस्येच । रविर्दी [वर्णन् दी] प्यतेऽत्र, आदन्तमव्ययम् दिव्या । अदन्त क्लीवम् । दिव विद्यन् । न जहाति काल (रवि) महः । “नन्ति ३ जहाते” इति क्षिप् (कन्ति) । दीव्यतीति दिवस ४ । दिवसम् । “१ वेतसवाहसदिवसकनसाः” एतेऽस्त्रप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । वासयत्यत्र वासरः ५ । वासोऽपि । उभयम् । “देवि ६ वृष्टिजिठिप्रमिवासिन्योऽरु” ६ एत्योऽरु प्रत्ययो भवति । शु. । घस. ।

१. का० उ० सू० २।४३ । २. का० उ० सू० २।७ । ३. का० उ० सू० २।५२। दुर्गवृत्तिश्च ।
४ का० उ० सू० २।५ । ५ का० उ० सू० ३।१४ । ६ का० उ० सू० १।५७ । ७ का० उ० सू० १।२२।
८. का० उ० सू० २।५७ । ९. का० उ० सू० २।५१ । १०. का० सू० ४।२।३० । ११. का० सू० ४।४।३१ ।
१२. का० उ० सू० ६।३७ । १३. का० उ० सू० २।४ । १४ दीव्यति नीडन्ति प्राणिनोऽत्र दिवस इत्यपि ।
१५. का० उ० सू० ३।११ । १६ “वास उपसेवायाम्” वासयति सूर्यालोक प्राणिन वा वासरः । विग्रहे “अत्र” इति पदमधिकम् । १७ नैतस्त्रम् का० उणादौ लव्यम् । तत्र “कृवाभ्यः सरक्” ३।६।२। दति सूत्रम् । वातीति वासर, वाधातो, सरक् प्रत्यय इत्युक्तम् । तत्रैव चतुर्थपादे ३।३ तमपरमपि सूत्रम् “मद्यसिवशिवासिन्य सरः” इति वासिधातोः सरप्रत्यय उक्त । वासयतीति वासर । कौमुदीस्थमुण्डादिसूत्रम् “अर्तिकमिच्चमिभ्र-मिदिविवासिन्यश्चित्” ३।१२। इति वासिधातोरप्रत्यय ।

तत्कर्त्र स ॥ ५० ॥

दिनकरः, दिवाकरः, अद्विकरः, दिवसकर, वासरकरः, इत्यादि सूर्यनामानि भवन्ति ।

चक्रवाकाब्जपर्यायवन्धुः—

चक्रवाकश्च अञ्ज च चक्रवाकाव्जे, तयोर्थक्रवाकाब्जयोः (परत्र) अन्धु शब्दप्रयोगे सूर्य-
नामानि भवन्ति । चक्रवाकबन्धु । अब्जबन्धु । पद्मबन्धु । कमलबन्धु । इत्यादीनि शातव्यानि । ५

कुमुदविप्रियः ।

कुमुदानां (परत्र) विप्रियशब्दे प्रयुज्यमाने सूर्यनामानि भवन्ति । कुमुदविप्रियः । कैरवविप्रिय ।
कुमुदविवल्लभः । इत्यादि ।

यमुनायमकानीनजनकः सविता मतः ॥ ५१ ॥

यमुनाजनक । यमजनकः । ^१कानोनजनक । सविता । मतः कथित । १०

वाहोऽथस्तुरगो वाजी हयो धुर्यस्तुरङ्गमः ।

सप्तिर्वा हरी रथ्यः—

एकादशाश्वे । वाल्मीकि गम्यतेऽश्ववाहैर्वाह । तथा उनेकार्थे (खनि) मञ्जर्याम्—

“वाहो युग्मं धनो वाहो वाहके वाह इत्यपि ।

वाहो मानविशेषश्च वाहो वाहुरेति स्मृतः ॥” १५

“अश् व्यासौ ॥ अश् । अशनुते व्याानोति वेगेनाभीष्ट्यथानमित्यश्व । अथवा “अश् भोजने”
अश्वाति भद्र्यति मुदगादीनित्यश्वः । “^३अशिलदिखटिविशिष्य क” । वमात्रः । “धोपवत्योश्च
कृति” नेत् । “उरो (रसा) गच्छतीति उरगा । “डोऽसज्जायामपि” । पूर्वमश्वाना वाजा अभूत्वन्ति
श्रुतिः । वाजाः सन्त्यस्य वज्जतीत्येवशीलो वा वाजी । इदन्तोऽपि, वाजिः । तथा हैमनाममालायाम्—

“वाज वाजस्तु पक्षेऽपि मुनो नि.स्वनवेगयोः ॥”

हिनोति गच्छति वर्धते (वा) अनेन हयू । धुरि सद्ग्रामे साधुर्धुयः ॥ “० यदुगवादितः” । तुर
(रेण) गच्छति तु (तो) तोर्ति त्वरते वा तुरङ्गमः ॥ “१ गमश्च”^१ नाम्युपदे गमेश्च सशाया खो भवति
“धात्वादेः १२ ष स.” । सप्तव्यथावान गच्छतोति सति । “१३ सपेस्तिततितनः” सपेधर्तोस्ति तति तन् एते
प्रत्यया भवन्ति । अर्वति गच्छति अनेन नात्त, ^{१४}अर्वन् । इत्यनेन हरिः । रथे साधू रथ्यः^{१५} । गन्धर्वः,
तार्द्य, ययु, घोटक, अर्दनि. ^{१६}, वीति, पीति । २०

१ कानीन कर्ण । कन्याऽवस्थाया कुन्त्या कर्णादुपत्न इति पौराणिकी कथाऽनुसन्धेया ।
२. ११ श्लो०३लोका० । ३ का०उ०स०० २।१।४ का०स०० ४।१।८।०।५ भ्रान्तोऽय पाठः । उचितस्तु तुरेण
वेगेन गच्छतीति तुरग । ६ का०स०० ४।३।४।७।७ अनेन०स०० २।७।८।८ धुर वहतीति धुर्य॒ । “धुरो यड्हको”
इत्यन्यत्र । ९ का०स०० २।६।१।१ १० तुरपूर्वकादृगमे “गमश्च” इति खे तुरङ्गमः । तोतोर्ति त्वरते वेति विग्रहे
तत्सद्विप्रकारोऽन्यथा कल्पनीयः । ११. का० स०० ४।३।४।५ १२ का० स०० ३।१।२।४ १३ का० उ० स००
५।३।८।४, “अर्व गतौ” बाहुलकात्कनिन् । १५ “रथ वहतीति सुवच्च । “तद् वहति रथयुगप्रासङ्गम्”
इति यत् । १६ अर्दनिशब्दस्थावर्ये प्रमाण मृग्यम् । कोशान्तरेऽर्दनिशब्दार्थश्चेत्थम्—“अर्दनी चार्दनि-
रपि छियः स्यु ग्राधनाऽर्थना” कल्प० को० १।१।२।१ । अर्वतीशब्दोऽशिवनीपर्यायस्तु सर्वसम्मत । “वीति”
“पीति” शब्दयोरश्वार्थे प्रमाणमघस्तात् “वीति सप्तिर्दधिकावा वातस्कन्वार्य इत्यपि” कल्प० को० १।५।
१९।३ “पीति पाने सपूर्वा तु सक्षपाने हये पुगान्” विश्व० ।

सप्ताद्यश्वो मयूखवान् ॥ ५२ ॥

अद्यशब्दस्य (ब्रात्) पूर्व यदि सप्तादि (सप्तदः) तदा सूर्यनामानि भवन्ति ।
सतवाह । सपाश्व । सपतुरग । सपवाजी । सपद्य । सपधुर्य । सपतुरङ्गम । सपसति । सपार्वा ।
सपहरि । सपरथः ।

५

ख विहायो वियद् व्योम गगनाकाशमम्बरम् ।
द्यौनभोऽप्रोऽन्तरीक्षं च-

एकादश गगने । खनति शून्यत्वेन खन्यते वा 'खम् । विजहाति सर्व विहायः' । अवाय विहायसा
पक्षिणा मार्गे विह यच्छ्रुतिं वियत् । (अथवा वीना पक्षिणा मार्गे यच्छ्रुतिं वियत्) । अमरेन्द्रभाष्ये—
"वियच्छ्रुतिः विरमति वियत्" । वायुना वीयते (व्यत्रित व्यव्यते वा) व्योमन् । "स्त्रिविष्मितविज्वरि-
त्वरामुषधाया" एषामुषधाया वकारस्य चोऽभवति । "सर्वधातुभ्यो मन्" (इति विष्वर्वकादवेमन्) । गम्यते
१० सर्वमनेन शगनम् । क्लीवे वा । गच्छत्यनेन गगन वा । आकाशते सूर्यद्योऽत्राकाशम् । न काशते वा
छान्दसो दीर्घ । अम्बते शब्दायते अम्बरम् । दीर्घनित पक्षिणीऽत्र द्यौः । द्यियाम् । नह्यति ब्रह्माति
सर्वमात्मना सान्तम् नभः । नभम् इत्यन्तम् नभम् च । न भ्रातजेऽभ्रम् । अन्त ऋक्षाण्यत्र अन्तरीक्षम् ।
पृष्ठोदरादित्वम् । द्यावाभूम्योरन्तरीक्षते वा अन्तरिक्षम्, अन्तीक्षम् च । महूद्वर्तमन् । तारापथ । पुष्करम् ।
१५ विष्णुपदम् । त्रिदिवम् । नाकम् । अनन्तम् । सुरवर्तम् । महावृ (वि) लम् । देश्याम् ।

मेघवायुपथोऽप्यथ ॥ ५३ ॥

मेघशब्दाग्रे वायुशब्दाग्रे च पथशब्दे प्रयुज्यमाने आकाशनामानि भवन्ति । मेघपथः । मेघमार्ग ।
घनपथः । घनमार्गः । पर्जन्यपथ । पर्जन्यमार्गः । मिहरपथ । मिहरमार्ग । नग्राट्यपथ ।
२० तडिपतिपथ । तडिपतिमार्ग । सोदमिनीपतिपथः । सोदमिनीपतिमार्ग । वायुपथ । वायुमार्गः ।
वातपथ । वातमार्गः । अनिलपथः । अनिलमार्ग । मरुपथ । मरुमार्गः । समीरणपथ । समीरण-
मार्ग । गन्ववाहपथ । गन्ववाहमार्ग । श्वसनपथ । श्वसनमार्गः । सदागतिपथ । सदागतिमार्गः ।

तच्चरः खेच्चरः—

तत्र आकाशे चरतीति तच्चरः । आकाशाग्रे चरशब्दे प्रयुज्यमाने विद्याधरनामानि भवन्ति ।
खच्चरः । विहायश्चर । वियच्चरः । व्योमच्चरः । नभश्चर । गगनच्चरः । अम्बरच्चर । आकाशच्चर । अन्तरिक्ष-
२५ च्चरः । मेघपथच्चरः । मेघमार्गच्चर । वायुपथच्चर । वायुमार्गच्चर । घनपथच्चर । घनमार्गच्चर । घनाधन-
पथच्चर । घनाधनमार्गच्चर । जीमूतपथच्चर । जीमूतमार्गच्चर । अग्रपथच्चर । अग्रमार्गच्चर । ब्लाहक-
पथच्चर । ब्लाहकमार्गच्चर । पर्जन्यमार्गच्चर । इत्यादिनामानि विद्याधरस्य ज्ञेयानि ।

तदृगः;

तत्र गगने गच्छ्रुतीति तदृगः । गगनाऽग्रे 'ग' शब्दे प्रयुज्यमाने शकुन्तनामानि भवन्ति ।
३० खग । विहायोग । वियदगः । व्योमग । नभोग । गगनग । द्योग । आकाशग । अन्तरिक्षग ।

१ 'खनु अवदारणे' डग्रत्यथः । 'खर्वं गतौ' खर्वत्यस्मिन्निति वा किंग्रहः । अनापि ड । २ उक्त-
विग्रहे "ओहाक् त्यागे" हाधातो "वहिहाधाऽम्यश्छन्दसि" ४।२२।इत्यसुन् शिष्म च । शिष्माद्युक् ।
विशेषेण हाययति गमयति विमानादीन् इत्यपि बोध्यम् । "इय गतौ" अन्तादसुन् । ३. क्षीर० भा० १।२।२।
४ का० द० ४।१।६।७ । ५ का० उ० सू० ४।२।८। ६. "गर्मेर्गश्च" इति युच्च गश्चान्तादेश । ७ महाविल-
शब्दस्याकाशवाचकत्वेऽप्रकोषमधस्तात्प्रमाणम्—“तारापथोऽन्तरीक्ष च मेघाध्वा च महाविलम्”
१।२।२। क्षेपक ।

मेघपथग । मेघमार्गग । इत्यादिनि ज्ञातव्यानि ।

पक्षी पत्री पतञ्चयपि ।

शकुनितः शकुनिर्विश्च पतञ्जे विष्किरोऽन्यथा ॥५४॥

सम पतङ्गै । पक्षाः सन्यस्य पक्षी । पत्राणि सन्यस्य पक्षी । नान्त । पततीति पक्षिः । त्रिप्रत्यये
इदन्तः । पततीति सन्यस्य पतञ्चयी । नान्त । पततीति पते परतोऽत्रिप्रत्यये इदन्तो वा पतञ्चिः । हलायुध-
भाष्यकारेण डाल्लणिकेन—पत्रिशब्दं पत्रिन् नकारान्तं पत्रिरिकारान्तश्च व्याख्यात । अमरसिंह-
नाममालायाम्—

“पतत्रिपत्रिपतगपतत्पत्ररथाण्डजाः ।

नगौकोवाजिविकिरविविष्करपतत्रयः ॥”

इकारान्तं पत्रिशब्दं पठितोऽस्ति । भाष्यकर्त्री क्षीरस्वामिना पत्रिरिकारान्तो निविद्ध । १०
“पतेरत्रिरिति” भ्रान्त्या पतत्रि ग्रन्थकृदिदन्तं मन्यते । एव कथितमस्ति श्रीमद्मरकीर्तिना द्रयोर्बेचन
प्रमाणाम् । शब्दाना वैचित्र्य वर्तते । न भसा गन्तु शक्नोति शकुन्त । शकुनित । एव शकुनि । एव
शकुनी । शकुन्त । शकुन । द्वौ अदन्तौ । वयतीति वि । “वैत्रो डि” । पतेन वेगेन गच्छतीति पतञ्ज ।
विकिरिति पत्राणि विष्किर ।

“वर्णाण्यो गवेन्द्रादौ सिहे वर्णविपर्यय ।

षोडशादौ विकारस्तु वर्णनाशः पृष्ठोदरे ॥”

सुटागम । विकिरश्च ।

जाङ्गलं पिशितं मांगं पलं पेशी च—

पञ्च मासे । गल्यते अवते जाङ्गलं जङ्गलं च । पिशयते रुविरादिभि पूर्यते पिशितम् । मन्यते
सम्भाव्यते शरीरोपचयोऽनेनेति मासम् । ‘वृत् वदिहनिमिनिकस्याशिकपिण्य स” । एव स. प्रत्ययो
भवति । पलयते (पालयते) देह पलम् । रुषिगदिभि पिशयते (पिशिति) शरीरम् पेशी । आमिषम् ।
रुच्यम् । तरसम् ।

तत्प्रियः ।

तस्य मासस्य प्रिय । आमिषशब्दात्रे प्रियशब्दे प्रयुज्यमाने राज्ञसनामानि भवन्ति । जाङ्गल-
प्रिय । पिशितप्रिय । मासप्रिय । पलप्रिय । पेशीप्रिय ।

यातुधानस्तथा रक्षो—

द्वौ यातुधाने । यातूनि यातना धीयन्ते त्रिमन् यातुधान । रक्षतीति रक्ष । राज्ञस ।
कोण्यम् । कव्याद । नैक्रूत्त । नैकसेय । नैकप्रेयम् । विपुसेऽपि (कर्वर । अस्त्र ।) । कीनाशो नानार्थ ।

राज्यादिचर इप्यते ॥ ५५ ॥

१ अम० को० २।५।३४। २ क्षीर० भा० २।५।३४। ३ का० उ० स० ४।६। रामाश्रमस्तु
वातीति वि । “वातेडिच्च” इत्याह । ४ पतेन वेगेन गच्छतीति विग्रहे तत्साधु व कल्पनीयम् । तादृशसूत्राऽ-
तुपलभात् । पतत्युद्दयते इति पतङ्ग । “तृपतिभ्यामङ्ग” का० उ० स० ५।२। इत्यङ्गप्रययत्तु
युक्तः । “तृपतिभ्यामङ्ग” इत्यङ्गप्रयय । ५ “पृष्ठोदरादय” २।२।१७।२। शा० कारिका । ६ “पिश अवयवे”
पिशिति पिशयते स्म वा पिशितम् । “पिशे किच्च” उ०स० ३।६। इतीतन् । अथवा च । इति रामा-
श्रम । ७. का० उ० स० ४।५३ । ८ रक्षन्त्यमादिति रक्ष । “सर्वधातुभ्योऽस्तुन्” । “भीमादयोऽपादाने”
इत्यन्यत्र ।

रश्चिशब्दामे चरशब्दे प्रयुज्यमाने राज्ञसनामानि भवन्ति । रात्रिचर । निशाचर । क्षणदा-
चरः । रजनीचर । नक्ष्चर । दोपाचरः । इत्यादीनि ज्ञातव्यानि ।

प्रारम्भते स्वर्गवर्गः

सुतोऽदितेस्-

५ अदितिशब्दामे सुतशब्दे प्रयुज्यमाने दैत्य (देव) नामानि भवन्ति । अदितिसुतः । अदिति-
तनय । अदितिपोतः । अदितिशारकः । अदितिनन्दनः । अदित्यर्भकः । अदितिस्तनन्धयः ।
अदित्युत्तानशय ।

तदिदृघन्वा सेन्द्रो देवः सुरोऽमरः ।

१० पञ्च देवे । सह इन्द्रेण वर्तते इति सेन्द्रः । “दितु क्री०” । दिव् । दीव्यन्ति क्रीडन्ति स्वर्गे०
प्सरोमि सह विलसन्ति देवाः । अचा सिद्धम् । अथवा दीव्यति क्रीडति परमानन्दपदे
देवः । सुष्टु गजते सुर । तथा सुरन्ति सुरा । “सुर ऐश्वर्ये” सुरा एषामस्तीति वा । “अर्शसादियोऽच्” ।
यतोऽविभजा सुरा तै पीता । न प्रियते अमर । आदित्या । त्रिदशा । सुपनसः । स्वर्गांकिस । देवता ।
मीर्वाणाः । श्रद्धभवः । मरुत । वृन्दारका । निर्जरा । अस्वाना । विवुधाः । त्रिविष्टपसद । लेखा ।
सुवर्वाणाः । अमृताशनाः । अनिमिपा । दैवतम् ।

१५ **स्वर्याँः स्वर्गोऽथ नाकथ,**

चत्वार स्वर्गे । मुदितो जन स्वरति शब्द करोत्यत्र रान्तमव्ययम् । स्वर् । “दितु क्रीडादितु” ।
दीव्यन्ति क्रीडन्ति अत्र पुण्यवन्त इति द्यौः । “दिवेऽर्दिविः” प्रत्ययो भवति । असौ सुष्टु अर्जयते स्वर्ग ।
“स्वृ३ मृभ्या गः” गप्रत्ययः । नास्यक टुःखमत्र नाकः । उभयम् ।

तदृवासस्त्रिदशो मतः ॥ ५६ ॥

२० तत्य स्वर्गस्य वास , तदृ॑वास -स्वर्गवासः । वौवास , स्वर्गवासः, इत्यादीनि देवनामानि भवन्ति ।
तत्पतिः

तस्य देवस्य (स्वर्गस्य च) पति , तत्पति । देवपति , सेन्द्रपति , स्वर्गवासपति , स्वर्गपति ,
नाकपति , नाकेन्द्र , इत्यादिपर्यायनामानि इन्द्रस्य ज्ञेयानि ।

शक इन्द्रश्च शुनासीरः शतक्रतुः ।

२५ **प्राचीनबहिः सुत्रामा वज्री चाखण्डलो हरिः ॥ ५७ ॥**

शत्रुवृलस्य गोत्रस्य पाकस्य नमुचेरपि ।

वृत्रहा च महसाक्षो गीर्वाणेशः पुरन्दरः ॥ ५८ ॥

विडौजाश्चाप्सरोनाथो वासवो हरिवाहन ।

मरुतश्च मरुत्यौश्च वृषा चैरावणाधिपः ॥ ५९ ॥

शतमन्युस्तुराशाट् च पुरुहूतश्च कौशिकः ।

संक्रन्दनोऽथ मधवान् पुलोमार्मस्तुसखः ॥ ६० ॥

त्रयस्त्रिशदन्त्रे । पातु शकनोतीति शक । “स्फायितश्चिवश्चिकित्तिपिक्षुदिसदिचन्द्र्य-

१ “अर्श आदेर” जै० सू० ४।१।५०। २. का० उ० सू० ६।५३। ३. का० उ० सू० ५।६०।

४ तस्मिन् स्वर्गे वसतीति तदृवास । गप्रत्यय । स्वर्गपर्यायार्थात् परत्र वासशब्दे प्रयुज्यमाने त्रिदशनामानि
भवन्तीत्यर्थ । ५. का० उ० सू० २।१।४।

“दीनिदिन्यो रक्” । इन्दति परमैश्वर्ययुन्तो भवति इन्द्र । रक् । शुन आदित्य शीरो वायुस्तयोरपत्यमण्डो लुक्यमेदादवा, दीर्घे शुनाशीरः । तालध्यदयम् । शोभनं नासीर कट्कं वा यस्य स मुनासीरः । द्वौ दन्त्यौ । शु अव्यय तालव्यमपि । अत्र पक्षे प्रथमस्तालव्यो द्वितीयो दन्यो भवति । तथा च शोभना नासीरा अग्रेसरा अस्य, शुनासीर । शु पूजायाम्, श्वशुरवत् । शुनाशीरयोरपत्यमित्येके । शत क्तवो यज्ञा यस्य शतकतु । प्राचीना प्राचीनमुला वर्षिती दर्भा यस्य स । सुषु त्रायते नान्तं सुत्रामा । वत्र विद्यते यस्य स वज्री । आत्मण्डयति भिनत्यरीनाखण्डल्ल । हियते शचीकदाहैर्हरि ।

५

“शत्रुवर्लस्य गोत्रस्य पाकस्य नमुचेरपि”-

बलशत्रुगांत्रशत्रुं पाकशत्रुनेमुचिशत्रुं, इत्यादीनि इन्द्रानामानि भवन्ति । बृत्र दानव यज्ञ वा हतवान् वृत्रहा । किप् । (“किप्)ब्रह्मैणवृत्रेषु” किप् सहस्रमन्तीण यस्य स सहस्राक्ष । गोर्वाणाना देवाना मीश (गोर्वाणेशः) । विट्सु प्रजासु ओजो यस्य । पृष्ठादरादित्वाद् वृद्धि । विट मेदने वा । विट मेदकमोजो यस्य वा (विडौजा ३) । आप्सरसा नाशोऽप्सरोनाथ । वत्पत्य वासव । हरिंहानै यस्य हरिप्राहन ।
१० पुण्यज्ञये द्युष्यते च्यवते मरुत् । तान्तम् । मरुतो देवा. सन्त्यस्य मरुत्वान् । वर्षति, नान्तप, वृषा । ऐराव-णानामधिप (ऐरावणाधिप) । शत मन्यव, कत्वोऽस्य शतमन्यु । ‘पह मर्यणे’ । । पह् । ‘धात्वादे, ष स’ । सहने कथितमपर प्रयुद्धके “धातोऽस्च देहां” इत्र । अस्योपं दीर्घ । साहि जाते । तुर्गूर्वक । तुर त्वरितं साहयत्यमित्यवर्यरीनिति तुराषाट् । “सहशङ्कन्दसि” विण् । “कारितस्याऽ” कारितलोप । वैलोप १० । “नहि” वृत्तिवृष्टिव्यधिरुचिमहितनिषु को” विवन्नेषु प्रायकागणा दीर्घ । तुरा जातम् । तुरासाह-निष्पन्न । सि । “दण्डनानात्माच” मिलोप । “हशप” दण्डन्तेजादीना ड “हस्य डः । “सहे साडं ष १४ सस्य पत्वम् । रपरत्वात्परपदेऽपि सस्य पत्वम् । स्वमते अपिशब्दबलात् । अथवा तुर वैग सहते तुराषाट् । “सह” “शङ्कन्दसि” विण् पूर्ववत् । पुरु प्रभूत हूत यज्ञे यज्ञेष्वा (ज्ञे आ) ह्वान यस्य पुरुहृत । जातमात्रोऽ-दित्या कुशैराच्छादितत्वात् (कौशिक) । तथा पुराणम् १६ —

१०

१५

२०

“जातमात्रोऽथ भगवानदित्या स कुशैर्वृत्तं ।

तदा प्रभृति देवेशः कौशिकत्वमुपागतः ॥”

कुशैर्दर्भेश्वरति वा । अरिष्टी सद्ग्रन्थयति सद्ग्रन्थन् । मद्यते पूज्यते नान्तो मध्या । “मद्ये” “र्नलुगवन्तश्च” मद्ये कनि प्रत्ययो भवति नलुगवन्तश्च । पुलोमस्या (म्नोऽ) रि चुल्लोमस्ति । मरुतो पवनाना सखा मित्र, (त्र) मरुत्सख । दुश्यन्यवन् । वृत्रारि । बलसदन् । बुद्धश्वा । जिणु । वत्रधर । वास्तोष्पति । गोपति । पर्जन्य । हरिहय । पूर्वदिक्पति । रवराट् । गोत्रमिद् । अप्रधन्वा । हरिमान् । पाकशासन । दिवस्वति ।

२५

१. शु पूजायाम् अशुनुते व्याप्नोति “श्वशुर” इति व्युत्पत्या “श्वशुर” शब्दो निष्पन्न । तद्व-च्छुनाशीरशब्देऽपि शु शब्दः पूजार्थ इत्याशय । २. का० सू० ४।३।८३। ३. वैवेष्टि व्याप्नोति विट् । “विष्टु व्याप्तो” किप् । विट व्यापकमोजो यस्य स विडौजा । पृष्ठोदरादित्वादोकारस्योकार । इत्यप्य-ह्यम् । ४ त्वक्केशवालरोमाणि सुवर्णामानि यस्य त । हरि स वर्णतोऽुद्वस्तु पीतकोशेयसप्रभ । इति शालिहोत्रोक्तप्रकारोऽुश्वो हरि । ५ मरुतो देवा. शास्यत्वेन सन्त्यस्येति यावत् । ६ का० सू० ३।८।२४। ७ का० सू० ३।२।१०। ८. का० सू० ४।३।६०। ९ का० सू० ३।६।४। १० “वैरपृक्तस्य” पा० सू० ६।१।६७। ११ पा० सू० ६।३।१६। १२ का० सू० २।१।८। १३ का० सू० २।३।४। १४ पा० सू० ८।३।५। १५ का० सू० ४।३।६। १६. श्लोकोऽप्यम् अभिं० चिं० २।८।७। टीकायाम्येवमेवोपलम्यते । १७. का० उ० सू० १।४।

काष्ठा ककुवृ दिगाशा च दक्षकन्या तथा हरित् ।

षड् दिशायाम् । काशन्ते राजन्ते (नद्वादयोऽत्र) काष्ठा^१ । क स्कुम्भाति विस्तारयति ककुपै^२ । भान्तम् । दिशत्यवकाश दिक् । “^३ऋत्विद्धृत्कृ खग्नियुष्णिहश्च” इति सातु । आश्नुते आश्या । दक्ष प्रजापति, तस्य कन्या, दक्षकन्या । हरत्यनया हरित्^४ ।

५ तत्पर्यायपरं योजयं प्राज्ञः पालगजाम्बरम् ॥ ६१ ॥

काष्ठादिनामतः परं योजयं प्राज्ञ विद्विभः पालगजाम्बरम् । काष्ठापालः । ककुपालः । दिक्पाल । आशापाल । दक्षकन्यापाल । हरित्पाल । पालप्रयोगे दिगग्नामानि भवन्ति । काष्ठागज । ककुगज । दिग्गज । आशागज । दक्षकन्यागज । हरिदगज । अम्बरशब्दप्रयोगे दिगम्बर-नामानि भवन्ति । काष्ठाऽम्बर । ककुवम्बर । दिगम्बर । आशाऽम्बर । दक्षकन्याम्बर । हरिदम्बर ।

१० तथा च- -

“गिरिकन्दरदुर्गेषु ये वसन्ति दिगम्बराः ।

पाणिपात्रपुटाहारास्ते यान्तु परमा गतिम् ॥”

एवविधा मुनयो भव्याना शरण भवन्तु जन्मनि जन्मनि ।

पवनः पवमानश्च वायुर्वातोऽनिलो मरुत् ।

१५ समीरणो गन्धवाहः श्वसनश्च सदागतिः ॥ ६२ ॥

नभस्वान् मातरिश्वा च चरण्युर्जवनस्तथा ।

प्रभञ्जनः—

पञ्चदश वायौ । पवते जगत् पवित्रीकरोति पवन । युच् । “पूढ़ पवने ॥” पू । पवते पवमान । ““पूढ़यजो शान्दृ” आनमात्रः । अन्वित^५ अनिच^६ नाम्यन्तगुण । “ओऽश्व् ।” ‘आन्मोऽन्त आने’ मोऽन्त । वातीति वायु । ““कृवापाजी”—ति उण् । वाति सर्वत्राऽस्त्वलित वा वायु । वाति ग्रस्त्वलित याति, वात । ““मृगवाहस्यमिल्लूपृयस्त्” । अनेन जगत् अनिति प्राणिति, न निलिति वा अनिलि” । “निल गहने” । क्षुद्रजन्तवो मिथ्यते स्पर्शेनास्य मरुत् । तान्तम् । ““मृगोहस्ति” उतिप्रत्यय” । समन्तादीरयति समीरण । गन्ध वहति गन्धवह । गन्धवाह । गन्धवाही । श्वसन्त्यनेन व्वसन । सदा सर्वकालं गतिर्यस्य स सदागति । नम आकाशमस्यास्तीति नभस्वान् । मातरि २५ रेत श्वयति वर्द्धते नान्तो मातरिश्वन् । मातरिश्वेव मवनि “मातरिश्वा । चराचर याति चरे-

१ “काशृ दीपौ” “हनिकुशि” इत्यादि २१२। पा०उ० सूत्रेण कथन् । २ क वात स्कुम्भाति विस्तारयति । किप् । पृष्ठोदारादिवात्सलोप । केनादित्येन जलेन वा कुत्सितानि भानि नद्वाणि यस्यामिति “ककुभा” इत्यावन्तोऽपीति केचित् । ३ का०सू०४१३७३। ४ हरनित नयन्ति अनया हरित् दिग्जानेनैव कवित् कुतश्चित् कुतश्चिन्नयति । “दसरुहियुभ्य इति” इतीति । ५ का०सू० ४१४। ६. “अन्विकरण कर्त्तरि” इति पूर्णं सूत्रम् । का० सू० ३।२।३२। इत्यन्विकरण । ७ “अनि च विकरणे” का० सू० ३।५।३। ८ का० सू० १।२।१।४। ९ का० सू० ४।४।७। १० का० उ०सू० १।१। ११ का०उ० सू० ४।२।७। १२. का०उ०सू० १।३।० १३ मातरि जनन्या रेतः प्रसिक्य यथा वर्धते, तथाऽन्तरीक्षे वर्धमानो वायु ‘मातरिश्वा’ इत्याशय । तीरस्वामी हु—‘मातरि ये श्वयति” इत्याह । रामाश्रमस्थु—‘मातरि जनन्या श्वयति वर्धते सप्तसप्तकरूपत्वात्” इत्याह । धोपचस्त्रया दितेर्निद्राऽवस्थाया तत्कुशिप्रविष्टेनेन्द्रेण कुलिशद्वाग् तद्वग्नर्भस्यैवोनपश्चाशच्छक्लोकरणस्य पुराणप्रतिद्वावत्सप्तकत्वमुपन्नम् । “दु ओरिं गतिवृद्धयो” । विधातो “श्वन्तुक्षन्ति” ति कनिनन्तो निपातः सम्या अलुक् च ।

“रण्युः । ‘केवयुमुरण्यव्यवर्णदय’ केवयादयः शब्दा हुम्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । तथा च द्विसन्धानकाव्ये^२—

“असूययाऽगस्य निशास्य यां पुरो

विलङ्गयाऽम्भः परिशामिनीदशाम् ।

गता इवाभान्ति कुलाद्विपेशला-

श्ररण्युलोलाः परिखाऽम्बुद्वीचयः ॥”

“जु” इति सौत्रो धातुर्गतो । मौत्रा धातवोऽपि न्यादौ पठ्यन्ते । जवतीति जवन । ‘जुचट-क्रमदन्त्रम्यसृग्यविजलगुच्चपतपदाम्’ एव्यो युर्मवति । सर्वा दिशा. प्रभनकि प्रभञ्जन । जगत्प्राण । पृपदश्व । स्पर्शन् । समीर. हरि । महाबलः । आगुण ।

अस्य पर्यायपुत्रो भीमाङ्गनात्मजौ ॥६३॥

अस्य पर्यायात् प्रभञ्जनादिशब्दात्परत्र पुत्रशब्दो दीयते तदा भीमहुमतोर्नामानि भवन्ति । १०
पवनपुत्र । पवनतनय । पवमानतनय । वायुपुत्र । वायुतनय । वातपुत्र । वाततनय । अनिलपुत्रः ।
अनिलतनयः । समीरणपुत्र । समीरणतनय । गन्धवाहुपुत्र । गन्धवाहतनय । श्वसनपुत्र । श्वसनतनय ।
मदागतिपुत्र । मदागतितनय । नमस्तपुत्र । नमस्ततनय । मातरिश्वपुत्र । मातरिश्वतनय ।
चरण्युपुत्र । चरण्युतनय । जवनपुत्र । जवनतनय । चलपुत्र । चलतनयः । प्रभञ्जनपुत्र । प्रभञ्जन-
तनय । भीमस्य हनुमतश्च नामानि जातव्यानि ।

५

१५

तत्मखाऽप्तिः,

तस्य वायो, मत्वा तत्सख । वायुशब्दाग्रे सम्वशब्दे प्रमुख्यमाने अभिननामानि भवन्ति ।
पवनसख । वायुसख । अनिलसख । वातसख । मरसख । गन्धवाहसख । समीरणसख । श्वसनसख ।
सदागतिसख । नमस्तसख । मातरिश्वसख । चरण्युसख । जवनसख । चलसख । प्रभञ्जनसख । पवनेष्ट ।
पवमानेष्ट । इत्यादीनि अग्नेनांमानि जातव्यानि ।

२०

शिखी वह्निः पावकश्चाशुक्षणिः ।

हिरण्यरेता मसार्चिर्जातिवेदास्तनृनपात् ॥ ६४ ॥

स्वाहापर्तिर्हुताशशच ज्वलनो दहनोऽनलः ।

वैश्वानरः कृशानुश्च रोहिताश्वो विभावसुः ॥ ६५ ॥

वृषाकपि. समीगर्भो हृव्यवाहो हुताशनः ।

२५

एकविशतिर्गतो । “अक अग कुटिलाया गतौ ।” अगति वायुवशादूध्व गच्छतीत्यर्थिन ।
शिखाऽस्त्यस्य शिखो । उद्यते वह्नि^४ । “अग्निश्रुश्रियुवह्यो नि” एव्यो धातुयो नि प्रत्ययो
भवति । पुराति पावकः । आग्ने शोपयति रसान् “आशूशुक्षणिः” । “आशू शुपे सनिक्” । “शुप

१ चरण्युशब्दोऽयम्, न तु चरेण्यः । द्विसन्धानेऽपि चरण्युशब्दस्यैव दर्शनात् । एतत्साधकमुण्डा-
दिग्मत्रम् अभिधानचिन्नामणिटीकायाम् (३।४८३) उपलब्धते, नैवान्यत्र । वस्तुतस्तु वैदिकोऽय प्रयोगः ।
‘चरण् वरण् गतौ’ कण्डवादौ चरण् धातुर्यक् प्रत्ययान्तः । ततः ‘क्याच्छृन्दसि’ पा००७० ३।२।७० । इत्यु-
प्रत्ययः । सुम्नयु, तुरण्यु, भुरण्य, सप्तयु, आदिशब्दवदस्य सिद्धिः । विशेषस्तु “क्याच्छृन्दसि” इत्यस्य
तत्त्वबोधिन्या द्रष्टव्यः । चरण्यतीति चरण्युः । २ स० १ श्लो० १९ । ३. का० स० ४।४।३२ । ४ वहति
हृव्य वह्निरिति व्युपत्तिरन्यत्र । ५ का० उ० स० ३।५० । ६ आशौष्टुमिच्छतीति आद्यूर्वकाच्छुषः
सन्नन्तात् “आष्टु शुपे सनश्छृन्दसि” पा०३।००२० २।१०६ । अनिः । आशु शीप्रम, आशु वीहि वा शु
सुष्टु ज्ञेयोतीति वा । “सर्वधातुय इन्” इत्यन्यत्र । ७ का० उ० स० ५।१५ ।

शोपे ।” अन्तभूतकारितार्थोऽयम् । आशूपूर्वः । आशादुपपदे शुषे सनिक् ग्रत्ययो भवति । हिरण्यं रेतोऽस्य स हिरण्यरेता । यत् सृतिः—“अग्नेरपत्यं प्रथमं सुवर्णम्” । सतार्चिषो यस्य स सप्तार्चिः । भवन्ति “हिरण्या, कतका, रक्ता, कृष्णा, प्रसुताभावाऽन्या । अतिरिक्ता बहुरूपेति सप्त सप्तार्चिषो जिह्वा ।” जाते जाते विद्यते सान्तो जातवेदस् । जाता वेदा अस्माद् वा जातवेदाः । ५ तनून पातयति तनूनपात् । अपि तान्तो दान्तो वा । ‘स्वाहा’ इत्यस्य (स्याः) पतिः भर्ता स्वाहापति । हुत वषट्कारकृत वस्तु अशनातीति हुताश । हुतम् आशो भोजन यस्य वा । ज्वलतीत्येवशीलो उवलत । दहतोत्येवशीलो दहनः । अनिति प्राणिन्यनेन अनलः । विद्वानरस्यापत्य वैद्वानरः । कृश्यति तनूकरोति कृशानुः । रोहिताऽर्थ्यो मृगोऽर्थ्यो वाहनमस्य रोहिताश्वः । विभा वसुर्धनं यस्य स विभावसु । वृद्यो धर्मं कपिर्वराह ऐष्ठश्च तदूपतात् वृषाकर्पि । “पुराणम्-
१० “कपिर्वराहः श्रेष्ठश्च धर्मश्च वृप उच्यते ।
तस्माद् वृषाकर्पि प्राह काशयो मां प्रजापतिः ॥”

हमीनाममालायाम्—

“वृषाकर्पिर्वासुदेवे शिवेऽग्नौ च ।”

शम्यागमो यस्य स शम्मीगर्भ । हव्य वहतीति हृत्यवाट् । हृतमनातीनि हुताशन । बहुल । १५ वमु । सिततरगति । अर्चिष्मान् । धूमंवजः । बहिर्ज्योतिः । उत्तर्वध । चित्रमानुः । शुचि । कृषीट्योनि । दमुना । कृष्णावर्मा । अपापितम् । वीतहोत्रः । वृद्वद्भानु । आश्रयाशा । धनञ्जयः । तमोन । दम्ना इत्येके । दमेरुनमि ।

तदादिसुनुः,

अग्निसुनुः । वहिपुत्र । वृषाकर्पिसुनु । वृषाकर्पिषुत्र । इत्यादीनि स्कन्दनामानि भवन्ति ।

२०

सेनानीः स्कन्दश्च शिखिवाहनः ॥ ६६ ॥

कार्तिकेयो विशाखश्च कुमारः पण्मुखो गुहः ।

शक्तिमान् क्रौञ्चभेदी च स्वामी शरवणोऽङ्गः ॥ ६७ ॥

द्वादश स्कदे । सेना नयतीति सेनानीः । “सत्सूऽद्विपदुद्दयुजविदभिदछिदजिनीराजामुपसर्गेऽपि” एषामुपसर्गेऽयनुपसर्गेऽपि नाम्यनाम्नुपपदे क्षिव भवति । स्कन्दत्यरीन् स्कन्दः । स्कन्दं २५ शुष्क रेतोऽस्य वा । शिवी मूर्यो वाहनमध्य शिखिवाहनः । कृत्तिकानामपत्य कार्तिकेयः । दानव-बलौ बस्तेजासि व्यति विशेषेण तनूकरोति विशाख । विशाखामुतो वा । कुमारो ब्रह्मचारित्वात् ।

१. अम को० क्षीर० भा० १११५५ । २ सर्वत्रोत्तन्पदार्थे वर्तमानत्वाद् वेदोत्पत्तिकारणत्वेन चाग्नेनसन्त्वाच्च । जात वेदो धन (मुवर्ण) यस्मात् जात वेत्ति वेदयते वा इति त्युत्पत्तिर्गपि । ३. तनूस्वस्वरूप न पातयति दहतीत्यर्थ । क्षिप् । “नन्माण्णनपात्” इति नलोपाभाव । तनून पाति रक्षति जाते जाते विनष्टत्वादिति वा । पाते शत्रूपत्यय । तन्वा ऊन पाति रक्षतीति तनूनप वृत तदतीति । “आदोऽनन्मे” इति विट् । इत्यप्यूद्यम । ४ कृशोऽर्थनिति वर्वते कृशानुरिति वा । ५ श्लाकोऽयम्, अभिं चिं २१२९ । टीकायामेवोपलःयते । ६ अनेका० स० ४२१८ । ७ का० सू० ४।३।७४ । ८ स्कन्द रेतोऽस्येत्यर्थाभिप्रायेण । विग्रहस्तु स्कन्दति शुष्करेता भवतीति स्कन्द इत्येवरूप । ब्रह्मचारिणा शुष्करेतस्वमागमात्सद्भास । पचाश्च । ९. विष्वर्वत् “शो तनूकरणे” इत्यस्माद् बाहुलकात्प्रत्यय, विशाखानक्षत्रे जातो वा । विशाखयति विशेषेण व्याख्याति दानवबलमिति वा । “शाश्व व्यामौ ।” पचाश्च ।

कुत्सितो मारोऽस्येति कुमारः १ । पण्मुखानि यस्य स घरमुखः । गूहति रक्षति देवसैन्यं गुहः । “३ नाम्युपध
प्रीकगृजा कः ।” शक्तिविवरेऽस्य शक्तिमान् । कौञ्च पर्वत भिनतीति कौञ्चभेदी । स्वप्रस्त्यस्य स्वामी ३ ।
शराणा वनम्, शरवणम्, तस्मिन्नुद्व शरवणोद्वयः । गौरीपुत्र । शक्तिपाणि । तारकारि । अग्निभूः ।
बाहुलेयः । गाहु॒य । ब्रह्मचारी । महासेनः । महातेजा । पार्वतीनन्दन ।

तत्पिता शङ्करः शम्भुः शिवः स्थाणुर्महेश्वरः । ५
त्यम्बको धूर्जटिः शर्वः पिनाकी प्रमथाधिषः ॥ ६८ ॥
त्रिपुरारिविंशालाक्षो गिरीशो नीललोहितः ।
रुद्रेन्दुमौलिर्यज्ञारिस्त्रिनेत्रो वृषभध्वजः ॥ ६९ ॥
उग्रः शूली कपाली च शिपिविष्टो भवो हरः ।
उमापतिर्विरूपाक्षो विश्वरूपः कपर्यपि ॥ ७० ॥ १०

एकोनप्रिशदीश्वरे । तस्य स्कन्दस्य पिता । शं सुख करोतीति शङ्कर । शम्भवती (त्यस्मादि)
ति “शम्भुः । ‘सुखो दुर्विशम्येतु च ।’” शेते प्रलयकाले जगदत्र शिवः । जगति प्रलीनेऽपि तिष्ठति
स्थाणु । महांशासौ ईश्वरः महेश्वर । त्रीण्यम्बकानि अहीण्यस्य वृषभवक । त्रयाणा लोकानाम् अम्बक
पितेत्यागम । शूलं भूता जटयो जटा यस्य, धूर्गद्वा जटियु यस्य वा धूर्जटिः । शृणाति दैत्यान् शर्वः ।
““रश्वजिह्वाप्रीता” एते कप्रस्यान्ता निपातयन्ते । पिनाकमस्त्यस्य पिनाकी । प्रमथाया “अधिषः, प्रम-
थाधिषः । त्रिपुरासुस्त्यारिस्त्रिपुरारि । विशाले विस्तीर्णे अक्षिणी यस्य विशालाक्ष । ““सक्यन्तिर्णी
स्वाद्वृ ।” गिराणामीशो गिरीश । कालकूटभक्षणानीलं कृष्ण लोहित यस्य स नीललोहितः ॥ ११ ॥
कण्ठं लोहितश्च वेशे इति नीललोहितः ॥ १२ ॥ नीलः १२ कण्ठं लोहितश्च वेशे इति नीललोहितः ॥ १३ ॥
शक्तिविष्टुदिस्त्रिमदिमन्दिचन्द्रानुदीन्दिन्द्यो रक् ॥ १४ ॥ इन्दुमौलिर्मुक्तु यस्य (स) इन्दुमौलिः ॥ १५ ॥
यज्ञाना पशुकारणलक्षणानाम् अरिः, यज्ञारिः । त्रीणि नेत्राप्त्यस्य त्रिनेत्रः । वृषभो बलीवर्दो ध्वजाया
यस्य स वृषभध्वजः । कापूर्जति उग्र ॥ १६ ॥ १६ । शूलमस्त्यस्य शूली । कपाल मनुष्यकरोतिस्त्यस्य कपालो ।
शिव, पिंटो इता अस्थिरूपो (विष्टे) मूर्ध्नि यस्य स शिपिविष्टः ॥ १७ ॥ भवतीति भव ॥ १८ ॥ १८ ॥
यस्य स वृषभध्वजः । कापूर्जति उग्र ॥ १९ ॥ १९ । शूलमस्त्यस्य शूली । कपाल मनुष्यकरोतिस्त्यस्य कपालो ।
शिव, पिंटो इता अस्थिरूपो (विष्टे) मूर्ध्नि यस्य स शिपिविष्टः ॥ २० ॥ २० । भवतीति भव ॥ २१ ॥ २१ ।

१ “कुमार क्रीडायाम् ।” कुमारयतीति पचाश्च । को पृथिव्या मारयति दुष्टानिति वा
विग्रहो बोध्य । २ का० उ० सू० ६६८ । इतीनप्रत्यय । ३ स्वशब्दादामिन् प्रत्यय । ‘स्वामिन्नैश्वर्ये’
पा० सू० ५१२।१२६ । अथवा शोभनममति रक्षतीति स्वामी । “सावमेरन् दीर्घश्च” का० उ० सू० ६६८
इतीन् प्रत्यय । ४ शम्भवति भावयतीत्यर्थो वा । अन्तभावितप्रथयोऽत्र भवतिः । ५ का० सू० ४।४५६ ।
६ उक्तविप्रहे शे १वाहुलकाङ्क्षिविप्रत्ययः । शिव करोतीति शिवयति, ततः पचाश्च शिवो वा । शिव-
स्याप्त्यस्त्रिमन्त्रेत्यपि विग्रहो बोध्यः । ७ का० उ० सू० २।२। ८ प्रमथाया दुर्गायाः । परन्तु “प्रमथः स्युः
पारिषदाः” इत्यमरादिषु प्रमथशब्दस्य शिवपर्यायवेन प्रसिद्धेः, दुर्गावेनाप्रसिद्धे प्रमथानामधिषः
इति सुवचम् । ९, “राजादीनामदन्तता” का० सू० २।६।४। वृत्तिः ५०। १० नील कण्ठे लोहित जटाया-
मङ्ग यस्येति विग्रहार्थ । तदुक्तम्—“नील येन ममाङ्गन्तु रसाक लोहित त्विवा । नीललोहित इत्येष
ततोऽह परेकीर्तित ॥ इति स्कान्दे” इति मुकुटः । ११ अम०को०क्षीर०भा० १।१।३३। १२ का० उ० सू०
२।१४। १३ इन्दुमौलां यस्येति विग्रहः सरलः । १४ उन्न्यते कुधा समवैति उप्रः । ‘उच् समवाये’
उच् धातु । ततो रक् । गश्चान्तादेशः । ऋग्वेन्द्रादि उ० स० । १५ शिवपिष्टशब्दयोराद्यक्षरोपादानेन
शिपिशब्दोऽ । १६. भव्याय भवति कल्पते इत्यर्थः ।

उमायाः पति उमापतिः । विरुपाण्यक्षीण्यस्य विरुपाक्षः । विश्वेषु रूप यम्य स विश्वरूपः । कपदोऽस्यस्य कपदी । कपदो जटाजटः । क शिरः पिपर्तीति कपर्दः । श्रौणादिको द । अपिशब्दात्-ईशान । शशिशेष्वर । पशुपति । शम्भु । गिरिश । श्रोकाठः । सर्वजः । त्रिपुरान्तक । भूतशः । परमेश्वरः । अन्वकरिपु । दक्षाध्वरध्वसक । स्थान । वामदेव । कामधंसी । व्योमकेश । वहिरेता । भीम । भर्ग । ५ कृतिवासा । त्रुपाङ्क ।

भागीरथी त्रिपथगा जाहवी हिमवत्सुता । मन्दाकिनी—

पञ्च गङ्गायाम । भागीरथेन राजा त्रिपतिरत्वात्स्यापत्य वा भागीरथी । त्रिभिः पथिभिर्गच्छति त्रिपथगा^१ । त्रिमार्गगा च । जहुना पीता श्रोत्रेण त्यक्ता जाहवी । जहोरपत्य वा जाहवी । १० हिमवतो हिमाचलत्य सुता हिमवत्सुता । मन्दाकिना मन्दा गतिरस्यामन्दाकिनी । सुरसरित् । विष्णुपदी । सरिद्वरा । त्रिदशदीर्घिका । त्रिस्रोता । भीष्मसू । सुरनिम्नगा ।

द्युपर्यायधुनी

आकाशशब्दतो (तः परत्र) नदीपर्यायेषु गङ्गानामानि भवन्ति । खस्त्रोतस्वनी । विहायो-धुनी । विष्णिन्धु । व्योमस्वन्ती । नमोनदी । गगननिम्नगा । अम्बरापगा । द्योनदी । आकाशनदी । १५ अन्तरीक्षद्विरेका । मेघपथसरित् । वायुपथतरङ्गिणी । इत्यादीनि जातव्यानि ।

गङ्गानदीश्वरः ॥ ७१ ॥

गागीरथादिशब्दत (परत्र) ईश्वरपर्यायेषु इरनामानि भवन्ति । भागीरथीराजः । त्रिपथ-गाधिप । जाहवीपति । हिमवत्सुतास्वामी । मन्दाकिनीनाथ । इत्यादीनि जातव्यानि ।

विधिवेद्या विधाता च द्रुहिणोऽजश्चतुर्मुखः ।

२० पद्मपर्याययोनिश्च पितामहविरञ्चनौ ॥७२॥

हिरण्यगर्भः स्थान च प्रजापतिसहस्रपात् ।

ब्रह्मात्मभूरनन्तात्मा कः

सप्तदश ब्रह्मणि । विधतिः सुजति विधि । विधते वा विधिः । “उपसगे द. किः० ।” विधर्ति सृजति वेधा । “सर्वधातु-योग्यस्त्रुतः ।” “विध विधाने ।” विदधाति धारयति भूतानीति विधाता । २५ द्रुक्त्यसुरेभ्यो द्रुहिण । न जायतेऽजः । चत्वारि मुखानि वक्त्राण्यस्य चतुर्मुख । “पद्मपर्याययोनिः”-पद्मपर्यायशब्दात्र्ये योनिशब्दे प्रयुज्यमाने धारुनामानि भवन्ति । तामरसयोनिः । कमलयोनिः । नलिनयोनिः । पद्मयोनिः । सरोजयोनिः । सरसीद्ययोनिः । खरण्डियोनिः । पुण्डरीकमव । महोत्प-लज । अरविन्दयोनिः । शतपतयोनिः । पुष्करयोनिः । इत्यादीनि जातव्यानि । दक्षमन्त्रादीना लोक-पितृणा पिता पितामह । आत्मनो भूतानि विरिद्धक्ते पृथक् करोति विरञ्चन । विरञ्च । विरिञ्चिश्च ।

१ त्रयाणा पथा समाहारस्त्रिपथ तेन गच्छतीति वा । इत्य च पूर्वे समाहारद्विगौ हृते तत्र समासान्तविधानेन त्रिपथशब्दस्याकारान्तत्व सूपपाद्य भवति । गग्नायास्त्रिपथगामित्वे भारतोक्त वचनम्-“क्षितौ तारयते मत्यान् नागांस्तारयतेऽप्यधः । दिवि तारयते देवांस्तेन त्रिपथगा स्मृता ॥” २ मन्द-मकिनु गन्तु शीलमस्या इति वा । “शक्त कुटिलाया गतो ।” शिन् । डीप् । ग्रन्थोक्तविग्रहे मन्दाकशब्द-म्य मन्दगत्यर्थे प्रमाणगुण्यम् । ३ “विध विधाने ।” त्रुदादिः । सर्व धातु-य इन् किञ्च च । ४ का० सू० ८५।७० ५ का० ड० सू० ८५६।

हिरण्य गर्भे यस्य, हिरण्य गर्भो वा यस्य हिरण्यगर्भः । 'पुराणम्-- ।

“हिरण्यगर्भमभवत्तत्राण्डमुदके तथा ।
तत्र यज्ञे स्वयं ब्रह्मा स्वयम्भूलोकविश्रुतः ॥”

सृजतीत्येवशील स्मष्टा । प्रजाना पति प्रजापति । “पद गतौ ।” पद । पश्चन्ते गम्यन्ते (गच्छन्ति) प्राणिन्, तान् पत्रमानन् जन्मन् चरणा एव प्रगुञ्जते । “धातोश्च हेतो” इति । अन्योप० ५ दीर्घ । पादि ज्ञाता । पादयन्तीति पाद । विष्णुच । “करितस्याऽ” कारितलोपः । वैलोप । पाद । सहस्र पादो यस्य स सहस्रपाद् । वृहन्ति वर्णन्ते चराचराण्यत्र ब्रह्म । उभयम् । इदं ब्रह्म । अयं ब्रह्म । अथवा वृहन्ति ब्रतानि यस्मिन्निति ब्रह्म । वृहे ऐमन् प्रत्ययो भवति, अन्तर्च हकारात् पूर्वम् । आत्मना भवति आत्मभूः । न अन्तो विश्रन्ते यस्य सोऽनन्तः, अनन्तो विनाशरहित आत्मा यस्य सः अनन्तात्मा । १० कायतीति “क । परमेष्ठी । सुरज्ञेष्ठः । शतानन्दः । स्वयम्भू । जगत्कर्ता । शतसृति । स्यविरः ।

तत्पुत्रोऽथ नारदः ॥७३॥

तस्य पुत्रस्तत्पुत्रः । ब्रह्मण् शब्दात् (परत्र) पुत्रशब्दे प्रयुज्यमाने नारदनामानि भवन्ति । विधिपुत्रः । वेद्य पुत्र । विवातपुत्रः । विरित्तिपुत्रः । द्रुहिंश्चपुत्र । अभ्युपुत्रः । चतुर्मुखपुत्र । पदम् योनिपुत्र । वितामहपुत्र । हिरण्यगर्भपुत्र । प्रजापतिपुत्र । सहस्रगतपुत्र । ब्रह्मपुत्र । आत्मभूसुत । १५ अनन्तात्मपुत्र । इयादीनि जातव्यानि ।

कृष्णो दामोदरो विष्णुरुपेन्द्रः पुरुषोत्तमः ।
केशवश्च हृषीकेशं शाङ्कां नारायणो हरिः ॥ ७४ ॥
केशी मधुर्वलिवर्णणो हिरण्यकशिपुर्मुरः ।
तदादिसूदनः शौरीः पदमनाभोऽप्यधोऽक्षजः ॥ ७५ ॥

गोविन्दो वासुदेवश्च—

२०

एकविश्वतिनरायणो । कर्षन्यरीत् कृष्णवर्णत्वाद्वा कृष्णः । “इण्डिकृष्णिष्ठो नक् ।” दाम उदरे यस्य स दामोदर । यल्लक्ष्यम्-वालो हि चापालाददाम्ना बद्धोऽभूत् । वेवेष्टि व्याख्योति विष्णु । “सुविपिन्या यथ्वत् ॥” उपगतमिन्द्रमुपेन्द्र । इन्द्रं उपगतोऽनुजन्वाद् वा उपेन्द्र । पुरुषेषु उत्तम पुरुषोत्तमः । केशा सन्यन्य केशवः । हृषीकाणामिन्द्रियाणामीशो वशित्वाद् हृषीकेशा । शाङ्कं धनु-रस्त्यस्य शाङ्की । नारा आप अथन यस्य नारायणः । यस्मृति । १०-२५

“आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः ।

अथन तस्य ताः पूर्वं तेन नारायणः स्मृत ॥”

१ “पुराणम्” इत्यारन्य “लोक विश्रुतः” इत्यन्तम् अभिधानचिन्तामणिटीकायाम् २१२७। उपलब्ध्यते । २. का० सू० ३।२।१०। ३. का० सू० ३।६।४४। ४. ‘सर्वधातुंयो मन्’ का० उ० सू० ४।२।८। ५. “कै शब्दे” वेदध्वनिकर्तुव्येन ब्रह्मणि कायतीति क इति विग्रहः । “कच दीसौ” कचते वा । “अन्येन्योऽपि हश्यते” पा० सू० ३।२।१०। ६. का० उ० सू० २।५।१। ७ बालकृष्णो द्वियशोदया तत्त्वाप्लयनिवारणाय कठिप्रदेशे वद्ध इति पौराणिकी कथा “लक्ष्यम्” इति पदेन स्मार्यते । ८ का० उ० सू० २।८। ९. नराणा समूहो नारम्, तदयन यस्य, नराद् विराद् पुरुषाङ्गात तत्वं नारम्; तदयते जानाति वा, आयति प्रवर्तयति वा, “नारायण” इत्यपि अुत्पत्तिरत्र । १० मनुसृति १।१०। तृतीयचरणे “ता पदस्यायनभूर्बम्” इति पाठो लभ्यते ।

नरस्यापत्यं वा । नरनयते इति वाक्येन नरायणोऽपि । हरत्यघ द्वृति । वेशाः सन्तस्य केशी ।
 'मन्यते जनै मधु ।'" "मनिजनिनमा मधजतनाकाश्च" एषामुप्रत्ययो भवति मधजतनाकाश्च यथासर्वय-
 मादेशा भवन्ति । "वल वल्ल च ।" वलतीति बलिः । 'इ' सर्ववातु+य. ।'" वण्यते वाणः । तदादि-
 सूदूरः । तदादीना केश्यादीना सूदनो नाशकर्त्तरि । केशी मधु, ब्रलिः, वाणः हरिण्यकशिषुः, मुर,
 ५ एव्य, शब्देभ्यः परत्रारिशब्दे प्रयुज्यमाने नारायणनामानि भवन्ति । केशिवैरी । केश्यरतिः । केश्यमित्रः ।
 केशिद्विट् । केशिसप्तन । मधुवैरी । मव्वराति । मव्वमित्र । मव्वरिः । मधुद्विट् । मव्वमप्तन । मधुरिपु ।
 बलिवैरी । बल्यराति । बल्यमित्र । बलिद्विट् । बलिसप्तन । बलिरिपु । बाणवैरी । बाणाराति । बाणा-
 मित्र । बाणरिः । बाणद्विट् । बाणसप्तनः । बाणरिपु । हरिण्यकशिषुपुद्विट् । हरिण्यकशिषुपत्न ।
 हरिण्यकशिषुरिपुः । मुरवैरी । मुररिः । मुराराति । मुरुद्विट् । मुरसप्तनः । मुररिपु । मधुशत्रुः । बाण
 १० शत्रु । मधुसूदन । बलिसूदनः । बाणसूदन । हरिण्यकशिषुपुसूदनः । केशसूदन । इत्यादि-
 पर्यायनामानि । शूरस्तस्यादिपुष्टस्यापत्यम्, शौरि । संरिवा । पद्म नामावस्य पद्मनाभः ।
 "सजाया नामिः ।" अधोन्त्ताणा जितेन्द्रियाणा जायते प्रत्यक्षीभवति, अधोक्षज । गा सुव विन्दति
 गोविन्दः । वसुदेवस्यापत्य वासुदेव । ८ मञ्जुकेश । श्रीवत्साङ्क । श्रीपति । पीतवासा । विष्वक्रसेन । विश्व-
 रूप । मुकुन्दः । धरणिधर । सुपर्णकेनु । वैकुण्ठ । जलशयन । रथाङ्गपाणि । दाशार्थः । कनुपूर्णप ।
 १५ वृषाकपि । अन्युतः । इन्द्रावरज । ९ वभ्र । विष्टरश्रवा । वनमाली । सनातन । जिन । शम्भु ।
 इत्याद्यृद्यम् ।

लक्ष्मीः श्रीगांगिमिनीनिंद्रा ।

चन्वार श्रियाम् । लक्ष्मीदर्शनाकाङ्क्षयो ।" लक्ष्मयति दर्शयति पुण्यकर्मण जनमिति लक्ष्मी ।
 "लक्ष्मोन्तश्च" अस्मादीप्रत्ययो भवति मोऽन्तश्च । "मञ्जु श्रित्र् (सेवायाम्) ।" पुण्यकृत श्रयतीति
 २० श्री । " वचिगच्छिद्विपुद्वजा किवदीर्घश्च" १५ यः किवप्रत्ययो भवति दीर्घय न्वरस्य चैपम् । गा मिनो-
 तीति गोमिनी । १० इन्द्रात परमैश्वर्ययुक्ता भवति इन्द्रिरा । कमला । पद्मा । पद्मवासा । हरिप्रिया ।
 क्षीरोदतनया । माया । मा । ता । ई । आ । रमा । सीता । वला (चला) । मर्मरी । अविष्वजाऽपि ।

तत्पतिः शैलभूम्यादिधरश्चकधरस्तथा ॥ ७६ ॥

तस्याः पतिस्तत्पति । लक्ष्मीपति । श्रीपति । गोमिनीपति । इन्द्रिरापति । इत्यादीनि हरि-
 २५ नामानि स्युः । शैलभूम्यादिधरः । पर्वतवर । शैलधर । दरीभूदधरः । अचलवर । गृहिधरः । सानुम-
 दधर । गिरिधर । नगधरः । शिलोच्चयवर । भूमिधर । भूधर । पृथ्वीधर । गह्यरीधर । मेदिनोधर ।

१ मन्यते जनै 'खलत्वेन इति शेष । २ का० उ० स० ११८ । ३ का० उ० स० ३१४ ।
 ४ का० स० २१६।८१ । वृत्तिः । ८ । ५ अथ कृतमक्षजमैन्द्रियक ज्ञान येन, अथो न क्षीयते जातु इति
 वा विग्रहाऽधिकोऽन्यत्र । ६. "मञ्जुकेश" शब्दस्य "विष्णु" पर्यायत्वे कल्पद्रुररपि प्रमाणम्- "मञ्जुकेश"
 कौस्तुभोरा. सोमगर्भो धराधर ।" ३।२।७ । ७ वभ्रुशब्दस्य नारायणार्थेऽमरोऽपि प्रमाणम् । "विषुले
 नकुले विष्णौ वभ्रु. स्यात्पिङ्गले त्रिषु ।" ३।३।१७० । ८ का० उ० स० ३।३५ । ९ का० उ० स०
 २।२३ । १० "गोमिनी" शब्दस्य लक्ष्म्यर्थे प्रमाण मृग्यम् । अत्रत्वविश्रहोऽपि चिन्तय । मव्वर्थे गोशब्दा-
 मिनिप्रत्यये दीपि गोपालिकार्थे तस्य प्रसिद्धौ कोपान्तरसवादः । ११. ता, ई, आ, एषा लक्ष्म्यर्थे प्रमाणम्-
 "लक्ष्मी पद्मा रमा या मा ता धी कमलेन्द्रिरा" अभिं० चिं० २।१८० । "या" इत्पत्र ई आ इति
 छेद । "लक्ष्म्यान्तु मर्मरो विष्णुशक्ति क्षीराविष्मानुवी ।" इति तट्टीकायाम् ।

महीधरः । धराधर । वसुन्धराधरः । धात्रीधरः । ज्ञाधरः । वसुमतीधर । विश्वमराधरः । अवनीधरः । धरणीधरः । ज्ञाधर । धरित्रीधरः । कुधरः (त्रः) । कुर्मिनीधरः । इलाधरः । उर्वरीधर । उर्वीधरः । गोधरः । जगतीधर । इत्यादीनि हरेनामानि शातव्यानि । तथा चक्रधरोऽपि ।

तत्पुत्रो मन्मथः कामः सूर्पकाराति (कारि) रनत्यजः ।

कायपर्यायरहितो मदनो मकरध्वजः ॥ ७७ ॥

५

पट् कामे । तत्पुत्र । कृष्णपुत्रः । दामोदरपुत्र । विष्णुपुत्र । उपेन्द्रतनयः । पुरुषोत्तमसूतुः । केशवपुत्र । द्वृष्टीकेशपुत्र । द्वृष्टीकेशतनय । शार्ङ्गिनन्दनः । नारायणोद्दृष्टः । इरिसन्तु । गोविन्दतुरु । इमानि मदनम्य पर्यायनामानि ज्ञातव्यानि । मन्माति चित्तं मन्मथः । कामयते जन (अनेन) कामः । २८ सूर्पकाराति । मनसोऽन्यस्मान् जायते अनन्यज । कायपर्यायरहितः । विदेह । अकाय । अनङ् । अनपवनः । अवपु । असहनः । अक्लेवरः । अमूर्तिः । इत्यादि (दीन्यपि तम्य) पर्यायनामानि । जन १० मदयतीति मदन । मरुरो वजे यस्य स मकरध्वज । प्रयुम्न । मनसिज । सङ्कल्पजन्मा । अङ्गज । पञ्चेषु । श्रीनन्दन । हृष्ण्य । मधुसख ।

शिलीमुखः शरो वाणो मार्गणो रोपणः कणः ।

इषुः काण्डं क्षुरप्र च नाराचं तोमरं खगः ॥ ७८ ॥

द्वादश वाणो । शिलीव सद्माग्र मुख यस्य शिलीमुखः । “श हिमायाम्” । शृणन्त्यनेनेति १५ शर । “पु सि सजाया ष” धप्रत्यय । वणति वाण । ६ “द्यञ्जनाच्च” धन् । मार्गयति अन्वेषयति मार्गणः । गोप्यनं देहे निखन्यते रोपण । कणति ७ कण । “इप गतौ” । इष्यते गम्यते शत्रुसमुखमिति ८ इषु । जन्तुमिष्यति हिन्तीति वा इषु । “९ इपिष्विमिदिगृष्मिदृष्टिपृष्य कु” । काम्यते रिपुवधाय १० १० कारणम् । उभयम् । खनति भिनति ११ श्वरप्रम् । नार नरसमूहम् अश्वतीति १२ नाराचम् । स्तोम्यते इलायते तोमरम् । १३ ग्रामाकाश गच्छतीति खगः । कद्रुपत्र । चित्रपुद्भव । विशिख । कलम्ब । २० कदम्बोऽपि । सायक । प्रदह । पृष्ठक । रोप । गादर्भपक्षः । १४ खकः । भल्लिः । भल्ल ।

१ विग्रहे चित्तस्थाने मन शब्दपाठो योज्य । मनसैष्ठोपार्थं पृष्ठोदरादिगणपाठायासो २५ तस्य कार्य । ज्ञारस्वामिगमाश्रमौ तु मनन मत चेतना । मध्नातीति मथ । पचायच् । मतश्चेतनाया मथ “मन्मथ” इत्याहतु । २ छन्दोभद्रमयच्छृङ्कारिरिति पाठो बोध्य । शूर्को नाम कश्चिद् दानवस्तम्य नाशकारित्वाकाम शर्हकार । तदुक्तम्- अभिनि० चिं० २० १४८ । “पृष्पाण्यरयेषुचापास्त्राण्यरी शम्वरमूर्को” । ३ शिली नाम गण्डपद । “केचुवा” इति लोके ख्यात । ४ का० स० ४५१९६ । ५ वणति शब्दायते पुड्योऽसिन्निति पूर्णो विग्रह । ६ का० स० ४५१९९ । ७ कणति शब्दायते कण । पचायच् । ८ इपति गच्छति शत्रुसमुखमिति वा । ९ का० उ० स० ११० । १० कनति दीप्यते काण्ड इति रामाश्रम । “कनी दीनो” । “कादिम्य कित्” उ० ११२ । इति इः । अनुनासिकरयेत्युपधादीर्घश्च । अमरकोत्युर्कविग्रह “कमु कान्तो” कमधातोः स एव प्रत्ययः । कणत्यनेनाहतः काण्ड इति हैमचन्द्र । “कण शब्दे” इत्यतो इः । ११ क्षुर तैक्षणेन प्राति गच्छतीति क्षुरप्रम् इत्यपि । क्षुरान् लोह प्राति गच्छति वा । १२ नारमाचामतीति रामाश्रम । नरमञ्चतीति नराची, नराच्यास्तुल्यो नाराच इति हैमचन्द्रः । १३ “तु गतौ” सौत्रः । तौतीति तौ । विच् । ग्रियतेऽनेति मरः । पुसि सज्जाया ष । तौशासौ मरश्चेति तोमर इत्यन्यत्र । १४ खर्बाणः । तदुक्त कल्पद्रुकोशे १५० २६९ । “विकर्णं पत्रवाहश्च चित्रपुद्भवः शर खरुः” इति ।

कामुकं धन्वं चापं च धर्मं कोदण्डं धनुः ।
शिलीमुखादेसनम्-

षट् धनुषि । कर्मणे शत्रुवधलक्षणाय प्रभवतीति 'कामुकम् । दधन्ति मारयत्यनेन ३धन्वन् । अदन्तम् धन्वम् । चपस्य वेणोविकारश्चापम् । उभयम् । धरति ३धर्मन् । धर्मं च । "कुट अनृतमापणे" । ५ कोदण्डत्यनेन ४कोदण्डम् । शत्रुवधार्थं धन्यते अर्थते धार्यते वा धनुः । उभयम् । उणादौ दधन्तीति धनुः (न्) । "कृत्रिचमितनिधनिविष्णिलिखिंय ऊ" । शिलीमुखादेसनम् । शिलीमुखासनं । शरासनः । मर्गणासनं । रोपणासनं । कणासनः । इप्वासनं । काण्डासनं । क्षुरप्रासनं । नारचासनः । तोप्रासनं ।

तन्कोटिमटनीं विदुः ॥ ७६ ॥

१० तस्य धनुपः कोटिप्रमाणम् । कामुककाटिः । धन्वकोटिः । चापकोटिः । काण्डकोटिः । धनुषकोटिः । शिलीमुखासनकोटिः । शरासनकोटिः । वाणासनकोटिः । रोपणासनकोटिः । मार्गणासनकोटिः । इन्यादिकमटनीति कथ्यते । अटति गच्छति भूमिमटनीं । द्याम् । अटनी । दो स्त्रियाम् ।

पुष्पं सुमनसः फुलं लतान्तं प्रमवोद्गमो ।
प्रसूनं कुसुमं व्रेयम्-

१५ पट् (आट) पुष्पे । पुष्पाति विकसति पुष्पम् । मुादु मन्यन्ते आगिः गुमनसः । छोत्वदृत्वं । "त्रिकला विशारणे" । फलं । फलति स्म फुलः । फुलं वा । "ग्रथश्चकर्मक- त् । "आदनुगन्धाच्च" चति नेट् । "अनुपसर्गाच्छक्तिक्षीब्रुक्षशोलाधा" निष्ठातमारय लत्वं । "चकलोहरम्य" तमागदावगुणं उत्त्वम् । सि । रेक । लताया अन्त पतित लतान्तम् । प्रय् (य) ते प्रसवम् । उदगच्छति प्रादुर्भवति उद्गमः । श्रिय प्रसुते प्रमृतम् । रुन मनक च । एता उभयम् । को शोभा भते १ कुसुमम् । २० ग्रुम च । जैय शातव्यम् ।

तदायस्तश्चरः स्मरः ॥ ८० ॥

पुष्पर्यायतो (त. परता) छपर्यायेषु तथा ब्रागपर्यायेष्वपि स्मरनामानि भवन्ति । पुष्पेषु । पुष्पबाणं । पुष्पशिलीमुखं । पुष्पशरं । पुष्पमार्गणं । पुष्परोपणः । पुष्पकाण्डः । पुष्पकणः । पुष्पक्षुरप्रः । पुष्पनाराच । पुष्पतोमर । सुमनं व्रुत्रप्र । सुमशिलीमुखं । सुमनोनाराच । लतान्तेषु ।

२ 'कर्मण उक्तं' पा० स० ५।१।१०३ । इति प्रभवत्यर्थं उक्तं । टिलोप । २ 'धन धान्ये' जुहोन्यादिः । वन्प्रत्ययः । धातूमानेकार्यव्याप्तान्मारयतीर्थयः । धाववर्थनुरावे तु दधति वान्यमर्जयत्यनेन त्ययों बोध्यः । वीराणा वनधान्यार्जनमाधनवाऽधनुपः । धन्यति गच्छति धन्वेति क्षीरत्वापिरापाश्रम-हमचन्द्राः । कनिनप्रत्ययः । ३ धरती रक्षत्यापनसत्त्वानिर्यथ । मनिनप्रत्ययः । अकागत्तधर्मशब्दस्य धनुर्वाचित्वे मेदिनी प्रमाणम् । 'धर्मोऽस्त्री पुष्प आचारे स्वभावोपमयोः क्रतौ । अहिनोपनिपन्न्याये ना धनुर्यमसोमपे ॥' मान्तव० १६ श्लो० ॥ ४ बाहुलकादण्डपत्ययः । रामाश्रमस्तु 'कुट अनृतमापणो' कोटती विग्रहमाह । म एव प्रत्ययः । पृष्ठोदरादित्वादृत्य द । कदि सोत्रः । कथतेऽनेनेति हेमचन्द्र । 'कुट शब्दे' कौतीति कौ । कौ । शब्दायमानो दण्डोऽुस्तेयायन्यत्र । ५ का० उ० स० १।३१ । ६ सुप्रीत मन आभिरिति सुकुट । ७. का०स० ४।६।४९।८ का०स० ४।५।५।९।५. का०स० ४।६।१५।१० का० स० ४।१।७।६। ११ कुस्त्विति कुसुमम् । 'कुस सश्लेषणे' दिवादि । "कुसेहम्भोमेदेता" पा०उ० स० ४।१०६। इत्युप्रत्यय । इति रामाश्रम ।

लतान्तकाण्ड । लतान्तक्षुरप्र । लतान्तनाराचः । लतान्तोमरः । प्रसवमार्गण । प्रसवरोपण । प्रसवकण । प्रसूतेषु । प्रसवकाण्ड । प्रसवक्षुरप्र । प्रसवनाराच । प्रसवतोमर । उद्गमशिलीमुखः । उद्गमशर । उद्गमबाण । उद्गममार्गणः । उद्गमरोपण । उद्गमकणः । उद्गमेषु । उद्गमक्षुरप्र । उद्गमनाराच । उद्गमतोमरः । प्रसूतशिलीमुख । प्रसूतशर । प्रसूतबाण । प्रसूतरोपण । प्रसूतकण । प्रसूतकाण्ड । प्रसूतेषु । प्रसूतक्षुरप्र । प्रसूतनाराच । प्रसूतोमर । कुसुमशिलीमुख । कुसुमशर । कुसुमबाण । कुसुम-
मार्गण । कुसुमरोपण । कुसुमकण । कुसुमेषु । कुसुमकाण्ड । कुसुमक्षुरप्र । कुसुमनाराच । कुसुमतोमर । पुष्पशब्दार्थे धनुषि शब्दे प्रयुज्यमाने कन्दपूर्णामानि भवन्ति । पुष्पकामुक । पुष्पधन्वा । पुष्पचाप । पुष्पधर्मा । पुष्पकोदण्ड । पुष्पधनु (न्वा) । लतान्तकामुक । लतान्तधनु (न्वा) । लतान्तचाप । लतान्तधर्म (मा) । लतान्तकोदण्ड । लतान्तधन्वा । प्रसवचाप । प्रसवकोदण्ड । प्रसवधनु (न्वा) । प्रसूतकामुक । कुसुमधन्वा । कुसुमधर्म (मा) । कुसुमकोदण्ड । कुसुमधनु (न्वा) । १० इत्यादीनि ज्ञातव्यानि ।

स्वान्तमास्वनितं चित्तं चेतोऽन्तःकरणं मनः ।

हृदयं विशिखाऽकृतम्-

नव चित्ते । ‘स्यम स्वम ध्वज शब्दे ।’ आद्यूर्वः । स्वनति स्म, आस्वनति स्म इति स्वान्तम्, आस्वान्तम् । ‘गत्यर्थो’^१ निष्ठा क्त । ‘वा ३हृष्यमत्वरसधुषाऽस्वनाम’ एव्य क्ते विभाषयेद् । १५ मवन्ति । वेट् । ‘पञ्चमो’^२ । ‘मनोरनुव्वारोऽ तुटि’ । मनोऽर्थे ‘क्षुभिवाही’ त्यादिना न्ते नेट् । कथितत्वक्यनेऽपि परत्वात्पूर्वोक्तपरोक्तयो धरोक्तविर्विलवान् इति वचनात् । अनेन सूत्रेणायमेव विकल्पो मवन्ति । मनोऽभिधानेऽपि परत्वादयमेव १विधिर्मवति । चेतति चित्तम्^३ । चेतति जानाति अनेनात्मा चेतस् सान्तम् । अन्तं निश्चय, क्रियतेऽनेन, अन्तं करणम्^४ । मन्यते बुध्यते नेन सान्तम् मनस् । बुद्ध्याद्येऽपि हरति हृदयम् । ‘हृनो’ दोऽनुत्तश्च । दान्तं च हृद । विगत (ता नष्ट (ष्टा) शिख (खा) । २० यस्य तत् विशिखम्^५ । आ समन्तात् कूर्यते आकूर्यते (आकृतम्) । तथा चाष्टसाहस्र्याम^६— ‘जाताकृतेनाकारेणोति मानसम्’ ।

मारस्तत्रोद्भवो मतः ॥ ८१ ॥

तत्र चित्ते उद्भवो मारो मत कथित । स्वान्तमभवः । स्वान्तज । आस्वनितज । चित्तमभव । नितज । चेतसमभव । चेतोजः । अन्तं करणसमभव । हृदयसमभवः । हृदयजः । विशिखसमभव । २५ विशिखज । आकृतसमभव । इत्यादीनि कन्दपूर्णामानि ज्ञातव्यानि ।

मौर्वी जीवा गुणो गव्या ज्या-

पद्मगुणे । मूर्वति हिनस्त्यनया मूर्वा । तदाल्यस्य तृणस्य विकारो मौर्वी । धनुरनया जीवतीति

१ का० स० ४१६४९। २ का० स० ४१६१७। ३ का० स० ४१६५५। ‘पञ्चमोपधाया तुटि चागुणे’ इति पूर्णे सूत्रम् । ४. का० स० २। ५ का० स० ४। ६ आस्वनितमित्यत्र मनोऽर्थेऽपि परत्वात् “वा स्व्यमत्वरे” ति वेट् । आद्यूर्वकत्वाभावे तु स्वान्तमित्यत्र “क्षुभिवाही” त्यादिनेट्-प्रतिषेध । तेन स्वान्तमित्येकमेव रूपम् । आद्यूर्वकत्वे तु आस्वनितमास्वान्तमित्युभयमित्याशय । ७ ‘उयनुव्वमितित्रिद्विपूजार्थेभ्यः क्त’ इति का० ४। ८ सूत्रेण जानार्थत्वाद्वर्तमाने क्त । ८ अन्तं शब्दस्याऽत्राधिकरणशक्तिप्रधानरेकान्तात्ययत्वेनान्तो निश्चय इति व्युत्पत्तिन् युक्ता । अन्तर्गतं करणम्, करणानामन्तर्गतं वेति व्युत्पत्तिर्व्वया । ९ का० उ० स० २। १० विशिखशब्दस्य हृदयार्थं न किम-प्यन्त्रं प्रमाणमुपलब्धम् । अयोमुखपुण्डरीकाकारत्वाद्धृदयस्य शिखारहितत्वं कर्थञ्चन्नेयम् ।

जीवा । गुण्यते अन्यस्यतेऽनेन गुण । पुस्ति । गोन्यो हिता गव्या । जीयतेऽनया ज्याये । वाणासनम् । दृणा ।

अलिर्भूङ्गः शिलीमुखः ।

अमरः पट्पदो ज्ञेयो द्विरेफश्च मधुव्रतः ॥ ८२ ॥

सम भृद्गे । अलति मण्डयति पुष्पजाती । अलि । मधुना विभृत्यात्मान भृङ्ग । ४४२३-
५ भृङ्गाङ्गानि एतेऽङ्गप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । शिलीसदश शिलीसदश वा मुखमस्य शिलीमुख । अमर-
रातीति निरुक्तस्य अमर । 'शकन्ध्वादय' । शकन्धुप्रभृतीनाम अकारस्य लोपो भवति । आदिशब्दान्
नकारस्य लोपः । उणादौ 'भ्रमु चलने' । अमरतीति अमरः । देविविटिजटिभ्रमिवासिन्योऽुर ।
पट्पदानि चरणा अस्य पट्पद । द्वै रेक्षो यस्य द्विरेफः । मधु व्रतयति सुहृके मधुव्रत । मधुकर ।
पुष्पलिङ्ग । इन्दिन्दिर । पट्चरणः । पडिघ्र । चब्रीक । भसत । रोलभ्र । देश्याम् ।

१० मौर्यादिप्रान्तमल्यादिकन्दर्पस्यैक्षवं धनुः ।

इक्षाविंशति गंक्षवम् । अलिमौर्या (कम्) । भृङ्गमौर्या (कम) । शिलीमुखमौर्या (कम) ।
अमरमौर्या (कम) । पट्पदमौर्या (कम) । द्विरेफमौर्या (कम) । मधुव्रतमौर्या (कम) । यलिजीवा (वम्) ।
भृद्गजीवा (वम्) । शिलीमुखजीवा (वम्) । अमरजीवा (वम्) । पट्पदजीवा (वम्) । द्विरेफजीवा (वम्) ।
मधुव्रतजीवा (वम्) । अलिगुण (णम्) । भृङ्गगुण (णम्) । शिलीमुखगुण (णम्) । अमरगुण (णम्) ।
१५ पट्पदगुण (णम्) । द्विरेफगुण (णम्) । मधुव्रतगुण (णम्) । अलिज्या (ज्यम्) । भृङ्गज्या (ज्यम्) ।
द्विरेफज्या (ज्यम्) । मधुव्रतज्या (ज्यम्) । इत्यादीनि कन्दर्पशिलीमुख (धनु) नामानि ज्ञेयानि ।

हेतिरखाऽयुर्वं शस्त्रम्-

चत्वार शस्त्रे । द्विनोति अनया हेतिः । जियाम् । १० सातिरेनिज्ञतिथूतयश्च । एवं
क्षिप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । अस्यते द्विष्टेऽनेन्ति अस्त्रम् । आयुर्वेऽनेन आयुर्धम् । उमयम् ।
२० शस्त्रेऽनेन शस्त्रम् । ११ 'नीदाप्शसुगुयुजस्तुतुदसिसिन्मिहपतशनहा करणे' धून् । त्रमात्र । 'द्युम्नम्' ।
इति सपरगमनम् । ननु अन्येद्वृत्तिपदाभावात् धूनि प्रत्यये इडागम ऋथ भवति । आगमशास्त्रमनित्यप्राप्ति
वचनात् शसुधातोः धूनि प्रत्यये दृष्ट न भवति । 'युग्म' । पत्रे इति जापकादेव (द्वा) ।

पुष्पाद्यस्त्रः स्मरो मतः ॥ ८३ ॥

पुष्पार्यायन अस्त्रपर्यायं शरपर्यायेण तथा चापर्यायेष्वि स्मरनामानि भवन्ति । पुष्प-

१ गोन्यो बाणोन्यो हितेत्यर्थ । २ जिनाति जीयतेऽनया । 'ज्या वयोहानौ' । 'अन्येव्विद्य-
दश्यते' इति ड । ३ अल भूषणादौ । सर्वधातुम्य इन् । ४ का० उ० १४८ । ५ का० सू० वृ० ।
६ कातन्त्रोणादौ नोपलव्यम् । ७. अमरपदे रेफदयसत्वाद् द्विरेफ । ८ कन्दर्पस्य धनुरैक्षवम् । इन्द्रियांड-
निर्मितम् । अत एव काम इक्षुधनेन्तुच्यते । मौर्यादिय शब्दा अन्ते यस्य, अलि, अलिपर्याय यादौ यस्येदशा
तदधनुरिति यवाश्रुतपाठार्य । अग्निमन्त्रेण धनुर्विशेषणतया अलिमौर्याकम् भृङ्गमौर्याकम् द्विरेफ
टीकाया वन्दव्यम् । वस्तुतस्तु मौर्यादिप्रान्तमल्यादिरिति पाठो युक्त । तत्र पदार्थयोजनाऽपि सातु सगच्छते ।
अत्यादि कन्दर्पस्य मौर्यादि धनुश्च ऐक्षवम दृन्यर्व । तदुक्तम्— 'मौर्या रोलभ्रमाला वनुरय विशिखा
कौसुमा पुष्पकेतो' इति साहित्यदर्शण । टीकैषा तु यवाश्रुतपाठानुगामिनी । ९ 'हि गतो वृद्धो च ।
इय व्युपत्तिरग्निशिखार्थ वौध्या । शस्त्राये 'इन् हिसायाम्' हन्यतेऽनयेति सुवचम् । १० का० स० ४४४३ ।
११. का० सू० ४४४६ । व्यज्ञनमस्वर परवर्णं नयेत् । १२ का० स० ११०१ । इति सकारस्य
परगमनम् । १३ का० सू० ८२०३३ ।

देति । पुष्पाक्ष । पुष्पायुध । पुष्पशक्ति । सुमनोहेति । सुमनोऽक्षः । सुमनश्चक्ष । लनान्तहेति । लतान्ताक्ष । लतान्तायुध । लतान्तशक्ति । प्रसवाक्षः । प्रसवायुध । प्रसवशक्षः । उद्गमहेति । उद्गमायुधः । उद्गमशक्षः । प्रसनहेति । प्रसनाम्ब्रः । प्रसनायुधः । प्रसूवशक्षः । कुसुमहेति । कुसुमाक्ष । कुसुमशक्षः । इत्यादिकानि नामानि ज्ञातव्यानि ।

ध्वं पताका केतुरुच चिह्नं तद्वैजयन्त्यपि ।

५

पञ्च पताकायाम । ध्वंते (ति) धूयते ध्वंजः । तथामरसिहे—“ध्वंजमस्त्रियाम्” व्यजित्रि । पताकादण्डे ध्वंज दत्यन्धः । पत्यते श्रियते वातेन पताका । वलाकादयः—“बलाकापिनाक-पताकाश्यामाकशलाका” एते अक्षप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । पताका च । श्रियाम । कीयते सैन्यमनेन केतुः । “क्रत्वादय—“केन्त्रुत्रुत्वाप्तुपीत्वेधरुवहतुजीवातव.” एते त्रुनप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । चह परिकल्पने । चहयति (अनेन) चिह्नम् । विजयतेऽनया वैजयन्ती । जयन्ती च । छीद्रो । वैजयन्तः । जयन्त । १०

तत्तदन्तो झपायादिः शम्भोर्विप्रकरः स्मरः ॥ ८४ ॥

भपत्वज । भपपताक । भपकेतु । भपचिद । भपवैजयन्ति । पडक्षीणध्वंजः । पडक्षीण-पताक । पडक्षीणकेतु । पडक्षीणचिह्न । पडक्षीणवजयन्ति । सफरवज्ज । सफरपताक । सफरकेतु । सफरचिह्न । सफरवेजयन्ति । अनिमिष वज । अनिमिषपताक । अनिमिषकेतु । अनिमिषचिह्न । अनिमिषवैजयन्ति । अनिमिष वज । तिमिषताक । तिमिषकेतु । तिमिषचिह्न । तिमिषवैजयन्ति । मीनवज । मीन-११ पताकः । मीनकेतु । भैनचिह्न । मीनवैजयन्ति । पाठीनवज्ज । पाठीनपताक । पाठीनकेतु । पाठीनचिह्न । पाठीनवैजयन्ति । शुभ्मोर्विधनकर । हरविप्रकर । इत्यादिनि भरनामानि ज्ञातव्यानि ।

कौक्षेयकासिनिस्त्रिशकृपाणाः करवालक ।

तथारिमण्डलाग्रं खड्गनामावलि विदुः ॥ ८५ ॥

अष्टो घडग । कुक्षो भव कौक्षेयकः । कौक्षेय । अन्यते श्वायतेऽमि । निकान्तस्त्रिशतोऽ२० हुलिन्यो निर्स्त्रिशः । तालव्यान्त । शबून् हनुकलपते याचने कृपाणः । “कृपे काण” । करे वलते करवालः । करवाल । तरति (तर) ल्लवमान वारि यत्रेति निरुक्त्या तस्वारिः । मण्डल वर्तुलमग्र यस्य तन्मण्डलाग्रम । खण्डित परमर्मायनेन खड्ग । “खण्डिग्कू” । स्त्रीत्रा । कृष्टि । चन्द्रहास ।

अक्षौहिणी वलानीकं वाहिनी साधनं चमूः ।

ध्वंजिनी पृतना सेना मैन्यं दण्डो वस्थिनी ॥ ८६ ॥

२५

द्रादश सेनायाम । अक्षाणा रथानापूर्विनी अक्षौहिणी । “अन्यौत्वमूहिन्याम्” अौत्वम । अथवा धात्वर्थेन साध्यने भाष्यकर्ता श्रीमद्भरकीर्तिना । अश्रव्यासौ । अशुने व्यानोतीति अक्ष । “१३वृत्-

३ “ध्वं गतौ” । पचाश्च । २. अम० को० २०१०.१ ३ का० ८० श१४०। ४ का० ८० ११२८। ५ विजयते विजयन्त, विजयशाली पुरुष । आंशादिको भक्त्वप्रत्यय । भस्यान्तादेश । विजयन्तस्येय पताका वैजयन्तीति । ६ ते ते ध्वंपर्याया अन्ते यस्य भपादिमीनपर्यायश्चादो यस्य इदशस्तथा शम्भुविनकरश्च स्मर कामः । तेऽपि स्मरपर्याया । तद्यथा भप वजेत्यादि । ७ कुलकुक्षीय व्राऽस्यलङ्घरेतु” पा०स० ४२। ८। इति खड्गर्थे दक्षज् । ८ कृपा तुदति कृपाण इत्यपि । ९ का०उ०स० ५१७। १० “वल वेष्टने” जवलादित्वाणः । वलन वालो वेष्टनम । करे वालो यस्य, करेण वल्यने वोभयमप्यन्यन्त । ११ का० ८० उ० ५१२। १२. का०स० २० ११७। १३. का०उ०स० ४१५३।

वदिहनिमनिकम्यशिकपिंय स.” स प्रत्ययः । “ब्रुशोश्च”प । “पढो क २से” अक्.प । “३कपसयोगे ज्ञ.” । अद्य इति जातः । ऊहो विद्यते यस्या सा ऊहिनी । अभाणामूहिनी अद्वौहिणी । “समा-सान्तसमीपयोरसुवादे:” अस्थार्थ । समासत्य अन्ते समासत्य समीपे च नकारस्य पूर्वपदस्थान् निमित्तात् (परस्य) यो भवति वा । इदानीम् अद्वौहिणीप्रमाण कियते । यद्वारतम्—

५

“४पको रथो गजश्चैको नरा । पञ्च पदातयः ।
त्रयश्च तुरगास्तज्ज्ञैः पत्तिरित्यभिधीयते ॥
पत्त्यंगैस्त्रिगुणैः सर्वैः क्रमादाख्या यथोत्तरम् ।
सेनामुखं गुलमगणौ वाहिनी पृतना चमूः ॥
अनीकिनी”

१०

पत्तेस्त्रिगुण सेनामुखम् । गजा ३, रथा ३, अश्वा ९, पदातय १५ इति सेनामुखम् । गजा ९, रथा: ६, अश्वा २७, पदातय २५ इति गुलमम् । गजा २७, रथा: २९, अश्वा ८१, पदातय १३५, इति गण । गजा: ८१, रथा: ८१, अश्वा: २४३, पदातय ४०५ इति वाहिनी । गजा: २४३, रथा २४३, अश्वा ७२६, पदातय: १२१५, इति पृतना । गजा ७२६, रथा: ७२६, अश्वा २१८७, पदातय ३६४५ इति चमूः । गजा: २१८७, रथा: २१८७, अश्वा: ६५६१, पदातय १०९३५ इत्यनीकिनी । दशानी”-१५ किन्योऽक्षौहिणी । गजा २१८७०, रथा २१८७०, अश्वा: ६५६१०, पदातय: १०९३५० । बलने मवृणोति परभूमि बलम् । उभयम् । अनिति प्राणिति दूर्यस्वनै न नीयते पराभव वा अनीकम् । वाहा अश्वा, सन्त्यस्या वाहिनी । साध्यते (अनेन) साधनम् । परान् शत्रून् चमति ग्रसते चमूः । “५कृषि-चमितनिधनिविधिसर्जित्यजिन्य ऊः ।” चमुश्च । व्यजाः सन्त्यस्या वजिनी । नायक पिर्वति पृतना । अङ्गैः सिनोति बन्नाति सेना । “मिनोतेऽः” । सेनाया स्वार्थे यणि सैन्यम् । दायति दण्ड । वरुथो रथ-२० गुप्तिरस्त्यस्या वस्थिनी । पताकिनी । चक्रम् । अनीकिनी । “गूढः । तन्त्रम् ।

कदनं समरं युद्धं संयुगं कलहं रणम् ।

संग्रामं सम्परायाजी संयदाहुर्महाहवम् ॥ ८७ ॥

एकादश युद्धे । कद्यते कदनम् । समियूति प्रतिविकला भवन्त्यत्र नरा समरम् । युव्यतेऽत्रा गिर्मिर्युद्धम् । भटा सयुध्यन्ते मिलन्त्यत्र संयुगम् । कल मधुर वाक्यं हन्त्यत्र कलहः । रणन्ति दुन्दुभयोऽत्र रणम् । सग्रस्यन्ते सत्वान्त्यनेति स ग्रामः । पुसि । सपरैति मृत्युरत्र सम्परायः । भटा अज्यन्ते त्रिव्यन्ते त्रिव्यन्ते आजिः । त्वीत्रोः । स यतन्तेऽत्र तान्त संयत । महोर्चासो आहव । महाहव । तम् आहुः

१ का० स० ३।६।६०। २ का० स० ३।८।४।३ ‘कषयोगे ज्ञ’ । का० र० प० २५६ स० । ४. प्रथम. श्लोको महाभारत उपलभ्यते । तस्योपलब्धिस्तु द्वितीयव्याये पञ्चदशश्लोकत्वेन । इतरस्तत्र नोपलभ्यते । तत्र “एको रथः” इति श्लोकानन्तरम्—“पत्तिन्तु त्रिगुणामेतामाहु सेनामुख त्रुधा । त्रीणि सेनामुखान्येको गुल्म इत्यभिधीयते । त्रयो गुल्मा गणो नाम वाहिनी तु गणान्नय । स्मृता-स्तिस्ततु वाहिन्यः पृतनेति विचक्षणैः ।” चमूस्तु पृतना स्तिस्तिस्तस्त्रम्भस्त्रवनीकिनी । अनीकिनी दशगुणा प्राहु सेनामुख त्रुधा । ॥ इति । श्लो० १६, १७, १८ । ५ अभिं च० २।४।६ । ६. का० उ० स० १।३।१ । ७ का० उ० स० ६।३।६ । ८. गूढशब्दस्य सेनायेऽन्यत्र प्रमाण मृथ्यम् । ९. “कद वक्लव्ये” । कद्यते विक्लूयतेऽनेनास्मिन्वा । करणोऽधिकरणो वा ल्युट् । १० सद्ग्राम युद्धे” । सद्ग्रामयन्तेऽत्रेति । हेमचन्द्र । सङ्गामण सङ्गाम इति रामाश्रम । ११ आद्यन्ते योद्धारोऽत्रेत्याहव ।

ब्रुवन्ति । आयोधनम् । जन्यम् । प्रधनम् । प्रविदारणम् । मृथम् । आक्नदनम् । सख्यम् । समीकम् । अनीकम् । विग्रहः । समुदाय । अभ्यागम् । सस्कोटिः (ट.) । समितिः । समित् । दन्धम् । सगर्दः । सगरः ।

गजो मतङ्गजो हस्ती वारणोऽनेकपः करी ।

दन्तो स्तम्बेरमः कुम्भी द्विरदेभमितङ्गमाः ॥ ८८ ॥

शुण्डालः सामजो नागो मातङ्गः पुष्करी द्विपः ।

करेणुः सिन्धुरः—

५

विशतिर्गजे । गजति मावति गजः । अच् । मतङ्गादैर्जतो मतङ्गज । “सतमीपञ्चम्यन्ते जनेई^३ । हस्ती विद्यतेऽस्य हस्ती । “जातौ तु दन्तहस्ताभ्या करान्चैव इनेव हि” । वारयति परान् शत्रून् वारण । न एकेन विवर्त्यतेऽपः । करोऽस्यस्य करिन् । इदन्तोऽपि करि । दन्तो विद्यतेऽस्य १० दन्ती । स्तम्बे नृणे रमते स्तम्बेरमः । “स्तम्बकर्णयो रमित्पो” लच् । कुम्भो विद्यतेऽस्य कुम्भी । द्वौ रदौ यस्य द्विरट । एति गच्छति शत्रुसम्मुखमितीभ । “इणा” यवत् भग्रत्ययो भवति स च यवन् । मित गच्छतीति मितङ्गमः । “गमेरच^४” लप्रयय । “ह्रस्वा स्योमोन्त ०” । शुण्डा लाति गृहातीति, शुण्डालास^५ । साम्न^६ सामवेदाज्जात साम्नज । नगे पर्वते भवो नाणः । मन्यते जनेन मातङ्गः । पुष्कर विद्यतेऽस्य पुष्करी । दाया पित्रिति द्विपः । करोति कार्यं करेणु । “हृक्षत्र्यामेणु”^७ । १५ आयामेणुः प्रत्ययो भवति । स्यन्ते सवति मः सिन्धुर^८ । दन्तावत । पर्णी^९ । पीलु । कालिङ्ग ।

तेषु यन्ता याता निषादापि ॥ ८९ ॥

त्रयो हस्तिपके । यच्छतीति यन्ता । यातीति याता । निषीदति इत्येवशीलो निषादी । गजयन्ता । गजयाता । हस्तियन्ता । हस्तियाता । इत्यादीनि जातव्यानि । अपिशब्दात्—आधोरण । हस्तिप । इत्यारोहः^{१०} । गजाजीव । महामात्र ।

२०

नागाद्वारिः कण्ठी^{११} (णिं) रवो मृगेन्द्रः केसरी हरिः ।

चत्वारः सिहे । नागारि । गजरिपु । मतङ्गवैरी । हस्तिडिट् । वारणवैरी । अनेकपसप्तन । करिपिपु । दन्तिवैरी । स्तम्बेरमिपुः । कच्चिद्दश्यते ईद्वग पाठः । कुम्भवैरी । इभवैरी । मतङ्गशत्रुः । शुण्डालरिपु । सामजदेपी । नागारि । पुष्करिपुः । द्विपवैरी । करेणुरिपु । सिन्धुरवैरी । इत्यादीनि २५ पर्यायनामानि सिहस्य शातव्यानि । कण्ठे रवो व्विनिर्यस्य करण्ठीरव ।

२५

१ गजति मावति गर्जति वा गजः । २. का० स० ५।३।११। ३ का० स० २।६।१५। दृक्तिः । ४ का० स० ४।३।१६। ५. का० उ० स० २।२६। ६ का० स० ३।३।४५। ७ का० स० ४।१।२२। ८ शुण्डाऽस्त्वस्येत्यपि । ‘प्राणित्वादातो लजन्यतरस्याम्” पा०स० ५।२।१६। इति मत्वर्थीयो लच्चत्रय । ९ सामवेदो हि गीतपरः । तत्स्वरेण समाकृष्टा हरितनो बद्धा अभवन । बद्धाश्राकृष्ट जनपदे समानीता । गीतमूढा यतो बद्धसमानीता । अत एव सामजा इत्युच्यन्ते । इति सङ्गति । प्रमाणान्तरमपि मृग्यम् । सामवेदमुच्चारयन् विधिग्रंजान् सपर्ज । सामा सह जातत्वात्सामजा इति । १० का० उ० स० २।६। ११ स्यन्दधातोरकमकृत्वात्सवति मदमित्यर्थश्चिन्तनीय । १२. अत कल्पतुकोष १५।१४। प्रमाणम्—“करी मतङ्गः पद्मी सूर्यकर्णो लतारस” । इति । १३. क्लन्दो भङ्गभियाज्ञत्र कण्ठिरव इति पाठ प्रतिभाति । वर्णांगमो गवेन्द्रादावित्येकारस्य इकार ईकारश्च विधेय ।

“‘वर्णागमो गवेन्द्रादौ सिहे वर्णविपर्ययः ।
षोडशादौ विकारम्तु वर्णनाशः पृष्ठोदरे ॥’”

इत्यनेन एकारस्य इकार । मृगाणा चतुष्पदाना मध्ये इन्द्रः सूर्योन्द्रः । केसरा, स्कन्धकेशा-
तन्त्यस्य केसरी । कमप्राप्ते हरति ३हरि । पञ्चानन । हर्यक्ष । नखरायुध । मुगरिपुः । मिह ।

५ व्याघ्रश्चमूरः शार्दूलः-

त्रयो व्याघ्रे । व्याजिति प्राणान् उगादते व्याघ्र । चमति अति पश्चन् चमूर । परान्
शृणाति हिन्मिति ३शार्दूल । द्वीपो । पुण्डरीकः । तरक्षु । चित्रकाय । मृगारिः ।

अरभोऽष्टापदोऽष्टपात् ॥ ६० ॥

त्रयोऽष्टापदे । शृणाति हिन्मिति शरभ । “४कृशुगलिगदिरासवलिवहिंशाभम्” । अष्टां
१० पदान्त्यस्य अष्टापदः । अष्टो पादा यस्यांश्च अष्टपान ।

क्रोडो वराहो दंष्टी च घृष्टिः पोत्रो च शृकरः ।

अष्टा (पट्) शृकरे । पत्वल सक्रमति क्रोड ॥ । वरानाहन्ति वराह ५ । दशा सन्त्यस्य दधी ।
घर्षतीति घृष्टिः । घृष्टिश्च । पूरुष वरने । पूरु । भारो । पूरुष वरने वा । क्रौं । उभयवदी । पृथते नेनेति पोत्रम्
“६हलशूकरया पुवः” पूरु । त्रमात्र । नाभ्यन्तगुण । मिं नप० । पोत्रमस्यस्य पोत्रो । सते प्रचुग-
१५ पत्वानि, अव्यति वर्यते वा गीनत्वेन सृकर ६ । शृकरश्च । दन्त्यतालव्य । कोल । किं । किरिच्च ।

उष्टो मयः श्रुत्यलिकः कलभः श्रीघ्रगामुकः ॥ ६१ ॥

पञ्चोऽप्ते । उप्यते दक्षते मरी उष्टु । “७सर्वधातुन्य पूर्न्” । मर्यते गच्छति मयः ७ । मर्यते
इत्येके । शङ्खल वन्धनमस्य शृद्धूखलिक १२ । क शिरो रमते उन्नमयतीति कलभः । करभश । शीश
गच्छतीति श्रीघ्रगामुक । दासेगक । दीर्घजद्वा । ग्रीवी । रवण । धूप्राको (धूपक) ।

२० कौलेयकः सारमेयो मण्डलः इवा पुरोगतिः ।

जिह्वापो ग्रामशार्दूलः कुकुरुगे गत्रिजागरः ॥ ०२ ॥

नव सारमेय । कुले यह भव कौलेय १३ (यक) । सरमाया अवत्य सारमेग । मण्ड लाति
मरण्डल । चारादीन् श्वयति गच्छति इवा । श्वानोऽदन्तोऽपि । पुरो गच्छति पुरोगति । ८९जिह्वा शरीर

९. ‘पृष्ठोदरादय’ इति शा० न० २१२१७२। कारिका । २ प्राणान् इरतीत्यता-
वानेवान्त्रय । ३. यदवा शारयतीति शार । क्रिपु । दूषते इति दूल । अन्तर्भावितणिजयो दूल । शार-
चासौ दूलश्चेति विग्रह । ४. का०उ०य० ३।११।५ “कुड घनत्वे” । क्रोडन घनत्व सोऽस्यास्तीति क्रोड ।
“यर्श आश्च” इति रामाश्रम । ६ वरमाहन्तीति वर आहारो यस्येति वा पृष्ठोदगादित्वात् । ७ का०स००
४।२।६।८ सुव प्रसव करोतीति । शक्तोऽस्यम् शूकर वररोमत्वात् । शूक राति वा । शृङ्गित्वनि
करोति वा । ९. वष्टि इच्छति कण्टकिवृक्षादन मरुभूमि वा इति उष्टु । “सर्वधातुन्य पूर्न्” इति का० उ०
१।२।६। स्त्रै दुर्गसिह —“वशा कान्तो” । वष्टिति उष्टुः करभः । अस्य इन्नन्तस्य सम्प्रसारण निपातना-
न्पन्ध च । दत्याह । १० का०उ०य० १।३९। ११ मीनायदीन् मय । ‘मीज् हिसायाम्’ । पचाश्च ।
उत्ति वा । १२ शृद्धूखलमस्य बन्धन करभे” पा० स० ५।२।७। १३ इति कन् । नेन शृद्धूखलक हात माधु ।
“म तु शङ्खलक कष्टमयै स्यात्पादबन्धनै” । इति अभिं च० । १४ “कुलकुक्षिग्रीवान्य श्वाऽस्यलङ्घारेतु”
पा० स० ४।२।९।६ । इति श्वाऽर्थे दक्ष । १५ जिह्वा रसनया पिवतीति विग्रहः सुवच । जिह्वया शरीर
पानीत्यपि सम्बवति ।

पाति रक्षति जिहाप । ग्रामाणा शारूलो व्याप्र आमशारूल । कुक् शब्द करोतीति कुक्कुर १ । कुर् शब्दे । कुकुरश्च । रात्रौ जाग्रति रात्रिजागर । लेड्वह । तुक्कण । भषण । मृगदश । शालावृक् ।

हेम चाषापदं स्वर्णं कंनकार्जुनकाञ्चनम् ।
सुवर्णं हिरण्यं भर्मं जातरूपं च हाटकम् ॥ ६३ ॥

३

तपनीयं कलाधौतं कार्तस्वरशिलोङ्गवम् ।

पञ्चदशा स्वर्णे । हिनोति वर्धतेऽनेन हेमन् । नान्तम् । अदन्त हेम च । अष्टसु लोहेसुपद प्रति-
ष्ठास्य आषापदम् । “अष्टनः” सजायाम् । इति दीर्घ । शोभनो वणास्य स्वर्णम् ।
उकारलोपः । अथवा समासे वर्णस्य वा वलोपमादुः । यथा पञ्चाण्या मन्त्रः । कनति दीर्घते कनकम् ।
‘कर्निचनिन्यामक २’ । कनी दीपिकान्तिगतिपु । अर्जु सर्ज अर्जने । अर्जतीत्यर्जुनम् ३ । “अर्जुतवृत्यमि-
दार्यर्जिन्य उनः” । काङ्गति शोभा बनाति काञ्चनम् । शोभनो वणा यस्य सुवर्णम् । उभयम् । पुण्य जिहीते
हिरण्यम् । अथवा ओहास्त्वयोगे । हायने हिरण्यम् । ‘हो-हिर्ष’ अस्मादन्य प्रत्ययो भवति
हिरादेशश्च । भ्रियते धार्यते नान्तम् भर्मन् । अदन्त च भर्मम् । जातरूप यस्य जानरूपम् । झीवे ।
नवा च ‘यशस्तिलके—“असङ्गम्यहोऽपि जातरूपस्यह ।’ हटति हाटकम् । हट दीपा । अग्निना
नायते तपनीयम् । कला धावति गच्छति कलधौतम् ४ । कृतस्वराकरे भव कार्तस्वरम् । शिलाया-
नामाणाद्वावा यस्य शिलोङ्गवम् । शतकुम्भम् । गाङ्गेयम् । कवरम् । चामीकरम् । महारत्नम् ।
स्कमम् । रूपम् । जग्ननदम् । कल्याणम् । गिरिक । चन्द्रवसु च ।

स्पृणं रजत गुलिका-

त्रयो रूपे । रूपयते जना मुहूर्तेऽनेन रूपयम् ५ । जन रजति रजतम् । रजयते हेमना रजत वा ।
रुठ रक्षायाम् । गुडिति रक्षति आपद समाशाद् गुलिका । गुडिका च । कलाधौतम् । तारम् । सितम् ।
दुर्वर्णम् । खर्जरम् । शवनम् ।

२०

शुक्रिज मांकिकं तथा ॥ ६४ ॥

द्रौ मांकिके । गुक्या जलादियानोपकरणद्यविगेषाज्जातम् शुक्रिजम् । मुक्ताना समृद्धो
मांकिकम् । समृद्धये इकण् ।

वित्तं वस्तु वसु द्रव्यं स्वार्थं ग द्रविणं धनम्-

कस्वरं

२५

दश धने । विन्दति पुण्यकृत वित्तम् । धात्वयेन व्युत्पत्तिः क्रियतेऽमरकीर्तिना । ‘विद्लु लाभे ।
विद् । वित्रये स्म सुज्यते (स्म) वित्तम् । निष्ठाकः । ‘भित्तर्णवित्ता ६ शकलाधमर्णमोगेषु’ वित्तमिनि

१. कुक् इति शब्द कुरति उच्चारयतीति विग्रह । इगुपधत्वात्कप्रत्यय । यदा कोक्ते
उच्चारिकमादत्ते कुक् । ‘कुक् आदाने’ । ग्रिप् । कुरति शज्जापने कुर । कुक् चामौ कुरश्रेति
विग्रहः । २ पा० स० ६।३।१२५ । ३ का० उ० स० ३।४६ । ४ अर्जयते पुण्यर्जुनम् । ५ का०
उ० स० २।६० । ६ का० उ० स० ३।३ । ७ अकृतकरूपमित्यर्थ । अथवा प्रशस्त जात जातस्यम् ।
प्रशमाया रूपपत्त्यय । ८ मुद्रत्तमूनवर्णने आ० । ९ हाटकाकरप्रभवत्वाद् वा हाटकम् । १० कला
सुवर्णकलिका धौता । गता धावति गच्छति वा यस्मादिति कलधौतम् । ११. रूप रूपक्रियायाम् । प्यन्त ।
अच्चा यत् । १२ का० स० ४।६।१।१४।

निपातः । निपातस्येऽन भवति । “दाहस्यु च” तो नो न भवति । वसति सुखमनेन वस्तु । “कमि॒-
मनिजनिविहित्यश्च” एव्यस्तुन् प्रत्ययो भवति । वसति सुखमनेन वस्तु । “पय॑सिवसिहिनिमनि-
त्रपीनिकन्दिनिप्रवायश्च” एव्य एकादशम् उ प्रत्ययो भवति । द्रूयते गम्यते द्रव्यम् । पर स्यति
अन्ते नयति अथवा पुण्य स्वनिति स्वः^४ स्वम् । उमयम् । पुण्यकृतमियर्थि अर्थम् । गुणान् राति इः ।
“राते^५ डैः ।” ज्ञीत्रा । द्रूयते गम्यते द्रव्यिणम् । द्वाधाति धारयति सारत्व धनम् । कश गतौ । कशतोत्त्वेव
शील कस्थरम् । “कसिपिसियथासीशस्थाप्रमदा च” वक्रप्रत्ययः । युम्न । सारम् । स्वापतेयम् । शृ-
कथम् । रिक्यम् । हिरण्यम् । विभवः ।

तत्पति प्राहः कुवेरं चेकपिङ्गलम् ॥ ६५ ॥

वैश्रवणं राजराजमुत्तराशापतिं तथा ।

१० अल्कानिलयं श्रीदं घनपर्यायदायकम् ॥ ६६ ॥

सप्त कुवेरे । तथ्य पतिः तत्पतिः कुवेरं प्रादृश्वर्बन्ति । वित्तपतिः । वसुपति । वस्तुपति ।
द्रव्यपति । स्वपति । ग्रथपति । रा(रं)पति । द्रविणपति । धनपति । कस्वरपति । इत्यादिपर्यायनामानि
कुवेरस्य जातव्यानि । कुत्सितो वेरो देह कुञ्जत्वाद्यस्य स कुवेर । पिण्डलेकनेत्रावादेकपिङ्गलः । विश्र-
वसोऽप्यमणि शिवादित्वात् । राणादेशो वैश्रवणः । राजा यद्वाराणा राजा राजराजः । उत्तरगशाया पति
१५ उत्तराशापतिः । अलका निलयो गृह यस्य अलकानिलयः । श्रिय दयते श्रीद । धनपर्यायदायक ।
धनदायक । धनद । वित्तदायकः । किंतद । वसुदायक । वसुदः । द्रव्यदायक । द्रव्यद । स्वदायक ।
स्वद । ग्रादायक । ग्रदः । द्रविणदायक । द्रविणदः । कस्वरदायक । कस्वरदः ।

राष्ट्र जनपदो निर्गो जनान्तो विषयः स्मृतः ॥

पञ्च जनपदे । राजते राष्ट्रम् । तथा च सोमनीतौ—“पशुधान्यहिरण्यसपदा राजते शोभते इति राष्ट्रम्” । जनी प्रादुर्भावे । जन् । जायते कश्चित्तमन्ये प्रयुक्तते । “धातोश्च हृतौ” इन् प्रत्ययः । अस्योप० दोषं । जानिरिति जातम् । “जनिबृयोश्च” हस्तः । जनि जातम् । जनयन्ति प्रजा धनमिति जना । “अच्च पचादिष्य” अच्च प्रत्यय । “कारितस्याना०”^{११} कारितलोप । पद गतौ । पद् । जनैर्वैराश्रिम-लक्षणैै पद्यत गम्यते प्रायं यते आश्रीयत इति जनपद । “अच्च पचादे”^{१२} अच्च प्रत्यय । जनपद इति जात । तथा च सोमनीतौ—“जनस्य वर्णाश्रमलक्षणस्य द्रव्योत्पत्तचर्चा स्थानार्मान्ति जनपदः”^{१३} निर्गम्यते यस्मिन्निति निर्ग । “निर्गो”^{१४} देशोऽधिकरणो इति डप्रत्यय । देशाद्यन्तं निर्गम्यते यस्मिन्निति निर्गमनो गिरि । बनानामत्तां निकटं जतान्त । पिन् बन्धने । “धात्वादे”^{१५} प सः” सिंविप० । विपिष्वन्ति अस्मिन्निति विषय । “पुसि सजाया०”^{१६} षष्ठीः ‘नाम्य०”^{१७} गुणः । “ए०” अय् तथा । च सोमनीतौ—“विष्वधवस्तप्रदानेत्र स्वामिनः सद्याज्ञि गजान् नव्यजिनश्च सिंतेति बधनातीति विषयः”^{१८}

पूः पुरी नगरं चैव पद्मनं प्रटभेदनम् ॥ ६७ ॥

४ का० सू० ४४६।१०२। २ का० उ० सू० १।२७। ३ का० उ० सू० १।६। ४ 'पोडन-
कर्मणि'। वप्रत्यय। 'स्वन शब्दे' उप्रत्ययो वा। ५ का० उ० सू० २।२७। ६ का० सू० ४।४।५७।
७ जन० सम० १।८ का० सू० ३।२।१०। ८ का० सू० ३।४।६।७। १० का० सू० ४।२।५।८। ११ का०
सू० ३।६।४।४। १२ घन्त्रये कविधानम्, पुसि सजाया घः इति कर्मणि कप्रत्ययो घप्रत्ययो वा वक्तव्य।
न तु पचाश्चन्, तथ्य कर्तरं विधानात्। १३ जन० सम० ५। १४ हेणश० ५।१।१।३।३। १५ का० सू० ३।१।८।४।
१६ का० सू० ४।५।६।६। १७ का० सू० ४।५।६।१। १८ का० सू० १।२।१।२। १९ जन० सम० ३।

धट् (पञ्च) नगरे । पृष्ठ पालनपूरण्योः । पृ० । कै० । पृष्ठातीत्येवशीला पू० । ‘किञ्चन्नाजिपृष्ठुर्बिभासाम्’ क्रिपु । “उरोष्ठोपधस्य च” उर् । पुर् जातम् । “नमिनोर्वोर०” पूर् । वेलोप४ । सि । “व्यञ्जनाच्च” सिलोप । “रेफसोर्वितर्जनीयः” रस्य विसर्गः । पृ० । अदन्त । पुर् पुरी च । हृदन्तोर्पिपुरि । नगा० सन्त्यत्र, ग्राम्यत्वं नव्यत्यत्र वा नगरम्० । झीबे । नगरी च । नानादिरंदेशागताना वृणिजा भावानि पतन्त्यत्र पत्तनम् । पठन च । अत्र स्मृतिमेद —

“पट्टन शक्टेर्गम्य घोटकैनौभिरेव वा ।
नौभिरेव तु यदुगम्य पत्तन तत्प्रच्छाते ॥”

पुटा वासा भिवन्नेत्र पुटमेदनम् । क्लीबे । अधिष्ठानम् । निगमः । द्रङ् । स्थानीयम् ।

वक्त्रं लप्तनमास्यं च वदनं मुखमाननम् ।

परमग्ने । वच परिभापणे । उच्यतेऽनेन ब्रह्म । 'सर्वधातुः' ९ पून् । रप् लप् जल्प् व्यत्ताया १० वाचि । लायतेऽनेन लपनम् । युट् । अःयतेऽमिन्नास्यम् । '१०कृत्यल्युटो चदूल' मिति व्यच् । बद व्यत्ताया वाचि । उद्यतेऽनेन बदनम् । महिति मुत्तिति भूत्रेण वा मुखम् । खन्त्येवा मुखम् । उणारो । मुख १५ त्वं तक्तियाम् । चाँरादिक्त्वादिन् । मुख्यति अन्नादिखादनेनेति मुखम् । 'सुखेः' १५ को मुखिश्च । मुखे क प्रत्ययो भवति धातोर्मिलिश्च । इकार उच्चारणः । आ अनिति श्वसित्यनेन आननन् । तण्डम् ।

श्रवणं श्रोत्रं श्रवश्चापि कर्णं चैव श्रति विदुः ॥ ६८ ॥

पञ्च कर्णे । श्रूयतेऽनेन श्रवणम् । श्रूयतेऽनेन श्रोत्रम् । कलीप । श्रूणोत्यनेन सान्तम् श्रवः । कर्लवे । करोति शब्दावधान कर्णः¹³ । कर्णयन्ति वा कर्णे । लिङ्ग कर्णभेदे । श्रूयतेऽनया श्रुतिः । निश्चियम् । विदुः कथयन्ति ।

दग्धिं चक्षन्यनं दृष्टिर्नेत्रं विलोचनम् ।

सम नेत्रे । दृश्यते नया हक् । तालव्यान्तः । अश्रु व्यासौ । अश्वनते व्यानोत्यनेनात्मा घटादीन- २०
र्थनिति अस्ति । 'अश्वकुपिया सिक्' । चण्ठ हृदयाकृत सान्तम् चश्च । 'ऋपविचक्षिजीव-
तनिधनिंय तस्' । नीयते चिन्त विपरेयु अनेन नयनम् । दृश्यते प्रकटार्थान्तर्या हप्ति । नीयतेऽनेन
दृश्य नेत्रम् । उभयम् । विशेषणं लोक्यते अवलोक्यनेन विलोक्यनम् । अक्षम् । तारका । ज्योति ।

कटाक्षं केकरापाङ्गं विभ्रमस्तस्य वैकृतम् ॥ ६६ ॥

तस्य नेत्रस्य वक्तुते पद् (पञ्च)। कट्यतीति १५ कट्टाक्षम् । उभयम् । के (शिरसि) २५

१ का० सू० ४।८५७। २ का० सू० ३।८५।४३। श्रूत्कारस्योत्तम। ३ का० सू० ३।८।१। इति
दीर्घ। ४ का० सू० ४।१।३।४। ५ का० सू० २।१।४। ६ का० सू० २।३।६। ७ “नगपासु-
पाण्डुयश्चेति” पा० सू० ५।२।१०। ८ वार्तिकेन मत्वर्थायोः रः। अथवा नशु धातोरेणादिकोऽस्पत्यव्यः
शस्य गत्वे च। ८ का० उ० सू० १।३।१।९ आस्यन्दतेऽप्लादिना प्रस्वत्यत्रेति। १० “कृत्यल्युदोऽ-
न्यत्रापि” इति का० सूत्रम्। ४।५।९।२ टीकोक्त्यथाश्रुतसूत्रनु पाणिनीयम् ३।३।१९।३। ११ खन्येऽ-
वदार्थते फलादिकमनेनेयपि। “दिन्वनेमुट् चौदातः” उ० अच् स च डिट् सुमागमश्चेत्यन्यत्र। “मुटि-
तानि खानोद्दिग्रायाप्यत्येके” इति क्षीर० स्वा०। १२ का० उ० सू० ६।६।५। १३ टीकोक्त्विग्रहै करोतेरेणादि-
दिको णग्रन्थ्यः। कीर्यते शब्दग्रहणाय क्षिप्तते, कीर्यते शब्दोऽस्मिन्निति वा, किरति शरीरे सुखमिति वा।
१४ का० उ० सू० ६।५।७। १५ का० उ० सू० २।४।६। १६ कटेऽप्तुश्चितेऽक्षिणी यत्र, कट गण्डमक्षति
व्यानाति वैति रामाश्रम। कटे आच्चिपतीति ज्ञारस्वां।

किरति विक्षेप क्षिपतीति (कर्षतीति) केकर । न पति कामिनमपाङ्ग १ । उभयम् । विभ्रमण विभ्रम । विकृतम्य भावो वैकृतम् ।

दन्तवासोऽधरोऽप्योष्टे वर्णितो दशनच्छदः ।

चत्वारश्चतुर्ये ओष्ठे । दन्ताना वासो दन्तवासः । अवति शोभामधरः । 'ओषो' भवोऽधरो ५ वा । ओषांश्च सहितावधरी वा । अधरोऽप्योष्टामत्रे वर्तते । उपति दहति सप्तनीहृदयमोष्टः । उप्यते तीक्ष्णाहारेणौष्टो वा । वर्णित कथित । दशनस्य छदो दशनच्छदः ।

शिरोधरो गलो ग्रीवा कण्ठश्च धमनी धमः ॥ १०० ॥

पङ्क गले । शिरो धरति शिरोधर । शिरोधरा च । गलति भोजन गल । ग्रणाति ग्रिरति वा १० ग्रीवा । उणादा गृश्वैर्द ग्रणातीति ग्रीवा । 'शर्वजिह्वाग्रीवा' २ एते क्षप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । कण्ठति कण्ठः । 'कणोषुः' ३ अस्माद्प्रत्ययो भवति । धमः सौत्रो धातु । धम्यतेऽनया धमनिः । इदन्त । ब्रियामी । धमनी । धमति धमः । मन्या । कन्धरा ।

दोरोषा च भुजो वाहुः-

चन्वारो वाही । दम्यते विनीयते परोऽनेन दोः । सान्तम । 'दमेंडोस्' । दूपयति दुष्ट या इति २५ दोषा । आदन्त । अव्ययः । न व्ययते । मुज्ज्वतेऽनेन भुज । निपातनात् चजोः कगत्व न भवति । नामिन इति गुणव्य न भवति । भुजन्युवृच्छा ४ पाणिरोगयोः इत्यमिन्नर्थे निपातनात् । सुजा च । बहस्तनेनेति वाहुः । 'विहिस्वदि' (रहि) तलि पश्चिम्य उण् । प्रकोष्ठ ।

पाणिर्हस्तः करस्तथा ।

त्रयो इस्ते । पणायते व्यवहरत्यनेन पाणिः । ५ 'अजिजन्यतिरश्चपणिः' एव्य इति भवति । हस्ते हस्तः । 'हसेत्त' । कीर्यते क्षियतेऽनेन करः । शयः । शम् ६ इत्यन्यः । पञ्चशाखः ।

२० प्राहुर्वाहुशिरोऽमश्च-

वाहुशिरसो अस इति सज्जा प्राहुः कथयन्ति । अस्यते भारेणामः ७ । स्कन्धव्य ।

हस्तशास्वा कराङ्गुलिः ॥ १०१ ॥

हौ अद्गुल्याम । हस्तस्य शाखा इव हस्तशास्वा । आकुञ्जनादिकर्माणिं अङ्गुति गच्छन्ति अङ्गुलम् । ओक्लीवे । अङ्गुली । कराङ्गुलिः ८ कराङ्गुलिः । एवमद्गुरम् । अद्गुरी ।

२५ नासा ग्राणम्-

१ अपाङ्गतीत्यपाङ्ग । 'अग्नि गतौ' । ग्रच् । २ 'अधो भव' इत्यार्थ्य 'वर्तते' इत्यन्ते द्वीर म्बामिभाष्यमत्रोद्धतम् । तद्राघ्ये 'ओषाधरो तु' इत्यमरोक्तमूलपदस्य व्याख्याल्पम् । 'ओषांश्च सहितावधरो' इति वाक्यमन्धानुसरणेनात्रोद्वृतमपत्तुतमिति विवेक । ३ दन्ताश्छायन्तेऽनेति तदाशय । पुसि सज्जाया घः । ४ का० उ० सू० २।२।५ का० उ० सू० १।४।२।६ का० उ० सू० १।४।२।७ का० सू० ४।६।६।८ का० उ० सू० १।३ । ८ का० उ० सू० १।६।१० का० उ० सू० १।२।७ । 'मृगवा-हस्तमिदमिलपूर्यस्तः' इति पूरण सूत्रम् । ११ अत्र प्रमाणम्—'पाणि शयः शमो इस्त' इत्यमरमाला । 'पञ्चशाखः शय शमः' इति अभिं चिं । १२ अस्यते समाहन्यते इत्यर्थः । 'अस समाधाते' । अस धातुशुरादि । यद्वा 'अम गतौ' अमति अस्यते वा अस । ओषाधिक सन्प्रत्यय । १३ अद्गुल इत्यत्र 'अङ्गुरुल' का० उ० सू० ६।४।८।१ इत्यङ्गुलातोरुलप्रत्यय । अङ्गुलिशब्दं तु 'अङ्गुयतिन्यामुलीय' का० उ० ३।३।० इत्युलिप्रत्ययः । क्षियामी । अङ्गुली इत्यपि ।

द्वौ नासिकायाम् । नासते शब्दायते नास्यतेऽनया वा नासा' । नेस्ना' च ॥ जिघत्यनेन घाणम् । झीबे । सिङ्गनी । नासिका । धोणा ।

उर्गे वक्षः

द्वौ भुजमव्ये । अर्यते गम्यते उर ३ । ४ 'अर्तेऽश्रु' अस्मादसुनप्रत्ययो भवति अस्य उरादेशो भवति । शु गतौ । अस्य धातों प्रयोग । वक्ति वार्णी वक्ष । ५ 'वन्ने' १ सोऽन्तश्च' अस्मादसन् प्रत्ययो भवति सोऽन्तः । अकार उच्चारणार्थः । ६ 'चवर्गस्य किः । ७ 'निमित्तादि' त्यादिना पत्व च ।

कुक्षिः स्याज्ञठरोदरम् ।

त्रयो बठरे । कुपति (कुष्णाति) निष्कर्पत्याहार कुक्षिः ८ । पुमि । कुक्षम् । झीबे । जमति जठरम् । अथवा जठ सौत्रोऽय धातु । उणादौ निपातोऽस्ति । उनत्ति क्लेदयत्याहारमुदरम् । एते १० उभयम् । पिचण्डम् । तुन्दम् ।

स्तनः पयोधरकुचो वक्षोज इति वर्णितः ॥ १०२ ।

चत्वारं कुक्षां । स्तन्यते बालैः १ 'स्तनः । पयो धरतीति पयोधर' १० । कोचते छी मृद्यमानेऽत्र, कुच्यते मर्तनेन आकुलीक्रियते वा कुचः । कूचश्च । वक्षमि जातो वक्षोज । उर्रसजः । वक्तोऽहः ।

कटिनितम्बं श्रोणी च जघनं-

चत्वारं कट्याम् । कट्यते वस्त्रैराच्छायते कटि । कटी । कट । कटम् । नितरामतिशयेन तम्यते काड्यते ११ 'नितम्बः' श्राशीयते कमिभिः श्रोण । नदादित्वादीः श्रोणी । उदन्तोऽपि श्रोणिः ११ छियामी । श्रोणी । इन्ति चिन्मिति जघनम् । १२ 'हनेजंघश्च' । चकारात् काञ्चीपदम् । कलत्रम् । कटत्रम् । जघनम् । ककुञ्जाती । आरोहः । कटीरम् । त्रिकस्थानकम् । स्थानपदाभावेऽपि त्रिकम् । फलक च ।

जानु जहु च ।

द्वौ जानो । गन्तु जायते जानुः १४ । १५ 'क्वापाजिमिस्वदिसायशूसनिजनिचरिचटिभ्य उण्' । जहानि १६ जहु । श्राशीवान् । जहा १७ ।

चलनं चरणं पादं क्रमोऽहित्थ पद विदुः ॥ १०३ ॥

१ 'णान् शब्दे' । नाम् धातु । अच्च धन् वा । २ नेदमतोऽन्यत्र समुपलब्धम् । ३ अर्यते गम्यते वलेनेति शेष । अथवा उरम् बलार्थं कण्ड्बादि । उरस्यति बलमाहते उर । विप् । ४ का० उ० स० ४१६७ । ५ का०उ०स० ८१६२ । ६ का०स० ३१६५५ । 'चवर्गस्य किरसवर्णे' । इति पूर्णं सूत्रम् । ८ 'कुप निष्कर्म' । 'अशिकुपिभ्या सिक' का०उ०स० ६४५७ । ९ 'स्तन गदी शब्दे' स्तनति कथयति यौवनोदयम् । भृत्यते वर्णते कामुकैर्वा स्तन इत्यन्यत्र । १० धरतीति धर । पचायन् । पयसो धरः पयोधर । इति वौध्यम् । टीकोक्तविग्रहं तु कर्मण्यणि पयोधार इति स्यात् । ११ तम्ब गतौ' नितम्बति गच्छतीति, निभृत तम्यते कामुकैः निभृत ताम्यति सुरतसमदात्वा नितम्ब इति रामाश्रम । १२ श्रूने किङ्गिणिध्वनिरत्र 'शु श्रवणे' श्रोणादिको णि । इति हेमचन्द्र । 'श्रोण मङ्गाते' श्रोणति विविधशरीरावयवै सङ्गातोभवतीति श्रोणिः । 'सवधातुम्य इन्' इति रामाश्रम । १३ का० उ० स० २१३७ । १४ जायते नेनाकुञ्जनादि जानुरिति हेमचन्द्रः । १५ का०उ०स० १११ । १६ नात्र कोपान्तरप्रसाणमुपलब्धम् । १७ यद्यपि जानोरघ आगुल्कान्त जह्ना, जह्नाजघनयोः सन्धिर्जानुरिति भेद । तथापि जह्नासामीप्याद् भेदाविवक्ष्या जानु-पर्ययो जड्हेत्युक्तम् । तत्र भेदस्तु न विष्वर्त्तयः ।

पद् चरणे । चाल्यते चलनम्^१ । चरत्यनेन चरणम् । पद्यतेऽनेन पादः । षत् । दान्तोऽपि
गद् । कमु पदविक्षेपे । ऋम्यत्यनेनेति क्रमः । 'अहि गतौ^२ । इदनुवन्धत्वान्नागमः अहन्यनेनेत्यहिः ।
“अहेति” अहेत्यातिरिक्तयो भवति । अडिप्रश्न । पद्यते पदम् । लङ्किवे ।

शिरो मूर्धोत्तमाङ्गं कथ-

५ चत्वारो मस्तके । शु हिसायाम् । शीर्षते हिस्यते शिर । “उपिरजिराम्यो यष्वत्^३
एयोऽन् प्रत्ययो भवति स च यष्वत् । तेनागुणे । अनुष्टुलोप । मृल्या मोहसमच्छायया^४ । मूर्छन्त्य-
चादता, प्राणिनो मूर्धा । ५४गादय—“पूषन् अर्थमन् पञ्चनुक्त्वन् लीहन् सातरिश्वन् क्लेदन् हन्-
मृष्टन् यूषन्” एते कन्यन्ता निपात्यन्ते । उत्तम च तद् अङ्गम् उत्तमाङ्गम् । कै गै शब्दे । कायतीति कम् ।
शीर्षम् । मस्तक । कन्याङ्गं च नानार्थे ।

प्रारभ्यं प्रेरितेरितम् ।

१० त्रयः प्रेरणे । प्रारम्भते प्रारम्भम् । “शक्षिसहिपवर्गान्ताच्च” यः प्रम्यय । ईर गते
कम्पने च । प्रेर्यते प्रेरितम् । ईरितम् । “नपु सके भावे क्” ।

साध्रत सरस्वतीनामानि प्रारम्भने आचार्यश्रीमदमरकीर्तिना-

वाग्वचो वचनं वाणी भारती गीः मरस्वती ॥ १०४ ॥

१५ सम वाण्याम् । उच्यते वाक् । “वच्चिप्रच्छुश्चिद्शुश्रुज्वा विवृदीर्यश्च” एव. शिप् प्रत्ययो
भवति दीर्घवर्मस्यैपाम् । वक्ति वच्च^५ । “सर्वधातुयोऽन्मन्” । उच्यते वचनम् । वाण्यने
वाणि । विवामी । वाणी । विभर्ति जगद् धारयति, भरतो व्राता तस्येय भारती । तथा च—
“आत्मनि मोक्षे व्याने वृत्तो ताते च भरतराजस्य ।
ब्रह्मोति गीः प्रगीता न चापरो विद्यते ब्रह्मा ॥”

२० गीर्यते उच्चार्यते रान्त गीः । सर प्रसरणमस्त्वा सरस्वतीः । व्राती । नवाहि—
“गीर्गोः कामदुघा सम्यक् प्रयुक्ता स्मर्यते बुधैः ।
दुष्प्रयुक्ता पुनर्गो वं प्रयोक्तुः संव शसनि ॥

सिहाद्विपदने गर्जः-

सिहे कण्ठीरवे, द्विपे गजे, घने मेरे च गर्ज^६ । शब्द कथ्यते । गर्जन गज ।

हेपाऽश्वे

अश्वाना शब्दे हेषा । हेपणम् । हेपा हेपा च ।

वृंहितं गजे ।

गजशब्दे वृंहितम् । वर्हणम् ।

स्फीत्कृतं धेनुकलभे-

१ चलत्यनेनेति चलनमिति सुवचः । २ अत्राभिधानचिन्तामणि, प्रमाणम्—‘चरण नमणः
पाद, पदोऽहिश्चलन क्रमः’ । इति । ३२८०। ३ का० उ० सू० ४५९। ४ का०उ० सू० २५। ५ अत्र
प्रमाणान्तराभावः । वराङ्गु कमनोयाङ्गुमिति वा स्यात् । ६ का०म० १२११। ७ का०उ०म० २२३।
८. उच्यते वच इति कर्मणि विग्रहो युक्त । ९ का० उ० सू० ४५६। १० “वण शब्दे” चुरादि ।
११. सिहगजमेघवनौ गर्जशब्द प्रयुक्त्यते । एव वद्यमाणतद्भूर्णो सर्वत्र योज्यम् ।

धेनुकलमं शिशुवत्से स्फीत्कृतं^१ स्फीत्शब्दं कथ्यते ।
स्तमितं जलदे तथा ॥ १०५ ॥

जलदे मेवं मेवाना शब्दे स्तनित कथ्यते । स्तन्यते स्तनितम् ।
स्यन्दने चीत्कृतं मन्त्रे भटे च हुङ्कृतं तथा ।
स्यन्दने रथशब्दे चीत्कृतं कथ्यते । मन्त्रे भटे च हुङ्कृतः कथ्यते । हु मन्त्रे, हु परिप्रयने ५
हु साव सुङ्ग ते भयादा राक्षसोऽयम् । कुत्सने हु निर्लंजा । अनिच्छायाम हु हु मुञ्च ।

मीत्कृतं मणितं कामे-

कामे कन्दर्पभोगा-तावशब्दे स्फीत्कृतं मणितम् । सीतित्यते सीत्कृतम् । मण्यते मणितम् ।
स्वनकृतं शृङ्खलायुधे ॥ १०६ ॥

शृङ्खलाऽयुधे खत्कृतम् । सुगमम् । १०

मत्तीरकं तुलाकोटिन् पुर-

त्रयं छीणा चरणामरणं । मञ्जि मै त्र । मञ्याकर्पति चित् मञ्जीरम् । अथवा मञ्जु मञ्चु-
मीरयति मञ्चीरम् । तुलाकृतेजङ्घाया कोटिरव तुलाकोटिः^२ । क्षोगति नौतीनि नूपुरम्^३ । शिरङ्गाना ।
रादकृकः । हसकम् । पदाङ्गुदस । कलापो नामाय ।

तत्र मंसृतम् । १५

तत्र तर्मिन् मञ्जीरके तच्छब्दे ससृतं कथ्यते ।

आङ्कृतं चाथ मरुति-

मरुति वाया तच्छब्दे आङ्कृतं कथ्यते ।

क्रेकृतं क्रौञ्चहंसयोः ॥ १०७ ॥

क्रौञ्चय तस्थं क्रौञ्चहसो तयोः क्रौञ्चहंसयोः क्रेकृतशब्दो मरतः कथित । तथा^४ चामर्गमह- २०
‘नियादर्पभगान्वारषड्जमध्यमवैता ।

पञ्चमश्चेत्यमां सप्त तन्त्रीकण्ठोत्थिताः स्वराः ॥

तथा च भरतनाटके-

“पद्ग्रं मयूरा ब्रुवते गावस्त्वृपभभाविण ।

आजाविकं तु गान्धारं क्रौञ्चः कणति मध्यमम् ॥

पुष्पसायारणे काले पिकः कृजनि पञ्चमम् ।

धैवतं हेषते वाजी निपाद वृ हते गजः ॥

नासाकण्ठमुरस्तालुजिह्वादन्ताश्च सप्तशन् ।

पद्म्यं सजायते यस्मान्समाप्तदृतं इति सृत ॥”

२५

१ नवप्रयता गो धेनु त्रिशब्दो हस्तिशब्दक कलमस्तयो शब्दः स्फीत्कृतमुच्यते इति
शब्दार्थः । दीकास्वारम्यन्तु गोवत्सशब्दं स्फीत्कृतमित्यैव प्रतिभाति । अत्र कोशान्तरप्रमाणाभावात्तन्त्रिवि-
प्रयोगादर्थनाच मूलशब्दार्थाऽनुसरणमेव शरणम् । २ तुला तुलया वा कोट्यति । कुट प्रतापने चुरादि ।
अच इ । यदा तुलाकारं कोटिरप्रमस्येति रामाश्रमः । ३ तुवन तूयते वा न । एव भवते । क्षिप् ।
तुवि पुरति नूपुरम् । पुर अप्रगमने । इगुपर्वति क । ४ शब्दमेदप्रसङ्गाद् ग्रन्थान्तरोक्तमन्यशब्दसंद
स्वरमेद च ह । ५ अम० को० ११७।१ ६ ‘पद्ग्रं’ इत्यारण्य “इति सृत” “इत्यन्तं तथा च
भरतनाटके” इत्यैव दीकायामुम्यमतः पाठः “नियादर्पभगान्वार”—इति दीर्घस्वामिमाप्येऽमरेऽविकल
उपलभ्यते ।

प्रतीतं संस्तुतं लब्धं दृष्टं परिचितं स्मृतम् ।

पद् स्मृते । प्रतीयते प्रतीतम् । षुड् स्तुतौ । षुड् । “धात्वादेः षः सः ।” स्तु सम्पूर्वः । सम्यक् प्रकारेण सूयते स्म स्तुतम् । लभ्यते स्म लब्धम् । परिचीयते स्म परिचितम् । सर्वते स्म स्मृतम् ।

संस्थितं दशमीस्थं च परासुं च मृतं विदुः ॥ १०८ ॥

५ चत्वारो भूते । सतिष्ठते स्म संस्थितः । सम्पूर्वकस्तिष्ठति । दशमीं तिष्ठतीति दशमीस्थ । तथा च—

“प्रथमे जायते चिन्ता द्वितीये द्रष्टुमिच्छति ।
तृतीये दीर्घनि श्वासश्चतुर्थे भजते ज्वरम् ॥
पञ्चमे दृष्टते गात्रं षष्ठे भुक्तं न रोचते ।
सप्तमे स्यान्महामूर्छा उन्मत्त्वमथाष्टमे ॥
नवमे प्राणसन्देहो दशमे मुच्यते तु सुभिः ।
एतेवंगे । समाक्रान्तो जीवस्तत्त्वं न पश्यति ॥”

दशाना पूरणी दशमी तत्र तिष्ठतीति वा दशमीस्थः । परागता असबोऽस्य परासु । ग्रिथते रम मृतं विदु कथयन्ति ।

१५ खेदो द्वेषोऽप्यमर्षश्च रुट्कोपकोधमन्यव ।

मत कोवे । खिद परिवाते । तुदादौ खिन्दति । दैव्ये रुधादिपाठात् खिन्ते (तत नेदन) खेदः । भावे घन्न प्रवय । दिव्य अप्रतीतौ अदादौ । द्रेपण दूचेषः । भूय तितिक्षायाम । तुरादौ । शक मृप क्षमायाम् । दिवादौ विभापित । मृतु सहने वार्द्धा परस्मैपदी । अमर्पणम् अमर्पः । कुप कुप रुष रोप । गोपण रुट् । सम्पदादित्वाद्युवे क्षिप् । कोपन कोप । कोधन कोध । मन जाने । मन्यतेै मन्युः ।

“^३ जनिमनिडिसिन्धो यु” । एव्यो युक्तयो भवति । उगादित्वायोरनादेशो न भवति ।

२० हर्षः प्रमोदः प्रमदो मुक्तोपानन्दमुत्सवः ॥ १०८ ॥

मत हर्ष । हर्षण हर्ष । प्रहर्षश्च । प्रमोदन प्रमोद । मदी हर्षे । प्रमदन प्रमदः । “मदेः प्रसमोहर्षें” प्रसमोहर्षपदयोर्मैरेल् भवति हर्षार्थं । मोदन मुद् दान्त ख्रियाम । तुर तुष्टौ । तोपण नोप । आनन्दनम् आनन्दः । पु मि । तुनदि समृद्धा । उत्सवनम् उत्सव । प्रीति । उत्कर्प । उद्दव ।

२५ कृपाऽनुकम्पानुकोशोऽहन्तोक्तिः करुणा दया ।

पठ दयायाम । क्रप कृपायाम । क्रपण कृपा । “वानुबन्धमिदादिम्योऽद्” इत्यद् । “क्रपे॑ सम्प्रसारणम्” इति परस्त्रेणाद् सम्प्रसारण च । स्वमन्ते॑ क्रप कृपायाम् इति जापकात् सम्प्रसारणम् । “स्त्रियामादा॑” अनुकम्पनमनुकम्पा । अनुकोशन्त्येन अनुकोश । पुसि॑ न हन्तोक्ति । अहन्तोक्ति । करोति विपाद् चित्त किरति वा करुणा । उणादौ दृक्कृत्करणं । क्रियते करुणा । “ऋक्तवृत्तमिदायं-

१ द्रेपपर्याये खेदपाठश्रित्तनीय । खेदपर्यायस्तु “शोक शुक् शोचन खेद.” इति अभिं चिं । क्रोधपर्यायस्तु—“कोपकोधाऽमपरोषप्रतिश्वा रुट्कुद्धौ स्त्रियौ” इत्यमर । २ मन्यते त्वा-ज्यत्वेनेति शेष । ३ का० ३० सू० ४१। ४ का० सू० ४१। ४४। ५ उद्दवशब्दस्योत्सवाये प्रमाणम्—‘उद्दवो यादवमिद महे च क्रतुपावके’ । इति मेदिं को० वा० व० ३२ श्लो० । ६ का० सू० ४। ५। ८। १। ७ “क्रपेः सम्प्रसारण च” पा०गण सू० ३। ३। १०। ४। ८ कातन्त्रमतमत्र स्वमतम् । पाणिन्यादि-सूत्र परमतम् । ९ का० ३० सू० २। ६। ०।

जिन्य उनः” एन्य उनः प्रत्ययो भवति । दयन दया । दय दानगतिहसादानेषु । भिदाद्यृ ।

शेषुषी धिष्णा प्रज्ञा मनीषा धीस्तथाऽशयः ॥ ११० ॥

पृृ उद्दृै । शे इत्यव्ययम् । मोह । न मुष्णानि शमयति इति शेषुषो । धृष्णोत्यनया धिष्णाै । प्रज्ञान प्रज्ञाै । मनुते जानात्यनया मनीषा । मनम ईपा मनीपा वा । “हलैलाङ्गलयो-रीपे मनसश्च” इत्यनेन अन्यस्वरादेलोप । अत्र मलोपश्च । चक्षाराधिकारालोकोपचारादा सलोप । ५ स्मृत्यै चिन्तायाम् । ध्यान धीै । मम्पदादित्वाद्वाचं क्षिप् । ‘यायो मम्पमारणम्’ अनेनैव सम्प्रसारण दीप्रवच्च । प्र० सि । “रेकमोविसर्जनीय” । ग्राशेन तिष्ठति सर्वमत्राशयः । तथा-प्रेज्ञा । प्रतिभा । उद्दिः । मति । मेधा । सर्वा । सविति । उत्तरलिङ्ग ।

प्राजमेधाविनौ विद्वानभिरुपो विचक्षणः ।

पण्डितः सूरिराचार्यां वाग्मी नैयायिकः स्मृत ॥ १११ ॥

१०

दश शिरुपि । प्रजानात्ति प्रज्ञ । प्रजादित्वादण् प्राज्ञ । भेदात्यरय मेधावी । माया-मेधामत्रो विन् वाविकारात्मवै एवने विमपया विभागिता । शेषेष्यो मनुरिष्यते । मतिमान् । बुद्धिमान् । विद जाने । विद । वेत्ति जानातीति विद्वान् । वर्तमाने शान् शतद् । १ अन्वित् अदादि ॥ २ “वेत्ते ३ शतुर्वसु्” । शतद् स्थाने वसु । तदादेशात्तद्वद्वन्ति इति वचनात् वसो शतद्वद्वावेन सार्वधातु-व्यात् ‘अत्तीण्’ वशेसैक्ष्वरातामिद्वसौ अनेनैक्ष्वरत्वात्यास इद् न भवति । विद्वन् सज्जातम् । २५ “मिः । ३ सन्तमहतोर्नोपधाया” दीर्घ । विदुपोऽपि । अभिगत रूप येनाभिरुपः । रूप विद्या ।

‘कोकिलाना स्वरो रूप नारीरूप पतिव्रता ।

विद्या रूप कुरुपाणां क्षमा रूप तपश्चिनाम् ।”

चक्ष धातुर्बिंपूर्वः । विविध चप्टे विचक्षणः । नन्दादेयु॑ । योग्यन । १६२० गत्वम् । विचक्षणो विद्वान् इत्यनेन विचक्षण इति निपात । निपातस्य फल ख्यादशो न भवति । पण्डा उद्दि । २० पण्डा सज्जाताऽस्येति परिडत । २ “तारकितादिर्शनात्सजाते॑ इतच् ।” “द्वरणाविरण्” आकार-लोपः । सि । रेक । पृृ प्राणिगम्भविमोचने । स्तूते उद्दि सूरिः । ३ “भूस्वदिव्य कि” एव विप्रत्य-यो भवति । को यण्वदर्थ । ३ आचर्यते आचार्य । “चरेराटि चागुरौ” । तथा चोक्तम्— इन्द्र-नन्दिनीतिशास्त्रे-

“पठचाचाररतो नित्य मूलचारविद्यर्णीः ।

२५

चतुर्वर्णस्य सङ्घस्य य स आचार्य इप्यते ॥”

१ शेते इति शेषोह । विच् । नम्पुणातीति, मूलविभुजादित्वात्क । गारादिदापु । शमे वसौ एत्वाऽयासलोपे उगितश्चेति डीपि शशामेति शेषुषीति क्षी० स्था० । २ ‘विषय शब्दे॑’ । देवेशीति । क्षी० स्था० । ३ प्रज्ञायतेऽनयेत्यन्यत्र । ४ का० रू० पूर्वा० २८ स० । ५ न्यायतेऽनया धीरित्यन्यत्र । ६ “सम्पदादिव्य क्षिप्” का० रू० उ० ८०५ स० । का० रू० मा० ६५८ स० । ८ का० रू० २१३६३ । ८ का० सू० गदा१५५ अत्र उर्गवृनि । १० ‘वर्तमाने शनृदानशाव-प्रथमैकाधिकरणामन्त्रितयो॑’ । का० सू० ४१४२ । ११ “अन्विकरणा, कर्तरि॑” का० सू० ३२२-३२ । १२ “अदादेलु॑ग्विकरणस्य” का० सू० ३४१२ । १३ “शनृवृमु॑” । का० सू० ४१४१ । १४ का० सू० ४१६७६ । १५ का० सू० २१२१८ । १६ का० सू० २१८४८ । १७ का० रू० पू० ५०८ । १८ का० सू० २१६४४ । १९ का० उ० ३१५३ । २० का० सू० ४१२१४ । २१ नीतिसा० १५ श्लो० ।

प्रशत्ता वागस्त्वम्य वाग्मी । न्याये विचारे नियुक्तो नैयायिकः । धीर । लब्धवर्ण । विपश्चित् । वृद्ध । आपसूपः । सन् । मनीषी । ज्ञ । दोषज । कोषिद् । प्रवृद्ध । मुधीः । कृती । इष्टि॑ । कवि । व्यक्तः । विशारदः । सख्यावान् । मतिमान् ।

पारिपद्यो वृद्ध सम्यः सदः संसत्सभोचितः ।

५ पद् समापुरुषे । परिपदि सभाया भव पारिपद्य । यण् । वृद्ध अवगमने । बोधतीति वृद्धः । सभाया साहु सम्य । कुशलो योग्यो हितश्च मातुरुच्यते । सदसि उचितो योग्य सदउचित । ससदुचितः, सभोचितः । समापद् । समाप्तार् । सामाजिक ।

परिपत्सभाऽस्थानपती—

त्रय सभायाम् । परिपोदन्त्वस्या परिपद् । सह भान्त्यस्या सना । आसमन्तात्स्थीयते
१० भिन् आस्थानम् ।

(अधिपति राजा) पति —आस्थान सना इत्यादिपर्यायनामतोऽचिपति पतिरित्यादिपर्याय शब्देनु सत्त्वं गजो नामानि मवन्ति । परिपदधिपति । परिपत्पति । सभाधिपति । सभापति । आस्थानाधिपति । आस्थानपति ।

राजमूर्यो नृपक्रतुः ॥ ११२ ॥

१५ मण्डलेश्वरप्रजाया (प्रयाज) ढाँ । पुन् अभिपते । पु । “धात्वा०” स । राजन्पूर्व राजा सोतव्यो राजा सूयने वा यस्मिन्निति राजमूर्य । “४राजमूर्यच” । व्यण्ग्ययान्तो निगत । दृष्टाणा गजा क्तु नृपक्रतु । तथा च ‘स्मृतौ—
“गोसवे मुरभि हन्याद्राजमूर्ये तु भूमुजम् ।
अश्वमेवे हय हन्यात् पौष्टिरीके च दन्तिनम् ॥”

विष्ट्रं मलिलकापीठमासन्दीमामन विन्दु ।

२० पडासने । न्तून् आच्छादने । विपूर्व । विस्तरण विष्ट्र, । ‘न्वर्दृद्वग्मिधामल् ।’ अल् । नाम्यन्तगुण । ‘वाग्नुणातः’ । सज्जाया सम्य पत्वम् । “७तर्वग्स्य पटवर्गाद्वर्ग ।” मल्ल्यते धार्यते मलिलका । पेटतीति पीठम् । ‘पुष्पोदरादिवाहीर्व । आ समन्तात्सोदति तिष्ठत्यस्यामासन्दी’ । आस्थते

१ अत्र प्रमाणम् अभिं० चिं० ३५। ‘विद्वान् मुर्वी’ कविविचक्षणलब्धवर्ण जः प्राप्तसूप-कृतिकृष्टयभिरुपशीग । मेधाविकाविदविशारदसूर्दिंपज्ञा प्राजन्पिण्डितमनीविवृत्प्रवृद्धा ॥ व्यनो विपश्चित्सद्ग्रन्थ्यावान् सन् ॥” इति । २ “अधिपतो राजा” इति प्रतीकमाश्रित्य व्याख्यादर्शनादय मूल-पत्राश इति । न ब्रह्मितव्यम् । पूर्वपरपदयोर्मीये तस्मावेशामसम्भवात् पदक्षरस्येन स्वतन्त्रपादत्वा भावात् अत्र राजवर्णनस्याप्रसगत्वाच्च । एव च समाप्रसद्वेन तदधिपते राजव्यपदेशार्थ-दीकाकर्तुविशेषपवचनमित्यव तुक्त भावति । ३ का० सू० ३।१।२।१ ४ का० सू० ४।२।४।१ ५ ‘स्मृतो’ इत्युक्तम् । रसविकल श्लोको यशस्तिलक आ० ७ क० ३० श्लो० ३ उपलभ्यते । ६ का० सू० ४।२।४।१ । ७ का० सू० ३।१।२।१ ८ शा० सू० २।२।१।२।१ ‘आस उपवेशने’ । अव्वाद्यः” पा० ३० सू० ४।२।४।१ । इति ३।३।८। । अभिं० चिं० ।

उपविश्यते उस्मिन्नासनम् । “^१कृत्युदोऽन्यत्रापि च” युट । विदुः कथयन्ति ।

विष्टपं भुवनं लोको जगत्-

चत्वारो जगति । ^२विष्टपन्त्यत्र विष्टपम् । भुवनि भवत्यस्माद्गुद्धनम् । लोक्यने लोक । गच्छतीत्येवशील जगत् । “^३युतिगमोर्हें च” क्विप् । गमो द्विर्बचनम् । अभ्यासमकारलोप । ‘ कर्वगस्य चवरः’ गस्य ज । ज गम जातम् । ‘^५पञ्चमो’ । दीर्घ । ‘^६यममनतवगमा क्षौ’ पञ्चमलोप । ५ आत् अत् । “^७धातांस्तोऽन्त पानुवन्धे” तोऽन्त । वैलाप । सि । नपु मकम् ।

तस्य पतिर्जिनः ॥ ११३ ॥

तस्य भुवनस्य पतिर्जिन कथयते । श्रानेकमवगहनव्यसनप्रापणहत्तून् कर्मारातीन् जयतीति जिन । “^{१०}इण्नशजित्तुषिष्यो नक्” । विष्टपति । लोकपतिः । जगत्पति । इत्यादीनि जिनस्य पर्याय-
नामानिशातव्यानि ।

१०

वर्षीयान् वृषभो ज्यायान् पुरुषाद्य प्रजापतिः ।

ऐक्षवाकुः (कः) काश्यपो ब्रह्मा गौतमो नाभिजोऽग्रजः ॥ ११४ ॥

द्वादश वृषभे । अतिशयेन तुदो वर्षीयान् । “^{११}प्रियमिथरभिरोहचतुर्गुरुवृद्धनप्रदीर्घ-
वृन्दारकाणा प्रस्तकवर्धहिगर्वर्धित्रवृश्चिवृन्दा” । वृषभ श्राहिमालदणोपत्वर्मणं भातीति “वृषभ ।
“^{१३}कृषित्वृपिण्या यष्टवत्” । आभ्यासमः प्रत्ययो भवति स च यवत् । अयमेषा मध्ये प्रकृष्टो १५
वृद्धः प्रश्ययो वा ज्यायान् । “वृद्धम्य^{१४} च इय” वृद्धशब्दम्य ज्यादेशो भवति । पूर्व पालनपूरणयो ।
पूरणाति पालयनेति पुरु । “^{१५}इपितृपिभिरिगचिन्दिदृपाय कुः” एवः कुप्रत्ययो भवति । अस्मिन्नहनि
अद्य^{१६} । इदमोऽद्वाबो वश परविधि “सर्वोऽद्या^{१७} निपात्यन्ते इति वचनात् । (आदा भव आद्य)
प्रजानाम् इद्वरयेन्द्रचक्रवर्त्यादीना पति स्वामी प्रजापति । इदु इच्छायाम् । वाच्यते लोकै
ऐक्षवाकः^{१८} । तथा चाप्ये महापुराणे—

२०

“अङ्गुष्ठा तदेक्षण्ठा रससंग्रहणे नृणाम् ।

इद्वाकुरित्यभूहवो जगतामभिसम्मतः ॥”

काश्य द्वितीयते जगतीति काश्यपः । तथा च महापुराणे—

“काश्यमित्युच्यते तेजः काऽयपस्तस्य पालनान् ।”

वृहतीति ब्रह्मा ।

२५

१ का० सू० ४।५।१२। २ “षष्ठं स्तप प्रतिघाने” अम० को० क्षी० स्वा० भाव्य एवोपलयते न
तु पाणिनिधानुपाठे । ३ विशन्त्यत्रेति रामाश्रमः । विशन्त्यस्मिन् जीवाजीवा इति हेमचन्द्र । ४ का० सू०
४।४।४८ । ५ का० सू० ३।३।१३ । ६ का० सू० ४।१५५ । ७ का० मू० ४।१।६।१ । ८ का० सू०
४।१।३।० । ९ का० सू० ४।१।३।४ । वेलोंरोऽपुकस्य इति पूर्णं सत्रम् । १० का० उ० मू० २।५।१ ।
११ पा० सू० ६।४।१५।७ । १२ वृषेण भातीति विश्रहे आतोऽनुपर्मोक । भा तामौ । वर्षति धर्मामृतमिति
विश्रहे “ऋषित्वृषिष्या यष्टवत्” इत्यभ । “वृषु सेचने” । १३ का० उ० सू० ३।१३ । १४ हेंश० ७।४।५।३
१५ का० उ० सू० १।१० । १६ अत आद्यशब्दो न त्वयशब्द । तेनादो भव आद्य इति मुक्तः प्रतिभाति ।
१७ का० सू० २।३।३।७ । १८ इक्षणाम् आ (रामार्पणसम्) अङ्गीति इच्छाकु । तत ऐक्षवाक् । तत्र
प्रमाणमाह—‘अङ्गुष्ठाच्यति’ सद्गृहत ।

“आत्मनि मोक्षे ज्ञाने वृत्तों ताते च भरतराजस्य ।

ब्रह्मेति गीः प्रगीता न चापरो विद्यते ब्रह्मा ॥”

अत परो ब्रह्मा नान्ति । गोतमो गोत्रोऽवतागद् गौतमः । श्रावणं महापुराणे—

“गौः स्वगः स प्रकृष्टात्मा गोतमोऽभिमतः सताम् ।

स तस्मादागतो देवो गौतमश्रुतिमन्वभूत् ॥”

तामेवात्मो नाभिज् । अत्र जातोऽग्रज । अदृश्यत्वात् ।

मन्मतिर्महात्मवर्गे महावीरोऽन्त्यकाशयपः ।

नाथान्वयो वर्धमानो यत्तीर्थमिह साम्प्रतम् ॥ ११५ ॥

सती समीचीना मतिर्यम्य स सन्मति । महापुराणे—

“तत्सन्देहे गते ताभ्या चरणाभ्या च भक्तिः ।

अस्तावि सन्मनिर्देवो भार्वाति समुदाहृत ॥”

(मध्यने पूज्यने इति महति) । महती पूजा यस्य स महति । विशिष्टम् इन्द्रायसम्भाविनीम्

ईम् अन्तरङ्गा समवसरणानन्तचतुष्यलक्षणा लक्ष्मी रात्यादते इति वीर । वीर इति नाम कस्माऽज्ञानम् ॥

जन्माभिषेकं चालवृशरंगरदर्शनादाशङ्कितवृत्तिरेतदस्य सामर्यखण्डनायै पादाङ्गुणं रेतुसचालनाऽदन्तेण

वीरनाम कृतम । महावीरौ वीर महावीरः । तथा च वृहत्प्रतिकमण्डायते—

“कुमारकाले आमलकाकीडाया कीडतः सङ्गमदेवेन विमानस्खलनाङ्गगवत्पो (ज्ञो) इनार्थं

महाफटाटोपेत भयानक सर्परूप विकृत्य वृक्षा वेष्टिनः । भगवॉन्तस्मान्मस्तकादिपादन्यास

कृत्वा वृक्षादुर्त्ताण । ततस्तेन महावीर इति नाम कृतम् ॥” अन्त्य काश्य नेत्रं पातीति अन्त्यकाश्यप । तत परस्तीर्थकरा नास्ति । नायोऽन्वयो यस्य स नाथान्वय । तथा च —

२०

“चत्वारः पुरुषवृशजा जिनवृपा धर्मावयस्ते पुन-
नेपिश्रीमुनिमुवतां हरिकुले वीरोऽनुथ नाथान्वये ॥

गेयाः सप्रदशाधिका जिनवरा इक्ष्वाकुवशोद्रवा

प्रोद्यन्मोहविनाशनैरुतिपुणाः सङ्गस्य सन्तु श्रियै ॥”

अत समन्ताद् पृष्ठद परमातिशयप्राप्त मान केवलजनायन्यासौ वर्धमानः ।

२५

वर्षिष्ठागुरुरिक्षोपमवायोरूपसर्गयोः ।

आप चंच हलन्तानां यथा वाचा निशा दिशा ॥”

इत्यवशान्वस्याकारलोप । तथा कृषिव प्रत्यक्षवेदी—भगवतो हि गर्भवतारादो वित्रेन्द्रादिविनिर्मिता विशिष्टा पूजा रत्नवृष्टि स्वयं च अद्विद्वयादिक दृष्टा वर्यमान इति नाम कृतम् । इह अस्मिन् पञ्चमकाले यस्य तीर्थं यनीर्थम् साम्प्रतम् अध्युता वर्तते ।

३०

सर्वज्ञो वीतरागोऽहन् केवली धर्मचक्रभृत ।

तीर्थङ्करस्तीर्थकरस्तीर्थकृद्विद्यवाक्पतिः ॥ ११६ ॥

नव जिनेन्द्रे । ज्ञा अवबोधने । जा । सर्वज्ञः । सर्व जानाति वेतोति सर्वज्ञ । “आतोऽनुपसर्गात्मक” अप्रत्यय । “के” यष्वद्य योक्तव्यम्” इति यष्वद्भावात् आलोपः । विशिष्टा ई तर्ता प्रति इतः ग्रातो रागो यस्य स वीतराग । अरिहननाद्रजोहनन (स्या) भावाच्च परिप्राप्तानन्तचतुष्यस्वरूप सन् इन्द्रनिर्मिता-

मतिशयवतों पूजामर्हताति आर्हन् । षष्ठिजमनन्तजानादिचतुष्य विभूत्यात् यस्येति वाऽर्हन् । त्रिकाल
केवलज्ञानमस्त्यस्य केवली । जिनभर्मचक्र महारायुक्त तीर्थकुद्द्रे निराधारतया विद्वान्काले गगने गच्छत्
सर्वजीवदयासूचक रन्नमयमायुभविशेष विभर्ति तद्वाऽनुभवतीति धर्मचक्रम् । तीय द्वादशाद् शास्त्र करोतीतात
तीर्थङ्करः । तीर्थ करोतीति तीर्थकृत । दिव्यवाचाम्यतिः दिव्यवाचक्षर्ता । तथा चोक्तम् —

‘यत्सर्वात्महित न वण्णसहित न स्पन्दितोऽप्यद्य

ना बाऽच्छाकलित न दोपमर्लित न ऽवासरुद्धकम् ।

शान्तामर्षविष सम पशुगणः सकर्णित कर्णिभि-

स्तद्व सर्वविद् प्रनष्टविपदः पायादपूर्व वच ॥”

चेलं निवसनं वामश्चीरमस्त्रमंशुकम् ।

षड् वस्त्र । चित्त्यते वस्थनेऽनेन चेलं चैल च । निवसन्त्यनेन निवसन, विवसन, वन्न च । १०
वस्थते ऽनेनाद् वास । सान्तम् । चिनोति उपार्त्यति साराता चीरम्, चीरं च । अभ्रते गच्छति शोभा-
मनेन अस्वरम् । उभयम् । अग्न्त् कारयति अशुकम् । क्लोवे । कर्दिम् । आच्छादनम् । वस्त्रम् । निवयः ।
पट्ट, पट्टन, पट्टी । पीत । प्रावर । प्रावार । सव्यान च ।

वस्त्राद्यन्तः दिगाद्यादिसज्जितो वृपमेश्वरः ।

वस्त्राद्य वस्त्रार्थाया अन्ते दिगादयो दिक्षर्त्याया आर्हे यस्य तत्सज्जितो वृपमेश्वर । वस्त्रादिक १५
नाम अन्ते दिगादिक नाम आर्हो यथा — दिक्चेल । दिग्वासा । दिग्वसन । दिग्म्बर । दिग्युकः ।
दिग्वस्त्र । काष्ठाचेल । काष्ठानिवसन । काष्ठावासा । काष्ठाचीर । काष्ठाम्बर । काष्ठाशुक । काष्ठावस्त्र ।
ककुचेल । ककुचिनवसन । ककुच्चासा । ककुच्चाचीर । ककुच्चम्बर । ककुच्चशुकः । ककुच्चवस्त्र । आशाचेल ।
आशानिवसन । आशावासा । आशाचीर । आशाम्बर । आशाशुक । आशावस्त्र । दक्षकन्याचेल ।
दक्षकन्यावासा । दक्षकन्याचीर । दक्षकन्याम्बर । दक्षकन्याशुकः । दक्षकन्यावस्त्र । हरिच्चेल । हरिच्चि- २०
वसन । हरिद्वासा । हरिचोर । हरिम्बर । हरिदशुक । हरिद्वज । इत्यादीनि वृपमेश्वरनामानि
ज्ञातव्यानि ।

कुङ्कुमं रुधिरं रक्तम् —

त्रयः कुङ्कुमे । काम्यते जनै कुङ्कुमम् । रुधिरं आवरणो । रुणद्वि रुधिरम् । “तिमिरुधि-
मन्दिरुचिशुश्रिय किर” । रज्यतेऽनेन रक्तम् ।

कस्तुरीं मृगनामिजम् ॥ ११७ ॥

द्वौ मृगमणे । के स्त्रयते कस्तुरी । मृगनामेजातम् मृगनामिजम् । मृगनामीज च ।

कर्पूरं घनमारं च हिमं सेवेत पुण्यवान् ।

कृष्ण सामर्थ्ये । कल्पते कर्पूर । “कृपेन्द्रप्रत्ययः ।” “नाम्यन्तगुणः ।” “कृपे” गोल । कर्पूर,
१ कुक्यते आदीयते कुड्कुमम् । कुक्र आदाने । “कुदकुकोरुम् च” भो० उ० इति उमक
प्रत्ययो नुमागमश्च । इति गमाश्रम । कु कोतीति क्षीरस्वामी । २ का० उ० १२३।३ तथा चोक्तम-
मेदिन्द्राम् ता० ब० श्लो० ८६ । “रन्तोऽनुरक्तं नील्यादि रसिते लोहितं त्रिपु । क्लीबन्तु कुड्कुमे ताप्त्रे
प्राचोनामलकुस्त्रजि” । इति । ४ के शिरसि स्त्यतं प्रशस्तधायंत्वेन मन्यते इन्यर्थ । विकसति सोगन्यम
स्था इति द्वी० स्वा० । “कम गतौ” कसति गच्छति गन्धोऽन्या इति रामाश्रम । “अवर्जिपिङ्गादिम्य उरो-
लचौ” । पा० उ० ४१०। इत्यमर । पृष्ठोदरादित्वाच्चुट्, गोरादित्वान्दीप् च । ५ “अवर्जिपिमिपिङ्गा-
दिन्य उरोलौ” इति का० उ० ३१०। ६ नाम्यन्तयोर्धातुविकरणयोरुण् । का० सू० ३५१।
७ का० सू० ३६१।

सन्यम् । उणादयो हि बहुलम् तेन-

“कच्चित्प्रवृत्तिं कच्चिदप्रवृत्तिं कच्चिद्विभाषा कच्चिदन्यदेव ।
विद्विविधानं बहुधा समीक्ष्य चतुर्विधं बाहुलकं बदन्ति ॥”

वनस्येव सारोऽस्य घनसारः । हि गता । हिनोतीति हिमपूर्वः । “इन्धियुषित्याधूहिन्यो

५ मक् । चन्द्रसक्त । सिताभ्रः । हिमवानुकू ।

समालम्भोऽङ्गरागश्च प्रसाधनविलेपनम् ॥ ११८ ॥

चत्वारो रागे । सम्यक् प्रवारेगालयते ४समालम्भ । यद्यस्य रागोऽङ्गरागः । प्रकर्पणे
या यते मण्डयते प्रसाधनम् । विलियने विलेपनम् ।

भूषणाभग्नं रुच्यम्-

१० त्रय आमरणो । तस्मि न्यु अलङ्कारे । भूषणे मण्डतेऽनेन भूषणम् । आ समन्ताद् विष्णुते शोभा
धार्यनेऽनेन आभरणम् । रोचते रुच्यम् । अलङ्कार । परिकार । मण्डनम् ।

माल्य मालागुणसज्जः ।

चत्वार उपमालायान । मालैव माल्यम् । चातुर्वर्णादित्वात्यरण । माल्यते नार्यते माला ।
अथवा मा लान्ति पुष्पात्यत्र माला । त्रियान । गुणतीति गुणः । “नाम्युपधीकृगृजा” क । सज्यते
१५ स्त्रक् । ‘कृतिवर्गद्युक्तमिति’ सायु ।

मेखला रमना काञ्ची ।

त्रय काञ्च्याम । मेहनस्य य तन्य मा लानीति निरुक्तिः । मिनोति प्रक्षिपति कामिचित्तमिति
वा मेखला । रसति शब्दं करोतीति रसना । रस कान्तो (शब्दे) सात्रोऽय वानु । श्रोणी शोभा
कच्चिति(काञ्चो) वृन्नातोति काञ्चिः । त्रियामी । काञ्चो । तसर्का । कलाप । कटिग्रनम् । सरसनम् ।

२० शिजिनी । च ।

हेमपर्यायसूत्रकम् ॥ ११९ ॥

हेमशब्दात्सूत्रगव्ये प्रयुक्त्यमाने मेखलापर्यायनामानि भवन्ति । हेमसूत्रम् । अष्टपदसूत्रम् ।
स्वर्णसूत्रम् । कनकसूत्रम् । अर्जुनसूत्रम् । हिरण्यसूत्रम् । जातरूपसूत्रम् । शातकुम्भसूत्रम् ।
हाटकसूत्रम् । कलघोतसूत्रम् । तपनीयसूत्रम् । कार्तव्यसूत्रम् । इत्यादीनि जातव्यानि ।

२५ **श्रोणीविम्बं कटीसूत्रं मानसूत्रमिवाहितम् ।**

त्रय पट्टसूत्रे । श्रोणा कटया विम्बं प्रक्षुदादक श्रोणोविम्बम् । कटी सूत्रयति वेष्यतीति

१ शा०म् १३।३।१४९। अन कारिकारूपेण पठित । २ हिनोति गन्धुतीत्यर्थ । कर्पूरस्याशूल्प-
तनस्वभावात् । हन्ति श्रोणाद्यमिति रामाश्रम । ३ का० उ० १।५१। ४ आलन्यते विलियने इत्यर्थ ।
५ का०ग० ६।२।५१। ६ का०म० ४।३।७३। ७ मम गति लातीति पृष्ठोदादित्वानमेखलेति रामाश्रमः ।
सुहु स्खलतीति हेमचन्द । भीयते प्रक्षिप्तयते इति ती०म्बा० । ‘मित्र व्यलच्चैच्च’ २।३।१७। सर० क० ।
८ असुते कटिम्, अशनाति कामिचित्त वेति गमाश्रमहस्तन्दो । ‘यरोरश्च’ इति यूरशादेशश्च । ९, ‘काचि
दीमिवन्धनयो । ‘सर्वधातुम्य इन’ । १० शिजिनी नूपुरम् । मेखलापर्याये तत्पाठोऽयुक्तः । तदुक्तम्—
“नूपुरन्तु तुलाकोटि पादत कटकाङ्गे । मङ्गीर हसक शिजिनी,—अभिं च ० ३।३३०।

कटीसूत्रम् । मान प्रमाणीभूत सूत्रयतीति मानसूत्रम् । केचिद् रागसूत्र पठन्ति पट्टसूत्र च ।

मदिगं मद्यमैरेयं शीघ्रु कादम्बरीमिगम् ॥ १२० ॥

प्रमन्ना वारुणी हालां मधुवारां सुरां विदुः ।

एकादश मध्ये । मात्यन्यनया मदिरा । मधिष्ठा च । मत्वेऽनेन मद्यम् । ‘यमिकदिगदा त्वनुपसंगें’ । इगाया ग्रामसीमायाम साधु येरेयम् । शेरतेऽनेन शीघ्रुः । “शीटो तुक्” । शीघ्रो(सं)गित्येके ५ पठितत्वात् शीघ्रुप्रकृते^३ क इति व्याख्यत । अव्यवा पीतेऽत्र जनः गेते शीघ्रुः । उभयम् । तालव्यः । कुत्सित नीलमध्यर यस्य स कदम्बरो बलदेव । तन्येय प्रिया कादम्बरी । कुत्सितमध्यते यात्यनया वा कादम्बरी । एति परिव्राग्यत्यनया इत्या । आत्मा प्रमोद्यनया प्रसवाना । आदन्त । वस्त्राभ्यापत्य वारुणी । जहाति लज्जामनया हाला । स्त्रियाम् । मतु वारयतीति मधुवाराम् । मुवर्ति सूते भव सुरा । तथा द्विसम्बानभाष्ये—“अतिप्रलापभावेन समुद्रमथनात्रिष्कासिता सुर सुरा ।” १०

“लक्ष्मीकोस्तुभपारिजातकसुरा धन्वन्तरिश्वन्द्रमा

गाव्र कामदुधाः सुरेश्वरगजो रम्भादिवाङ्मना ॥

अश्वः सप्तमुखः सुधा हरिधनु शङ्खो विषचाम्बुद्धे:

रत्नानीति चतुरुदश प्रतिदिन कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥

विदु कथयन्ति । मतु । आश्व । परितुता । स्वादुग्मा । शुण्डा । गन्धोत्तमा । माधवक । १५ माधव । कल्य कल्या । कश्य, कश्या । परिश्रूत । तान्त नियाम । तालव्यदन्त्य । ऐहारू । कापि-शायनम् । उद्दीक्षा । मात्वीक्षा ।

शुण्डामध्यः—

मयविशेषा द्वा । मुन्व(न)न्ति तृपि गच्छन्त्यनया शुण्डा (०८) ने पातुमनिगम्यते वा शुण्डा” । व्रीत्रो । शुगड । आसते जनयति मदम् आमव । पुनि । २०

तद्विधायी शौण्डो गद्येत मद्यपः ॥ १२१ ॥

द्वा कल्यपालके । शुण्डाया मते भव शौण्ड । मय पिवति पाययतीति वा मद्यपः ।

सक्तोऽक्षद्यृतपानेषु विचित्रा शब्दपद्धतिः ।

त्रयो मद्यामन्ते । अक्षेषु द्यनेषु सक्त अक्षसन्त । अतसक्त । पानेषु सक्त पानसन्त । विचित्रा नाना प्रकारा शब्दाना पद्धति अणिः शब्दपञ्चतिर्तंते । अक्षशौण्ड । अक्षधूर्त । अद्विकितव । “सप्तमा” २५ शौण्डै । व्याल, अधि, पटु, पण्डित कुशल, चपल, निपुण, संत्यादि शुण्डादिराकृतिगण ।

मर्पिहैयज्ञवीनाज्यं—

रियः सर्विषि । सत धातव सर्वत्यनेन सान्त सपः । कलीवे । “अर्चिणुचिरचिहुस्त्रिपि-छादिष्ठिर्दिष्य इसि” । मातृ गतां । द्वो गोदोहस्य विकारो हैयज्ञवीनम् । दद हैयज्ञवीन हातनदिन-गोदोहे मञ्जतम् । उक्त च—

“ तत्तु हैयज्ञवीन यद् ह्योगोदोहोद्वय यृतम् ।”

१ का० स० ८०।१३।२ का० उ० स० ८०।१३।३ सीघुरिति दन्त्योऽुप्यन्यत्र पाठः । ४ “शुण्डा हाला हारहूर प्रसन्ना वारुणी सुरा ।” अभिं चिं ३।५६।५ शुण्डाशब्दो मर्दिरावाची पानमदत्थानमपि । तदुक्तम्—“शुण्डा हाला हारहूरम्” अभिं चिं ३।५६।७ “शुण्डा पानमदस्यानम्” अभिं चिं ३।५७।० ६ शुण्डाया नदिरापानागारे भव इति रामाश्रम । “शुण्डा मदिरा उस्त्यस्येति ज्यो त्वादित्वादण्” इति हैमचन्द्र । ७ पा०७० २।१।४।८ का०उ०स० २।४।८ । ८ अम० को० २।१।५।२।

तथा चाशाभरमहाभिष्ठके—

“आयु वीयूषकुण्डे । स्मृतिमणिखनिभिः शेषुषीबलिलकन्दै—
मेधासस्याम्बुद्धाहैर्वरफलतरुभिर्नेत्ररत्नाधिदेवैः ।

निष्टप्तैर्ग्रागपेयप्रचुरमधुरिमस्नेहधूमोऽपि येषां

५ कुर्मो हैयज्ञवीनैः स्नपनमपनय ध्वान्तभानोर्जिनस्य ॥”

वीथते क्षिप्तते पित्तमनेनाज्यम् । तथा क्षीरस्वामिनि—“आ अङ्गनीयमाज्यम्” ।
‘‘आद्युर्वादन्जे, सज्जायाम्’ वयम् । पृतम् । आधार । स्पृद्यम् । याज्यम् । हविः ।

दुर्घं क्षीराऽमृतं पयः ॥१२२॥

चत्वारो दुर्घे । दुर्घ प्रपूरणे । दुर्घते दुर्घम् । घस्तु अदने । सौत्रोऽयम् । घस्यते क्षीरम् ।
१० ‘घसेः^२ किच्च’ ईरमात्र । गमहनजनेत्युपधालोप । ‘अघोषेष्यशिग प्रथम’ क । “शासिवसि-
घसाना च’ प्रत्यम् । कृपूष्योगे द्वा । ‘व्यञ्जनमस्व^३’ । उणादौ क्षिणु क्षणु हिसायाम् । क्षणीतीति
क्षीरम् । ‘क्षीरोशोग्गमोरगम्भीरा’ एते ईरप्रत्ययान्ता निपाचन्ते । न ध्रियन्तेन अमृतम् ।
अत्रजग्मरकारित्वात् । वीथते वा सरस्त्वात् पयः । अमृत् । उत्पत्तम् । अन्यम् । पौयूष, पूयूष च ।

उदधिन्मथितं तक्रं कालशयं पिवेद् गुरुः ।

१५ चत्वारस्तके । उदकेन श्वयते वर्तते उदधिन् । तान्तस्तालःयमध्य । मध्यते (स्म) मथितं घोल च । तत्रति द्रव गन्धुति तक्रम् । उमयम् । ‘तक्र विभागभिन्न तु केवल मथितं स्मृतम्’ इति धन्वन्तरिं । कलशर्या गर्गर्या भव कालशेय पिवेत् गुरु । तत्कालान गरिष्ठम् । अरिष्ठम् । दण्डाहतम् ।

प्रायो वयो दशानेहा पूर्णे यौवनकं विदुः ॥ १२३ ॥

२० तारुण्यं यौवनं च

‘अष्टौ तास्थे । प्रकर्षण परलोकमेवनेन प्राय^४ पुसि । मान्तोऽपि प्रायम् । वयते चयः^५ ।’ दशनि चुम्बति स्त्रीमुख दशा । न इहते^६ चेष्टत अनेहा । अनेहोऽसरमोऽङ्गिरस^७ एते सन प्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । ईद्व चेष्टायाम् । पूरी अत्ययने दिवादौ ग्रात्मनेपरी । अदन्ताना प्राकृ तृ(क्र)तीयः परस्मैपदी । पूर्यने कश्चित्, पूर्यति कश्चित् । इन् चुगायपेक्ष्या वा । “‘कारित० कारितलोप । उमयथा
२५ पूरि जातम् । पूर्यते स्म पूर्णः । निष्ठाक० ।’ ‘दान्तगान्तपर्णदृतस्पट्लुच्चमाशनन्ता’ इत्यनेन पूर्णेति निपातः । यूना भावो यौवनम् । स्वार्थं क । यौवनकम् ।’ ‘युवादित्वाद्वेजण् । वृद्धौ । तस्माण्य

—
१ पा० स० ३।१।०९ । वार्तिकम् । २ पा० उ० स० ८।३२ । ३ का० स० ३।६।४३ । ४ का० स० ३।८।० । ५ का० स० ३।८।२७ । ६ का० स० पू० स० २५६ । ७ ‘व्यञ्जनमस्वर पर वण नयन’ का० स० १।६।२।१ । ८ का० उ० स० ३।४।६ । ९ अत्र प्रायादयोऽनेहोऽन्ताश्रत्वागे वयोवाचका । पूर्णपूर्वका एते चत्वारो यौवनकतारुण्ययौवनानीति त्रय । एव च सन तारुण्ये इति वक्तु युक्तम् । १० प्रकर्षण शरीरस्य क्रमेणायते गन्धुति इति है० च० । ११ शरीरस्य क्रमेण विशन्ति वय, बाल्यादीन दश्यन्ते दशा इति है० । १२ नाहति नागच्छुति नाहन्यते नागम्यते वैति रामाश्रम । ‘नग्याहन पह च’ इति सायु । १३ का० उ० स० ४।१।८ । १४ का० स० ३।६।४।४ । १५ का० स० ४।६।१।० । १६ है० श० ७।१।६।७। युवादेरण् इति सूत्रम् ।

भावस्तारण्यम् । भावार्थे यण् । युनो भावो यौवनम् ।

अन्यो वादीनः स्थविरो मतः ।

त्रयो वृद्धे । अन्ते भवोऽन्त्यः । वृद्धे नियुक्तो वार्द्धनिः^१ । तिष्ठतीति स्थविरः^२ । गति-
भङ्गान्मतः कथितः । प्रवया । यातयामः । दशमीत्थः । जरन । जरठ । जीर्णः । वृद्धः ।

वशोऽन्योऽन्वायाः स्यादाम्नायाः संततिः कुलम् ॥ १२४ ॥

पट् वशे । उश्यते काम्यते जनेन वंशे^३ । पुसि । अन्वयते सन्ततिरत्रान्वयः^४ । अन्वैत्य-
पर्यमत्रान्वयाय । आम्नायते आम्नाय^५ । सम् सम्यक् प्रकारेण तनोति विस्तारयतीति सन्ततिः^६ ।
सन्तनन वा सन्तति । कु (को)लति सर्वं भवन्यत्र कुलम् । उभयम् । गोत्रम् । अभिजन ।

ओधो वर्गश्च सन्तानः

त्रय समूहे (वशम्यावान्तर्गवर्गभेदे) । ओद्यते ओधः^७ । वृज्यते विजातीयेन पृथक् कियते^८
वर्ग । सन्तन्यते सन्तानः । विकर । निकाय । निवह । विसर । वज्र । पुङ्ग । समूह । सन्चय^९ ।
समुद्रय । सुमुदायाः । सार्थ । यूथ । निकुरम्ब । कदम्बम् । पृगः । राशि । चय । समवाय । मण्डलम् ।
चक्रवालम् । जालम् । स्तोम । व्युह ।

काव्यमेव कविस्थितिः ।

द्वौ काव्ये । कवेभाव काव्यम् । तथा च यशस्तिलके—

१५

“दुर्जनानां^{१०} विनोदाय बुधाना मतिजन्मने ।

मध्यस्थानां न मौनाय भन्ये काव्यमिदम्भवेत् ॥”

कवीना स्थिति कविस्थिति ।

पद्मवर्ग प्रारम्भते श्रीमद्भक्तिर्थाना—

२०

हस्मो मगलत्थक्राङ्गः

त्रयो हसे । त्रिम हन्ति खण्डयति, चारुगत्या हन्ति गच्छति वा हसः । हन्ते^{११} स । मरं
मलं भमलमण्डितनडागमियर्ति गच्छतीति मरालः । चक्रमद्विति चक्राण्यज्ञानि वा यस्य चक्राङ्ग ।
मानसांका । श्वेतच्छ्रुद ।

हंसवाहः सनातनः ॥ १२४ ॥

२५

हसशब्दाद् वाहशब्दं प्रयुज्यमाने त्रिवर्णो नामानि भवन्ति । हंसवाहः । मरालवाहः । चाङ्गः
वाह । इत्यादीनि शातव्यानि ।

मयूरो वहिणः केकी शिखी प्रावृष्टिकस्तथा ॥

नीलकण्ठः कलापी च शिखण्डी—

अद्वौ मयूरे । मद्वा रौति मयूर । मीनाति वाऽहीन् मयूर । उणादौ । मीत्र् हिसायाम । मथते

१ अत्रान्यत्प्रमाणं नोपलब्धम् । २ यौवनमर्तकम्य तिष्ठतीति ह० च० । “अजिरशिशिरेसादि
पा०उ० १५३ इति किरपत्ययो उगागमो हस्तवन्व च । ३ “वश कान्तौ” वज्र । नुम । वन्यते कन्यतेऽनेनेते
स्वामी । ४ अन्वैति अन्वीयते । अन्वय । “इण् गतो” । अच् । इत्यन्यत्र ५ अव प्रमाणम्—“आम्नायः
कुल आगमे उपदेशो” इति हैम । त्रापा११। ६ सन्तन्यते सम्यग्विस्तारयतीति रामाश्रम । ७ आ ऊहते ।
ऊह वितके । न्यद्वक्वादित्वाद् हस्यघ । ८ आ० १ इतो० २५। ९ का० उ० सू० ८५। १० वृत्तविद्वि-
निमतिकस्यशिकपेय स.” । इति ।

इति मयूर । “मयते स्त्रो खौ” । बहूमत्यास्ति वर्हार्ण । “कल-वर्हाण्यामिनच्” । केका वाणी अत्यस्त्य केकी । शिखाऽस्त्यन्य शिखो । प्रावृष्टि वर्षाकाले प्रयुत्त प्रावृष्टिक । नील कण्ठे यत्य स नीलकण्ठ । कलापोऽस्त्यस्य कलापी । शिखदोऽस्त्यस्य शिखवगडो । प्रचलाकी । सर्पाशन । शिखावल । अयाम-कण्ठ । चन्द्रकी । गुक्कापाद ।

4

तत्पतिगुहः ॥ १२६ ॥

तथ्य पतिस्तत्पतिर्गुह्य कार्तिक्ये । मयूरशब्दात् पतिशब्दे प्रयुक्त्यमने कार्तिकेयपर्याप्तनामानि भवन्ति । मयूरपति । बृहिणपति । केकिपति । शिखिपति । प्रावृपिकपति । नीलकण्ठपति । कलापिपति । शिखिङ्गिपति । इत्यादीनि जनत्वानि ।

वरदा वारली हंसी-

१२ त्रयो हस्यमार्यायाम । वर विशिष्टमटनि गच्छति वरटा । वरलस्य भार्या वारत्तो । स्वार्थेऽग्निः ।
वरला च । हन्तीति हस्ती ।

कोक ईहामृगो वृक्षः ।

अजाटिक कोकते आदत्ते कोकः । इहा मुरोष्वस्य ईहामृगः । ईहा मृगयते वा ३ईहामृगः । कुकु
त्रुक आदाने । वक्ते ४व्रकः । अग्रण्यवा ।

94

हरिणो मृगश्च पृष्ठतः-

त्रयो मर्गे । गीतेन द्वियते द्वारिण । व्यापैर्मुख्यते मृगां । पर्पति मिच्चति मृत्येण पृष्ठत । तान्तोऽपि पृष्ठन् । एगा । कुरुङ् । कुरुङ्म । सारुङ् । कृष्ण । रिश्य । कृष्णश्च । रुह । न्यहु । वात-प्रसी । शम्भर । शब्ल । कृष्णमार । कृल्सारोऽपि ।

तदङ्कः शर्वरीकरः ॥ १२७ ॥

२० हरिणपर्यायादक्षिणये प्रभुज्यमाने चन्द्रस्य नामानि भवन्ति । हरिणाद् । मृगाद् । पृष्ठाद् । इत्यादीनि शातव्यनि ।

पन्नगोऽहिर्विषधरो लेलिहानो भ्रजङ्गम ॥

नागोर्गौ फणी मर्पः—

नव सर्वे । पद्मनान न गच्छतीति पश्यत । न भ्राण्णनपादित्यस्योपलक्ष्यतात् । अद्य (तेऽ)
 २५ हि । “अहि कर्मयोन्नलोपन् ” न लोप । विप धरति विषधर । लिलेदेति लेलिहान् । भुजान्या
 गच्छति भुजद्वाम् । न गच्छतीति ॑ नाग । उरसा गच्छतीत्युरग । “ ॑ उरो विहायसो स्त्रविहान् च ॥ ” ।
 उरो विहायसो स्त्रविहायोर्यग्नेन सजाया खो भवति तयोश्च उरविहान् यथासन्य भवत । फणास्त्यस्य कृणो ।

१ का० उ० स० ६।४० । २ पा० ५।३।१२२ वार्तिकम्—“फलवर्हान्यामिनन्व” । ३ इंहया महताऽयासेन पृथग्यते आन्वेषीक्रियते इत्यन्यत्र । ४ वर्क्तेऽजादिकमादत्ते, वृणोनि वा वृक्षः । ५ रामाश्मस्तु—“पृष्ठता चिन्दवो चिन्दुसदशलचणान्यत्य पृष्ठत । अर्श आद्यन्व इत्याह । पृष्ठनो चिन्दुचिन्ति इति द्वा० स्वा० । ६ पन्न पतित यथा स्थ तथा गच्छतीति रामाश्रम । सर्वपन्नयोररित वार्तिकन इ । ७ का० उ० स० ८।४। कि इन्ययो नलोपन्न । अहि गतो । अहति वैरेण गच्छति । ८ मुशा लेदीत्येवशीलो लेलिहान । लिहेयैद्युगन्तान्—“ताच्छ्रीन्यवयोवचनशक्तियु चानश्” पा० स० ३।२।१२६। इति चानश् । ९ भुजेन कौटिल्येन गच्छति, भुज इव गच्छति वेत्यन्यत्र । “गमश्च” का० स० ८।३।४। इति । “विहृद्युतुरुद्यु भुजद्युश्च” का० स० ८।३।४। इति खचि, डे च, भुजद्युम, भुजद्यु इति । १० नगे पर्वते भवो नाग । अथवा न गच्छतीत्ययग । न अग, नाग इत्यन्यत्र । ११ का० स० ५।३।४।

सर्पति गच्छति सर्पः । पृदाकु । भुजग । आशीविष । चक्री । व्याल । सरीसूप । कुण्डली । गूढपात् । द्विरसन । चक्षुःश्रवा । काकोदर । दर्वीकर । दीर्घपृष्ठ । दन्दशूक । विलेशय । भोगी । जिह्वग । पवनाशन । गोकर्णः । कुम्भीनम । कञ्जुकी । राजसर्प । भुजङ्गसूक् । दक्षुति ।

तद्वृरी विनतात्मजः ॥ १२७ ॥

तस्य पञ्चगस्य वैरी शत्रु विनतात्मज गहड । पञ्चगवैरी । अहिरिपुः । विप्रधराराति । ५ लेलिहानरिपु । भुजङ्गशत्रु । नागद्विट । भुजङ्गसप्तन । कणिक्किट । सर्पहृत । सर्पदेवी । इत्यादीनि गहडनामानि स्यु ।

सुपणो गरुडस्ताक्ष्यो गरुत्मान् शकुनीश्वरः ।
इन्द्रजिन्मन्त्रपूतात्मा वैनतेयो विपाशयः ॥ १२८ ॥

नव गहड । शोभन स्वर्णमय पर्णमस्य सुपर्णा । तया च—“सुपणो” हेमपञ्चवात् ॥ डी८ १० विश्वासा गतो । गरुडपूर्व । गरुद्धिं पक्षैर्दयते गहडः ।

‘वर्णगमो गवेन्द्रादौ मिहे वर्णविपर्यय ।

पोष्टग्रादौ विकाशस्तु वर्णनाशः पृपोदरे ॥’

टन्यनेन श्लोकेन गरुत्शब्दस्य तकारस्य लोप । लत्वे गहल । गकटव्य । तुलस्यापत्य ताक्ष्यः । १५ गरुत पक्षा मन्त्यस्य गरुत्मान् । शकुनीना विहङ्गानामीवर न्वामी शकुनीश्वरः । इन्द्रजितवान् इन्द्रजित । मन्त्रेण पृत पवित्र आत्मा यस्य स मन्त्रपूतात्मा । विनताया अपत्य वैनतेय । विपक्ष्यतीति विषष्क्षय । कायथपनन्दन । विष्णुरथः । पञ्चगाशन । नागान्तक ।

समिन्द्रियं हृषीकं च थो (सो) तोऽक्षं करणं विदुः ।

पद्मिन्द्रिये । स्वर्गमोक्षो व्वनति विदाग्यतीति खम्^३ । इन्द्रस्यात्मनो लिङ्गमिन्द्रियम्^४ । हप्यति हये प्रानोति विपर्येषु शब्दस्पर्शसूपरसगन्वेषु हृषीकम् । गृणांत्यनेन सान्तम् श्रोतृ । २० नालव्यादिः । अक्षसोनि विपर्य व्यानोति अक्षम् । क्रियते मनोऽनेन विषयेषु करणम् । शेव [विश्विय] । कम्बलम्^५ ।

पुण्यं भाग्यं च सुकृतं भाग्येयं च सत्कृतम् ॥ १२९ ॥

पञ्च पुण्ये । पुण शोभे । पुणति शोभते पवते वा “पुणयम्” । “पञ्चन्यपुण्य” । भगस्यैश्वर्या देरिट [काग्यम] भागम । भागमेव भाग्यम् । “भागाग्रच” । सुषुप्तु क्रियते सुकृतम् । २५

“ ऐश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्य यशसः श्रियः ।

वैराग्यम्याथ मोक्षस्य पपणा भग इति स्मृतिः ॥”

१. दी० स्वा० भा० १११२९ । २. शा० सू० राग१७२ । अत्र कारिकारूपेण पठित ।
३. तन्यन्त, तन्दिन्दियाधिष्ठानस्य खातसदशव्वदर्शनात्, खम । ‘खनु अवदारणे’ । डप्रत्यय इत्यन्यत्र ।
४. इन्द्रियमिन्द्रियलिङ्गमित्यादिना घच । घम्येय । ५. तालव्यश्रोतशशब्द कर्णेन्द्रियवाचकः । दन्त्यमोतशशब्द इन्द्रियवाची, सोत्र पठितव्य । तदक्षम्—“हृषीकमक्ष करण सोत्र वा विषयीन्द्रियम्” अ० चि० ‘सोत इन्द्रिये निम्नगारये,’ इत्यमर शा० २२३ । ६. नावान्त्यपमाणमुपलब्धम । क्लिष्टसमाधान-प्रकाग्मतु—कमिति सुखार्थकमव्ययम्, तस्य ब्रल साधनमिन्द्रियमिति । ७. पुणतीनि पुण । “पुण शुभे कर्मणि । इगुपवेति कः । पुणमहति पुण्यम् । “तर्दहति” । पा० सू० ४। १६३ । इति यत् । पुणाति पवते वेत्यन्यत्र । ८. कार उ० सू० ३४ । ९. श्लोकोऽय विष्णुपुराणस्थत्वेनोलिलिति अम० को० दी० स्वा० भाष्ये १। १११३ ।

भगस्येद भाग भागमेव भागधेयम् । ‘नामरूपभागेन्यो धेयः’^१ । सत्समीचीन क्रियते (स्म) सत्कृतम् ।

अघमहंश्च दुरितं पापमा पापं च किल्विषम् ।
वृजिनं कलिलं धेनो दुष्कृतम्

५ इश पापे । न जहाति प्राणिनम् अघम्^२ । अहति गच्छति नरकादिकमनेन अह । सान्तम् । दुरितम्^३ । दूर् सौत्रोऽय धातु । पाति सुगतेवार्यति पापमा । पुषि । “सर्वधातुःयो मन् ।” पाति सुगते वार्यति पापम् । “‘पाते: प.’” । निन्यत्वेन कलयते मुहुर्मुहुः, किरति सङ्गुति वा किल्विषम् । “किल्विषम्” । “व्यथिर्णो” एतौ टिप्रत्ययात्मौ निपात्येते । उज्यतेऽपनीयतेऽनेन वृजिनम्^४ । कलयति कलिलम्^५ । “कलेरिलः” । एति गच्छति [सुखम्] अनेन एने । सान्तम् । दुष्कृत्यते स्म दुष्कृतम् । तम । कलम् । १० कलमषम् । अशुभम् । प्रतिकिट्टम् । पङ्कम् । किष्वम् । मल । अनेकार्थे ।

तज्जयी जिनः ॥ १३० ॥

तस्य पापस्य जर्यो तज्जयी । अघजयी । दुरितजयी । पापजयी । इत्यादोनि जिनस्य नामानि भवन्ति ।

सदनं सद्व भवनं धिष्यं वेशमाथ मन्दिरम् ।
गेहं निकेतनागारं निशान्तं निवृतं शृहम् ॥ १३२ ॥
वस्त्यावसथावासं स्थानं धामास्पदं पदम् ।
निकायं निलयं पस्त्यं शरणं विदुरालयम् ॥ १३३ ॥

१५

चतुर्विंशतिर्णहै । जना सीदन्त्यत्र सदनम् । क्लीबे । सीदन्ति सुख गच्छन्त्यत्र सद्व । ‘सर्वधातुःयो’ मन्^६ प्रायेण । मवति भूतान्यत्र भवनम् । धिप शब्दे । देखेष्ठ शब्द करोत्यत्र धिष्यम् । “‘धिष्यर्णक्’ प्रत्ययो भवति । विश्वन्यत्र वेइम । नान्तम् । मायन्ति जना अत्र मन्दिरम्^७ । छी-२० क्लीबे । मन्दिरा । गेह सौत्रा निवारणग्रहयो । गेहति शीतवातातपादिक निवारयतीति गेहम् । शृहाति वा गेहम् । “गेहे” ‘त्वक्’ । सुख निकितन्ति जान्त्यत्र निकेतनम् । अद्वन्ति गच्छन्यत्र आगारम्^८ । आगार च । निशास्यन्त्यत्र निशान्तम्^९ । निवित्यते आच्छात्रते निवृतम् । शृहाति नरेणोपार्जित धन शृहम् । वसन वसति । आवसन्त्यत्र जना आवसथम् । आ समन्तादुयतेऽत्रावास । स्थीयते जनेनात्र स्थानम् । दधाति धनादि धाम । नान्तम् । अदन्त च धामम् । क्लीबे । आशा(प)वनेऽत्रास्पदम्^{१०} । पद्यते २५ गम्यते पदम् । निर्चीयतेऽसो निकायः । “‘शरीरनिवासयो क्रांतः’ वज्र् । निलोयते आशिष्यते(अत्र) निलथम् । पसि सौत्रो निवासे । जना पमन्ति वसन्त्यत्र पस्त्यम्^{११} । वस्ता वासे माधु वस्त्यम् । वर्ती

१ पा० स० ५।४।३६।वातिकम् । २ अद्यते गच्छति दानादिनाऽथम् । “अविगतो” । पचायन् । आगमशास्त्रान्यत्वान्न नुम् । ३ दुष्टिते गमनमनेनेति रामाश्रम । ४ का० उ० स० २।४५। ५ ‘किल्विषाध्यथिर्णो’ का० उ० स० १।२२। ६ ‘वृजा वर्जने’ । वृजे किञ्चेतीनच् । शृज्यते वृजिनभित्यपि । ७ कलयति जनयति दुःखभिति शेष । ८ का० उ० स० ४।२८। ९ का० उ० स० ३।२०। १० “तिमिरुषिमदिमन्दिचन्दिवधिरुचिशुपिन्यः किरः” का० उ० स० १।२३। ११ का० स० ४।२।६।० इति निर्देशाद् गेह इति निपातः । १२ आ अद्वृति अद्वृयते वाज्र वाहुलक आरप्रत्यय । ‘अग्नि गतौ’ आष्टपूर्व । नलोपश्च । १३ निशाया अन्तोऽवत्यन्यत्र । निशायाम् अम्यते गम्यते स्मेति रामाश्रम । “अम गतौ” । कः । १४ “आस्पद प्रतिष्ठायाम्” पा० स० ६।१।१६। इति सुट । १५ का० स० ४।५।३५। १६ अपरस्त्यायन्ति सद्वीभवन्त्यत्र पत्त्यम् । “स्त्रै शब्दमद्घयोः” ।

बासे साधु १ वस्त्यमिति श्रीभोज । शीर्यते हिस्यते शीतायत्र शरणम् । आलीयते जनेनात्रालयः । पुसि । चितुः कथयन्ति । पुरम् । कुलम् । सत्यायाः ।

खेयं खातं च परिखा

त्रयं परिखायाम । खनु अवदारणे । खन् । खन्यते खेयम् । “आत्कनोरिच्छ” यप्रत्ययो नकारस्येकार । “३ अवर्णाहवरणे ५” अवर्णेवर्णयोरेकार । खन्यते [स्म] खातम् । परिखायते परिखा । ५

वग्रं स्याद्लिङ्कुद्दिमम् ।

द्वौ प्राकारे । शुल्कादिक वपन्यत्र वप्रम् । धूल्या कुद्दिम धूलिङ्कुद्दिमम् । वद्भूमिकम् । धूलिङ्कुद्दिमम् ।

प्राकारः परिधिः सालः

त्रयो दुर्गं । प्रकुर्वन्ति तमिति प्राकार ४ । “अर्कतरि च” कारके सज्जायाम्” घन् । परि १० समन्ताद् धीयते परिधिः ५ । श्यति तनूकरानि स्वनगरपर्यत शाल सालं ६ च ।

प्रतोली गोपुराकृतिः ॥ १३४ ॥

द्वौ विशिखायाम् । प्रविशन् जन प्रतोल्यते परिमीयतेऽत्र प्रतोली । गोप्यते रक्ष्यते गोपुरं तस्याकृति गोपुराकृतिः ७ ।

प्रासादसौधहर्म्याणि

त्रय साधे । प्रासादश्च सौध च हर्म्यं च प्रासादसौधहर्म्याणि । प्रसीदन्त्यस्मिन्नयनमनातीति ८५ ध्रामाद् । “अर्कतरि च कारके सज्जायाम्” । सुवाया लिताया भव १० सौधम् । चन्द्रकरान् इरति हर्म्यम् ११ ।

निर्वृहो मत्तवारणः ।

द्वौ अग्रभ्रये । निर्वृत्यते निर्वृहू । मत्ता प्रमादिन पतन्तो वार्यन्तेऽनेन मनवारण । २०

वातायनं मतालम्ब्यम्

द्वौ गवान्ते । वातस्यायन मागो वातायनम् । उभयम् । मतमर्मीष्म आलम्बम् मतालम्ब्यम् । जालम् । जालम् ।

आलम्ब्यसुखमासनम् ॥ १३५ ॥

राजामवपुमेद्वौ । आलम्ब्यस्य अवलम्बनस्य मुखम् आलम्ब्यसुखम् । सुखेनास्यते आसनम् । २५

ममः सवर्णः सज्जातिः मद्भः मद्भः सद्भः ।

तुल्यः सधर्मस्तपथं तुला कक्षोपमा विधा ॥ १३६ ॥

१ यद्यपि मूले वस्त्यशब्दो नालित, तथापि पाठभेदात् “निशान्तवस्त्यमदनम्” २१२५० इत्यमरे वस्त्यशब्दपाठात् दीकाकृता तदपि विश्वीतम् । २ का० सू० ४।२।१२। ३ का० मू० १।२।२। ४ प्रक्षियते इति कर्मणि घन् । इति रामाश्रम । ५ का० सू० ४।५।४। ६ परितो धीयते वेष्यते नगरमनेनेति रामाश्रम । ७ दन्त्यपाटे तु स्त्यते सालः । “क्ल गतौ” । घन् । ८ पुरद्वारन्तु गोपुर भटक्कितम्, तस्याकृतिरिवाकृतिर्यत्यास्तत्सदशीयर्थ । ९ का० सू० ४।२।४। १० सुवाया लित. सौधः । शेषेनुग् । ११ इरति मनासि हर्म्यमित्यन्यत्र । प्रासादसौधहर्म्याणामत्राविशेषणोपादानम् । पर तद्विशेषां न विस्मर्तव्य । तदुक्तम्-“हर्म्यादि धनिना वास प्रामादो देवभूजाम् । सौधोऽस्मी राजमदनम्” २।२।१।०। इत्यमरः ।

१ एकादश समाने । समान मातीति॒ समः । समान सटशो वर्णोऽत्य सवर्णे । समाना शाति॒ अस्य सव्वार्ति॒ । समान इव दश्यते सदृशः । “३समानान्ययोश्च” सकृपत्यय । शस्य च पत्वम् । “षटो ४ कर्से॒ षस्य कत्वम् । “कपयोगे॒” क्व ॥” । समान इव दश्यते सदृशः । “५समानान्ययोश्च टकृपत्यय । अमात्र । कानुबन्धत्वादगुणनिषेध । दानुबन्धत्वाब्रादादौ पक्ष्यत । “६कृ॒ दशा॒” इति समानस्य ५ सभाव । समान इव दश्यते सदृशः । “७समानान्ययोश्च” क्विप् । तुलया समितस्तुदयः । समनो धर्मां यस्य सधर्मः । समान रूप यस्य स सरूपः । “८रूपनामगोत्रस्थानवर्णवयोवयस्मु” इति समानस्य सादेश । तोलन तुला । “९तोलेश्च” अद्वृपत्यय । ओकाररथाकारश्च । कप्रति कक्षा । उपमा । वधा । प्रव्य । प्रकाश । प्रतिम । मन्त्रिभः । प्रकार ।

विन्मान्यो विद्यमानश्च गुरुस्थानाम्बुजाननाः ।

१०

सिंहादीनि च पर्यायमुपमानेषु योजयेत् ॥ १३७ ॥

योजयेत् जोट्येत् । पर्यायं विशेषणम् उपमानेषु । वित्सम । वित्सवर्णः । वित्स-
जाति॒ । वित्सदृशः । वित्सदृशः । वित्सधर्म । वित्सरूप । वित्सुल्य । वित्सक्षण ।
अनेन प्रकारेण मान्यविवरमानगुरुस्थानाम्बुजाननसिंहादिशब्दा उपमानेषु प्रयोजनीया ।

१५

व्यपदेशो निभं व्याजः पदं व्यतिकरश्छलम् ।

छङ्ग

सम कैतवे॒ व्यपदेशन व्यपदेशः ॥ ॥ । पुसि॒ । निरू॒ अतिशयेन माति॒ निभम् ॥ २ ॥ व्यजयेत् व्याज ।
पुसि॒ । पद्यते गम्यते कैतवेन पदम् । व्यतिकरण व्यतिकरः । छलति॒ छलम् । क्लीवे॒ छादयनि॒
छङ्ग ॥ ॥ । नान्तम् । छ्लीभ्रम् । कैतवम् । कपटम् । कूटम् । उपाधिः । मिपम् । लच्यम् ॥ ।

वृत्तान्तमुत्प्रेक्षा शब्दमन्यं च निर्णयेत् ॥ १३८ ॥

२०

द्वा वार्तायाम् । वृत्तम्य चरितस्थानं वृत्तान्तं ॥ ॥ उत्प्रेक्षणम उत्प्रेक्षा । वार्ता॒ । प्रदृत्ति॒ । उदन्तः॒ ।

१ अत्र समादय सरूपान्ता नव समाने । तुलाकौपमा विधा इति चत्वारम्बुलायामिति
पार्यव्येन वक्तव्येऽपि सदृशाऽभिग्रायेण तदाह । कच्चिदभिषेति पाठः । परन्तु तुलार्थकविधाशब्दोत्त्रयुक्त ।
एव च त्रयोदश इति वक्तव्यम् । अभिधापाठेत् तु “उपमाऽभिधा” इत्यनयोऽस्मावाचकन्ते मति “एकादश”
इति सदृश्चल्लुते । २ मकारे परे समानस्य सादेशविधायकवचनाभावान्समान मातीति विश्वहिन्त्य ।
‘सम वैकलव्ये’ समति वैकलव्य करीतीति सम । समः समाय वैकलव्य करोत्येव । पचाद्यच् । ३ “कर्मणु
पमाने त्यदाटो दशकू नक्तो च” का० सू० १३३५। अत्र वृत्ति । ४ का० सू० ३२४। ५ का० रू०
२०२५६। सू० ६ “समानान्ययोश्चेति वक्तव्यम्” इति वार्तिकरूपयोपलम्यते । २।६०। काशिकायाम् ।
कातन्त्रसूत्रन्तु॒ नैतादशमुपलब्धम् । वृत्तिरूपीदशी काःपि नास्ति । काशिकाया टीकोक्तवचनसामयेऽपि प्रत्य-
यत्वलयसाम्य नास्ति । ७ “दग्धशदृशेषु समानस्य स” का० सू० ४।६१६५। ८ का० सू० ४।२।३५।
वृत्ति । ९ “द्योतिर्जनपदरात्रिनामिनामगोत्ररूपस्थानःण्वयोवचनबन्धुपु” इति० पा० सू० ६।३।४५।
१० वाचनिक नैतत्, अतुलोपमायामिति नापितमिति पतिभाति । ११ व्यपदिश्यते व्यपदेशोऽतद्वूप्य
ताद्वूप्यम् । १२ नि नितरा तदिव भाति निभम् इत्यन्यत्र । १३ व्यजनित विक्षिपन्ति अनेन व्याजः । “अत्र
गतिद्वेषण्यो” । घट् । १४. छूयति छिनति वस्तुतन्वमनेनेति वा । छों छोदने । क्ल प्रत्यय । १५. छावते॒
स्तप्मनेन छुद्दम् । मनिन् । हस्वः । “छुद अपवारणे” । चुरगादिः । १६ लक्ष शब्दोऽप्ययम् । १७ वृत्तोऽनुस-
धानीयो गवेषणीयोऽन्तः समानिर्यस्येति रामाश्रमः ।

ब्रातः^१ पूर्णः समाजश्च समूहः सन्ततिर्वजः ।
 व्यूहो निकायो निकुरम्बं कदम्बकम् ॥ १३६ ॥
 ओघः समुदयः सङ्घः मङ्घातः समितिस्तति ।
 निचयः प्रकरः पड़क्तिः

विशतिस्समृहे : द्वयोति छादयति ब्रातः । पूज्यते पूयते वा पूर्णः । सत्त्वीयते समाजः ॥ घन् ।
 समूद्यते सम्यग् दौक्यते समूहः । सत्त्वते सन्ततिः । वजन्यत्र वजः । उमयम् । विशेषेण उव्यते व्यूहः । ५
 निचीयते तु सो निकाय । कायश्च । निकीर्यते निकर । समन्तान्त्रिकुर्मन्ति वदन्ति (लिन्दर्वात) निकुरम्ब ।
 कुर्मितम अभ्यते कदम्बकम् । द्वा कर्त्तवे । उव्यते ओघः ॥ “न्यद्वक्वादीना” हश्च व ॥
 समूद्यते त्र समुदयः । समुदायश्च । सहन्यन्तेऽस्मिन्नवयवा सङ्घः । सहन्यते सघात ।
 हन्तवर्व । इण् गतो समपूर्वः । समश्वन समितिः । स्त्रिया किं । तनन तति । निचीयते तु सो निचय । १०
 उच्चय । प्रचय । सत्रय । प्रक्रियते प्रकर । पञ्च विस्तारवचन । पञ्च । उदनुव्याप्ताना धावना नलोपे
 नास्तीति । पञ्चन पट्क्तिः । स्त्रिया किं ।

पश्नां समजो वजः ॥ १४० ॥

पश्ना वज समूह समज कथ्यते । अज चेष्टणा । अन् समपूर्वः । समजन समज । 'ममुदोरज
 पग्नु' ॥ अल् । १५

मर्मापाभ्याममासन्नमध्यर्णं मन्त्रिधि विदुः ।
 अविदृं च निकटमवलग्नमनन्तरम् ॥ १४१ ॥

नव समीपे । समानोति समीपम्^१ । अ+युपेत्य चास्यने अभ्यास । घन् । आसद्यने स्म
 आसन्नम् । अर्द गतो याचने च । अर्द अभिपूर्वः अन्यर्तिस्म अभ्यरण्ण । निष्ठान् । “सामीप्युभे”^२
 नेद । दाह^३ “स्य च” दक्षारतकारयोर्नैत्यम् । “गृष्टः”^४ -धातोर्नकारस्य णन्वम् । “” तवर्गस्य०” निष्ठा-
 नस्य णन्वम् । सन्निवीयते सन्निविधि । अ(व)विटुनोर्ताति अविदृम् । “दुनोतेदीर्घस्च”^५ दुनोतेक्षप्रयो
 भवित दीर्घश्च । दु उपताप । निकर्ति निकटम् । (नि)नान्ति कटोऽस्येति व निकट । कटे वर्पाऽवरण्यां ।
 जवलगति (स्म) अवलग्नः । न अन्तरम् अनन्तरम् । सनीडम् । समर्यादम् । आगान् । सदेशम् । उपक-

१ जेतनाचेतनमर्वसमृहे ब्रातादयो विशतिशदा प्रयुज्यन्ते । ओओ वर्गश्च सन्नान इति
 वशस्यावान्तरवर्गभेद इति दृष्ट्य । परन्तु व्यवहारे प्रयोगमाङ्कर्यमपि दश्यन्ते । २ “वृन् वग्णो” । आतक्
 प्रत्यक्ष । अन्यत्र तु व्रतये एकम्भन् राशो नियम्यते उत्ति मुण्डभिश्च इति यन्तान्द्रवत्पर्वज । ब्रातचक्षोर्गिति
 निर्देशाद दीर्घ । ३ पूज्यते राणित्येन मन्यते, पूयते जनसुदायात् गशिभेदन निर्वच्यते वा पूर्ण ।
 “ल्लापूखडिभ्य कित्” । ४० सू० १२८ इति वृद्ध पूत्रो वा किदृग पत्यव । पूर्णवते पृगसामुत्वे वर्णि उत्तेऽपि
 स्थानिवर्त्येन यन्तात्कृत्य टुस्साध्यम् । ५ “अज गतिज्ञेषण्यां” । वज । ५ “कुरु छेदने । बाहु-
 लकादम्बन् । अस्योन्ते निकुरम्ब इत्यपि । ६ आद्वूर्वादूहतेर्वस् । “जह वितके । ७ का० स०
 ४१६५७ । ८ सम-उद्पूर्वक “इण् गतो” इण्धानु । अलि समुदय । वजि समुदाय । ९. “समुदो-
 गणप्रशस्या.” का० स० ४१५६४। इति हन्तेऽप्रत्ययो धादेशश्च । १० का० स० ४१५५१ । ११. सङ्गता
 आपोऽस्मिन्निति विष्णहे समाप्त । अच्चसमाप्तान्त । “द्वृयन्तरुपसमेयोऽपि उत्” इतीकार । उपनाराद+यर्ण-
 मपि समीपम् । १२ का० स० ४१६४७ । १३. का० स० ४१३१०२ । १४. का० स० २१४४८ ।
 १५ “तवर्गस्य पटवर्गाद्वर्ग” का० स० ३१८५ । १६ का० उ० स० ६१५ ।

एवं । अन्यग्रम् । सन्तिकटम् । आसन्नम् ।

जित्या हलिर्दलं सीरं लाङ्गलम्

पञ्च हले । जि जये । जि । जीयते जित्या । “‘जयतेर्हलौ क्यवेव” क्यप् । “धातोऽस्तोऽन्तः पानुबन्धे ।” “३स्त्रियामादा” । हलति हलि । महाद्वल हलिरुच्यते । भूमि हलति विलिलति हलम् । ५ सीयते बध्यते वरवया सीरम् । लङ्गति भूमिं गच्छति लाङ्गलम् ।

तत्करो बलः ।

हलपर्यायतः करपर्यायेणु बलभद्रनामानि भवन्ति । जित्याकर । हलिकर । हलकरः । सीरकर । लाङ्गलकरः । हलपाणिं । इत्यादीनि ज्ञातव्यानि ।

रेवतीदयितो नीलवसनः केशवाग्रजः ॥ १४२ ॥

१० त्रयो बलभद्रे । रेवत्या दधितो भर्ता रंवतीदयितः । नील कृष्णं वर्णं वसनं यस्य स नीलवसन । केशवस्याग्रजं केशवाग्रज । कालिन्दीकर्पण । बल । प्रलम्बन ।

अर्जुनः फाल्गुनो जिष्णुः श्वेतवार्जी कपिध्यजः ।

गाण्डीवी कार्मुकी मध्यमाची मध्यमपाण्डवः ॥ १४३ ॥

वृपसेनः सुनिर्मोक्षो देत्यारिः शक्रनन्दनः ।

१५ कर्णशूली किरीटी च शब्दभेदी धनञ्जयः ॥ १४४ ॥

ममदशार्जुने । अर्जुन सन्ते अर्जुने । अजति(कीर्तिम्) अर्जुन । “४श्रुकृतृज्यमिदार्थर्जित्य उन् । फल निष्पत्तौ । फलतीति फाल्गुन । “‘पिशुनफाल्गुनो” एतो उनप्रत्यान्ता निपायेते । जयतीयेते शीलो जिष्णु । “‘जिमुवो स्तुक्” श्वेता वार्जिनो यस्य स श्वेतवार्जी । कपिर्वानरो व्वजे यस्य स कर्पिध्यज । गा जीवतीयेतशालो गाण्डीवां । कार्मुकं वनुरम्भीय य कार्मुकी । सव्ये माच्यतीति मध्यमाची । मध्यमश्चासो पाण्डवः मध्यमपाण्डवः । युधिष्ठिरमीमयों सहदेवनकुलयोमन्यर्जुन, नेन मध्यमपाण्डवं कृध्यते । वृप सिनोति व नातीनि वृपसेन । सुनिर्मुच्यते शत्रुमि सुनिर्मोक्ष । दुस-ध्यन्वात् । दैत्यस्यारि रात्रुदैत्यारिः । शक्रमेंद्रन्यं नन्दन शक्रनन्दनः अर्जुन कृध्यते । यमस्य पुत्रो युधिष्ठिर । बायोर्माम । इन्द्रस्यार्जुनं अश्विनीकुमार्यार्नकुलमहदेवो पुत्रो । असत्यमेव तत् । कर्णे शूलं विद्यते यस्यासो कर्णशूली । किरीट शेखर विद्यते यस्यानौ किरीटी । शब्दभेदोऽस्यस्य शब्दभेदी ।

१. का० स० १२०२६ । अत्र तुर्गवृत्ति । २ का० स० १११३० । ३ का० स० २१४४६ । ४ का० उ० स० २६० । ५ का० उ० स० २१६ । ‘फल निष्पत्तौ’ उनप्रत्ययो गोऽन्तश्च । फलति कर्मसिद्धिमयते इत्यर्थ । ६ का० स० ४१८१८ । ७ गा जीवतीति बोध्यम् । विराटनगरे पाण्डवात्रुसन्ध्यानाय भीमकर्तृकगवाकमगेऽर्जुनद्वारारक्षणस्य महाभारतोन्तत्वात् । वस्तुतस्तु गाङ्गीव गाण्डीवभिति अर्जुनधनुपो नाम, तदस्यास्तीति गाङ्गीवी इति मत्वर्थीय इन् । तदुक्तं कल्पटुकोपे— “गाण्डीवो गाण्डिवोऽस्त्रियाज । गाङ्गीवो गाङ्गिवोऽप्यस्त्री” इति १।५।४८। मूले गाण्डीवीशब्दस्तु गाण्डी ग्रन्थिरस्यास्तीति गाण्डीवम् । “गाण्डीवजगात्मज्ञायाम्” पा० स० ५।२१२१० । इति मत्वर्थीयो व । तदस्यास्तीति मत्वर्थीय इन् । ८ सव्येन वामपाणिनांपि सचते वाणान् वर्पतीति सध्यसाची ।

कैचित् शब्दवेदीति पठन्ति इत्यपि स्यात् । जि जये । धनपूर्व । धन जितवान् धनञ्जयः । “नाभिन्” त्व । “३नाभ्यन्त०” गुणः । “ए३श्चय” । “हस्वा॒हृषीमांन्तः॑” । धनञ्जयेति कवेनामाभिधानमपि ज्ञातव्यम् । स कथम्भूत १ शब्दभेदी । अतः॑” परे कोऽपि नास्ति । पाण्डवनाम मिष्ठेण स्वनाम रथितमस्ति ।

कुरुकीचकयोवैरी वायुपुत्रो वृकोदरः ।

कुरुवैरी । कीचकवेरी । कुरुगत्रु । कीचकशत्रु । कुरुरिपु । कीचकरिपु । अनिलसुत । ५ पवनात्मज । दृश्यादीनि भीमस्य पर्यायनामानि ज्ञातव्यानि । वृकोऽरण्यवातद्रन्त उद्गर यस्य स वृकोदर १ ।

समवर्ती यमः कालः कृतान्तो मृत्युरन्तकः ॥ १४५ ॥

पद् यमे । मर्वेणु लम दृश्य वर्तते समवर्ती । नान्त । रिपौ मित्रे च सम वर्तते इति वा । यम-यति निश्चाति प्रजा यमः । यमलजातव्यादा । कलयति जन्मूर विनाशहेतुलेन काल १ । कृतोऽन्तो विनाशो येन स कृतान्त । प्रियतेऽनेनेति मृत्यु । “भुजि द्वौ मुकुयुको” । अन्त कर्त्तोति अन्तक । १० शमन । प्रेतपति । पितृपति । कीनाश । वैवस्वत । कालिन्दीमादग । धर्मराज । दण्डवरः । इपि । दक्षिणापति । शास्त्रदेव ।

तदात्मजो जातरिपुः कौन्तेयो भरतान्ययः ।

कौण्ड्यो राजयक्षमाऽमौ सोमवंशो युधिष्ठिरः ॥ १४६ ॥

सम युधिष्ठिरे । तस्य धर्मस्यात्मजस्तदात्मज । समवर्तिपूत्र । यमोऽद्वैः । कृतान्तपौत्र । १५ मृत्युनन्दन । अन्तकारकः । इत्यादीनि युविष्ठिरपर्यायनामानि ज्ञातव्यानि । नान्य स्वयोत्रस्य रिपुः । “जातरिपुः” । कुन्त्या अप्यय पुमान कौन्तेयः । भरतोऽन्वयोऽन्य भरतान्ययः । कुरोरपत्य पुमान कौरव्यः । राजमिर्नेन्द्रैऽद्यत्वं पूज्यते राजयक्षमा । “सर्ववातुन्यो मन” । राजलक्ष्मा चेति नेचित्पटन्ति । सोमो वशोऽस्य सोमवंशः । युधि सप्रामे निश्चतीति युधिष्ठिरः ।

श्वेतार्जुनो शुचिः श्वेतो वलक्ष्मः सितपाण्डुगम् ।

शुक्रलावदात धवल पाण्डुः शुभ्रं शशिप्रभम् ॥ १४७ ॥

त्रयोदश श्वेता । अतेतो श्वेत १ । अर्ज्यतेऽर्जुन २ । जोक्तीनि शुचिः ३ । शुच शोके । श्यायते श्येत ४ । अवलक्षयति अवलक्ष । वलक्ष्म ५ । सिनोति वधनाति (मन)सित । पण्डते याति मनोऽत्र पाण्डुर । अथवा ‘नगरायुगाण्डुभ्यो र ६ पण्डुत्वम्यास्तीति पाण्डुर । पाण्डु । पाण्डर । शोकति मनोऽस्मिन् शुक्रल । शुक गत्वा । अवदायते शोक्ते अवदात ७ । धर्वति धवल ८ । पण्डते याति १५

१ “नाभिन् तृभुजौजधारितपिदमिसहा मजायाम वा० स० ४१३४४ । २ का० स० ३५१६१३ । ३ का० स० ३०११३ । ४ का० स० ३०११२ । ५ का० स० ११२२ । ५ धनरजयान्पर कश्चिन्दुद्देवेना नाम्तीत्यर्थ । ६ यको भीमजठराग्नि । स उत्तरे यस्येत्यति । ७ कलयनीयस्य स्थाने कालयतीति वक्तव्यम । ८ का० उ० स० ३१३४ । ९ अन्तहर्षोऽन्यत्वति, अन्तयत्यन्तक इति यावत् । १० कीशान्तरप्रमाणान्महाभारतादिकथामादात् महाकविव्यवहाराच “अजातरिपु” इतिच्छेऽद्वैत्र शुक । न जाता रिपवो यस्येति युधिष्ठिरस्य “अजातशत्रु” इति मना । तदुक्तम्—“अजातशत्रु शल्यारिधर्मपुत्रो युधिष्ठिर” । अभिन्न चिं ३१३०८ । ११ का० उ० स० ३१२८ । १२ “श्वेता वर्णे” । व्वादिन आत्मा०। पञ्चाश्र । १३ अर्ज्यते सद्गृह्यते जनै । १४ शुच्युज्जवलवस्तुना सर्वसद्ग्रहणीयत्वं लोकानुभवसिद्धम् । शोक्ति निर्मलीभवति शुचिः । शुच दीप्ते । दकृ । १५ श्येष्ट गत्वा । श्यायते गच्छति नौलादिवर्णविशुद्धत्वम् । “दृश्यान्यास्ततन्” । पा० उ० स० ३१९३ । इतन् । १६ अवलक्षयति अवलक्ष्यते वा अन्यवर्गपेक्षया उत्कृष्टवैनेति । वर्षा॒भागुरिल्लोप॒ इत्यल्लोपयक्षे । १७ अवदायते रम । दैप् शोधने । कर्मणि तः । १८ धुनोऽयशोभाम् इति इमचतुर्थ । धावति मनोऽत्र । धातु गतिशुद्धयो । कलच्, हस्वश्चेतीति रामाश्रम ।

मनोऽस्मिन् पाण्डु १ । शोभते शुभ्रः । शशिन द्व प्रभा यस्य शशिप्रभम् । गौरः । हरिण ।

कृष्णं नीलासितं कालम्

चत्वार कृष्णोः । वर्णान् कर्त्तिं कृष्णः । नीलति नीलम् ३ । उभयम् । न सितम् अस्तितम् । क सुखमालाति कालः । कालयति वा मनं 'काल । मेचकम् । श्वामलम् । श्याम च । पालाशम् ४ । ५ हरित् । शिविरुण्ठान इति दुर्गः ।

घूमं धूमलिप्रभः ।

विशिष्टं कृष्णो त्रय । धूनोति धूमः । 'धूतोत्थभिवति गाग धूमः । धूमलश्च । अतिव्यभा यस्य सोऽलिप्रभ ।

तमोऽन्धकारं तिमिरं ध्वानं संतममं तमम् ॥ १४८ ॥

१० ताम्यति मन्दीपवति चक्षुरत्र तम । मान्तम् । क्लावे । अन्व द्वात्युपवात करोतीति अन्ध-कारम् । तिमिरं आच्छादयतेनेन तिमिरम् । कान्तारे ध्वन्यते ध्वान्तम् ५ । सम मस्यक् प्रकारेण तमः मन्तमम्मम् । ताम्यतीति तममित्यदन्तम् । क्लीवे । अवतमसम् । अन्धतमसम् । तिमिरम् । भूल्याया । भूल्यायम् । दिग्म्वरम् ।

लोहितं गृह माताप्र पाटल विशदारुणम् ।

१६ पद्मरन्ते ६ । रोहिति जायते शाभात्रुत्र लोहित । रजयते रत्नम् ७ । आताम्यते कृटदद्यन्ते रुण्यु आताम्य । पाटयतीति पाटल । पाटेगल । विशीयते विशद् । आच्छ्रुति रथर्य- (ति वा८) रुण ।

पीतं गौरं हरिद्राभम्

२० द्विद्रारकवणे त्रय । पोयते मनोऽनेन पीतम् १ । गाते गच्छ्रुति वर्णविशेषं गौरः २ । तथा च नाममालायाम् ३ । 'गौरं उवेते तु रुणो पीते विशुद्धं च द्रुमम्यपि । विशदे' । हरिद्रावत् आमा लुविर्यस्य हरिद्राभम् ।

पालाशं हरितं हरित ॥ १४९ ॥

हरितवर्णं त्रयः । पलाशस्य वर्णस्याय पालाशः । पलाश दत्याह ४ । 'राज्ञसे । किशुकं चयेण पलाशाद्या । हरित्यपि' । हरिति चित्त हरितम् । हरित ।

१ पन्थते स्तूयते पाण्डु । 'पनेदोर्धन् इति दु । इति हमचन्द्र । २ कर्त्तिं मन इति रामाश्रम । गृहेष्वर्णं इति नक । ३. 'शील वर्णं' । नाम्युपधेति का० स० कः । ४ कालयति मन इत्यन्यत्र । ५ अय पाठोऽत्र न युक्त । 'पलाश हरित हरित' इति पद्यस्य टीकायामये द्रष्टव्यः । ६ कृष्ण-मिश्रितलोहिते धूम्रूमलशब्दाविति वैशिष्ट्यार्थ । तदुक्तम्—'धूम्रूमला कृष्णलोहिते' इत्यमरः । ७।५।१६ । ७. कान्तारप्रदेशादिपु तमसोऽविच्छिन्नवर्णेशान्तशाह—'कान्तारे वन्यते' इति । सर्वोगहरतया वस्यते ध्वान्तमिति हमचन्द्र । ८ अत द्रा रन्ते, वर्णो विशदारुणे इति वन्दयम् । विशद च तद्यम्, श्वेत-विशिष्टवर्तमन्यवर्ण । तदेव पाटलम् । तदुक्तम्—'श्वेतरक्तस्तु पाटल' इत्यमर । ९ 'रुद्र वीजजन्मनि प्रादुर्भावे' । 'स्त्र हरचलो वा' । पा०उ०स०३।४ । इतीन्, लत्व च वा । १० रञ्जिति स्म रजयते स्म वा रक्तमित्यन्यत्र । ११ पीयते वर्णान् पीत । 'पीद् पाने' । दिन० इत्यपि । १२.गूरते उद्युद्गुरे मनोऽस्मिन् गौर । 'गूरी उद्यमने' । ऋग्वेन्द्र इत्युणादिस्त्रेण व्युत्वादित । 'गूर्यते गौर' इति हमचन्द्र । 'गृहं मश्लेपये । १३ अनेन० स० २।४२५ । १४ शा० क०० ५२९ ।

हरिणी लोहिनी शोणी गौरी श्येनी पिशङ्ग्यपि ।

पठ् रक्तवर्णे^१ । “श्येतैतहरितलोहिते-यस्तो न.”^२ अनेन ईप्रत्यये तकारस्य नकारन्च । हरिणी । तथा च हलायुधे^३—“शुकाभा हरिणी स्मृता ।” हरिता च । रोहिति जायते शोभाभ्र लोहित । रलयोरेक्यम । “श्येतैतहरितलोहिते-यस्तो न.” अनेन ईस्तकारस्य च नकार । लोहिनी जाता । हलायुधे^४—

“जपाकुसुमसकाशा लोहिनी परिकीर्तिंता”

शोणते शोणी । गते गौरः । नदादित्वादीः । गौरी । श्यायते गच्छति श्रिय श्येनी । हलायुधे^५—“श्येनी कुमुदपत्राभा ।” श्येना च । पेशनि पिशङ्ग । ईप्रत्यये पिशङ्गी ।

मारङ्गी शवरी काली कल्मापी नीलपिञ्जरी ॥१५०॥

पठ् पञ्च वर्णे । सारथ्यति गमयति [ब्रह्मवर्णान्] सारङ्ग । ईप्रत्यये सारङ्गी । शवति याति वर्णान् शवर शवलङ्घन् । ईप्रत्यय शावरी । कालर्याति कालः । ईप्रत्यये काली । वलयति वर्णान् १० कल्मापः । इः कल्मापी । नील गन्धे । नीलति नालम् । ईप्रत्यये नीलो । पिङ्गति पिङ्गर । ईप्रत्यये पिङ्गरी ।

परागं मधु किञ्जल्क मकरन्दं च कौसुमम् ।

पञ्च^६ कुमुमरेणो । परं प्रकर्पमग्यते सम्भाव्यते पुष्पेन परागः^७ । उभयम् । मन्यते सम्भाव्यते पुष्पेन मधु । उभयम् । कि जलपति किञ्जलकम्^८ । मङ्गलते मण्डयते पुष्पमनेन मकरन्दम्^९ । कुमुम-यद कौसुमम् ।^{१५}

उपचाराद्रजः पांशुरेणधूलीश्च योजयेत् ॥१५१॥

चत्वारो धूल्याम् । रज रागे । रजत्यनेन रजः । “उत्तिरजिग्न्यो यष्टवत्”^{१०} । नाक धाक पशि नाशने । पश्यते पांशुः । “^{११} वहिरहितलिपशिय उण्”^{११} रीढ़ गतो । रीयते रेणुः । “दामागीवृत्त्यो तुः”^{१२} । धूयने धुनोति दृष्टि वा धूलि । उपचारात् पुष्परजः । सुमनःपाणुः । पुष्परेणुः । लतान्तधूलि ।^{१२} प्रसवरजः । प्रसूनरेणुः । इत्यादीनि पुष्परजो नामानि ज्ञातव्यानि ।

कलङ्कावद्यमलिनं किञ्जल्कं लक्ष्म लाञ्छनम्

निवोधमधमं पङ्कं मलीमममपि त्यजेत् ॥१५२॥

१ अत्र षट्क्षीलिङ्गवाचक तत्तद्वर्णविशिष्टे इति वस्तव्यम्, न तु रक्तवर्णे । तत्तद्वर्ण-भेदा यथा—हरिणी शुकाभा, लोहिनी जपाकुसुमङ्गाशा, शंशी कोकनदञ्जुवि, गौरी हरिद्राभा, श्येनी कुमुदपत्राभा, पिशङ्गी पीतरक्ता । २ “श्येतैतहरितभरितरोहिताद् वर्णान्तो न”^{१३} २०श० २१४३६ । ३ “श्येनी कुमुदपत्राभा शुकाभा हरिणी स्मृता । जपाकुसुमङ्गाशा रोहिणी परिकीर्तिंता”^{१४} । इति पूर्णं श्लोकः । ३ हलायु० ४५३ । ४ हला० ४५३ । ५ हला० ४५३ । ६. अत्र षट्क्षीलिङ्गवाचके तत्तद्वर्णविशिष्टे इति वक्तव्यम् । तद्भेदो यथा—सारङ्गीशम्बरीकुल्याण्यश्चित्रवर्णा । काली नील्यावसिते । पिङ्गरी पीतरक्ता । ७ अत्र परागकिञ्जलकशब्दौ पुष्परजोवाचकौ, मधुमकरन्दशब्दौ पुष्पसवाचकौ, कौसुमशब्दन्तु भयवाचकौ, इति विवेक । ८ परागच्छति परमुक्त्वमगति वेति विग्रहः सरल । ९ किञ्चिज्जलति, “जल अपवरणे” । बाहुलकात्क । किञ्चिज्जलति जडीभवति इति द्वी० स्वा० । १० मकरमपि व्यति कामजनकत्वान्मकरन्द । “दो अवलाङ्गन”^{१५} । कः । मकरमपि अन्दति वधनातीति वा । “अदि बन्धने”^{१६} । कर्मण्य् । शक्नव्यादिः । इति रामाश्रम । ११ का०७० स० ४१५९ । १२ का० उ० स० १३ । १३ का० उ० स००२०७ ।

दश कलङ्के । कल्यते लक्षणे कलङ्कः^१ । न वर्य समीचीनम् अवद्यम्^२ । मल्यते धार्यतेऽपयशो-
उनेन भलिनम् । किं कुरिस्त, जल्पति किञ्चल्कम् । लक्ष्यति परं नान्तम् लक्ष्यम् । लाञ्छयतेऽनेन
लाञ्छनम् । निवृथते निवोधम्^३ । न अप्वो धात्र । न दधातीत्यधमः । “वर्मसीमाग्रीष्माधमाः”^४ ।
“पञ्चयते पङ्कम् । मलिना कदवेण मस्यते^५ परिमाणीकियते मलीमसः । तं त्यजेत् सत्पुरुष ।

५ जनोदाहरणं कीर्ति साधुवादं यशो विदुः ।

वर्णं गुणावलि ख्यातिं

सप्त यशसि । जनाना लोकानामुदाहरणं, जनेन लोकेनोदाहियते वा जनोदाहरणम् । कृत
सशब्दे । कृत-“चुरादिश्च”^६ । इत् । कृत^७ कारिते इत् । कीर्ति जात । नामिनोर्वाँ^८ । कीर्ति जातम् ।
कीर्तन कीर्तिः । “कीर्तीषोः क्तिश्च”^९ त्तिप्रत्यय । कारितलोप । त्रिषु व्यञ्जनेषु सङ्कातेषु स्वजातीयाना मध्ये
१० एकव्यञ्जनलोप । एकस्तकरो लुप्यते । सिः । रेफ । साधूना सत्पुरुषाणा वादः साधुवाद ।
कुशलो योग्यो हितश्च साधुरुच्यते । यज देवपूजादिषु । इच्यते यशः । “यज शिश्च” अस्मादसन्
प्रत्ययो भवति स च यण्वत् । जस्य शिः । इकार उच्चारणार्थः । वर्णते साधुजनेन वर्णं । गुणानामवलि
श्रेणिः गुणावलि । ख्यातये ख्यातिः । व्लोक । अभिरुद्या । समारुद्या ।

अवधानं तु साहसम् ॥१५३॥

१५ साहसे द्वौ । अवधीयतेऽवधानम् । अवदान च । साहसे^{१०} साहसम् ।

प्रेष्यादेशनिदेशाज्ञानियोगाः शासनं तथा ।

षडादेशे । प्रेष्यते इति प्रेष्य । आ समन्ताद् दिशतीत्यादेशा^{११} । निदिश्यते निदिशतीति वा
निदेश । आजानातीत्याज्ञा^{१२} । नियुज्यन्ते नियोगा । शास्यते प्रतिपादते शासनम् । शासु
अनुशिष्टौ ।

२० सन्देशः प्रिययोः

स्त्रीपुरुषयोः सुखवार्ताया सन्देश । सन्दिशति^{१३} सन्देशः । अमरसिहनाममालायाम्^{१४}—
“सन्देशवाग्बाचिक स्यात्”^{१५}

वार्ता प्रवृत्तिः किंवदन्त्यपि ॥१५४॥

त्रयो नवीनवार्तायाम् । वृत्तिलोकवृत्त विद्यतेरस्या वार्ता । “प्रज्ञाश्रद्धाऽर्चवृत्तिम्यो ण”

१ क ब्रह्माणमपि लङ्कयति हीनता गमयतीत्यन्यत्र । २ न वदितु योग्यमित्यवद् गर्हम् ।
“अवद्यपण्यवयग्रीष्माधमित्यनिरोधपु” इति यत् । ३ नात्र प्रमाणान्तरमुपलब्धम् । निवृथते
निश्चयेन ज्ञायते क्लर्कज्ञानोऽनेनेति करणे घञ् । क्लर्कज्ञाना राजशासनचिह्नितव्यदर्शनात् । ४. का०
उ० सू० १५३ । ५ पन्थते दुखमनेन । पञ्चि व्यक्तीकरणे विस्तारे वा । कर्मणि घञ् ।
६ “मसी समी परिमाणे” । पुष्टि उज्जाया घ. । यदा मलाऽस्यास्तीति “ज्योस्त्नातमिष्ठे”
त्यादिना मत्वर्थीय ईयस् प्रत्यय । टीकोक्तविग्रहश्चिन्त्य । तत्र मलिमस इत्यापतेः । ७. का० सू०
३।२।१। ८ कीर्तीषोः किश्रेति निदेशात् कृत कारिते इत् । ९ “नामिनोर्वाँकुञ्चरोर्ध्यञ्जने”
का०सू० ३।२।४। १० का०सू० ४।५।८। ११ का०उ० सू० ४।६। १२ सहसि बते भव साहसम् ।
१३ आदेशनम् आदिश्यते वैति विग्रहः । १४ अत्रापि आशायते आज्ञानं वैति विग्रह । १५ सन्दिश्यते
इति कर्मणि घञ् न्यायः । १६ अम० कौ० १।६।१७ । १७. पा० सू० ५।२।१०।

स्त्रीकलीवे वार्ते च । प्रवर्तते जनोऽनया प्रवृत्तिः । स्त्रियाम् । किं कुत्सित वदत्यत्र किंवदन्ती^१ । वृत्तान्तः । उदन्तः ।

कठोरं कठिनं स्तव्यं कर्कशं परुषं दृढम् ।

षड् दण्डे । कठति कृच्छ्रेण जीवति कठोर^२ । कठति कठिनः । स्तम्भोति स्म स्तव्यः । कर्कः सोत्रोऽयं धातुः । कर्कति करोति निर्दयत्वं कर्कशः । परुषयति कुप्यतीति परुषः^३ । कुप कुष रुष रोषे । दृह दृहि वृद्धौ । दृहति स्म दृढः । “परिवृद्धदृढौ प्रभुवलवतोऽ” कूरा । कम्बद । खरः । चण्डः । निष्ठुरः । जरठः । मूर्तिमत् । मूर्तम् । प्रवृद्धम् । प्रौढम् । एवितम् । सर्वे त्रिषु ।

अश्लीलं काहलं कल्पु

निस्सारे वचसि त्रय । न श्लीयते न शिल्ष्यते सता चित्तम् अश्लीलम् । वचनम् । क शिर आ समन्तात् हलति अशोभमान करोतीति काहलम्^४ । लोहलश्च । तुह सौत्रः । फल निष्पत्तौ । १० फलति फलगुः^५ । “रजुतरुकुर्वत्पुकलुशिशुरिपुष्पुलघव ।

कोमलं मृदुं पेशलम् ॥ १५५ ॥

त्रयः कोमले । कौ पृथिव्या मलते कोमलम्^६ । मृदु द्वोदे । मृदनातीति मृदु^७ । पिशति पेशलम्^८ । सुकुमारः । मृदुलम् ।

प्रत्यग्रं साम्प्रतं नव्यं नवं नूतनमग्रिमम् ।

१५

षड् नवीने । प्रत्यग्राति प्रत्यग्रम्^९ । सम्प्रति भव साम्प्रतम् । नूते नव्यम्^{१०} । नौति नवम्^{११} । नूयते नूतनम्^{१२} । अग्रे भवम् अग्रिमम्^{१३} । “पृथ्वादिन्य इमन्वा” । अभिनवम् ।

१ कोऽपि वाद । किम्पूर्वाद् वदेरोणादिको भक्त् प्रत्यय । भन्यान्त । गौरादित्वान्डीप् । इति रामाश्रम । २ ‘कठिच्चकिन्यामोर’ । का० उ० स० ४।३७ । “कठ कृच्छ्रजीवने” । ३ विष्णुभागुरिरल्लोपित्यपेत्तलोपो नत्वपस्येति शीकोक्तविग्रहश्चिन्त्य । रामाश्रमस्तु—“पिर्वति पूरयति अल त्रुदि करोति । “पू पालनपूरणयो” । “पूनहि” इत्यादिना उ० स० ४।३७५ । उषच् । इत्याह ।” पृणाति पूरयति पर कोपेनेति हैमचन्दः । ४. का० स० ४।४१।५ । ५ न श्रिय लातीति अश्लोलम् । करत्ययः । कपिलकादित्वाललत्वम् । इति रामाश्रमः । न श्रीस्यास्तीति सिध्मादित्वान्मत्वर्थ्ययो ल । ६ काहलोऽस्तुटवागिर्ति हैमचन्द । ७ फलति विशीर्यते इत्यन्यत्र । ८ का० उ० स० १।१। इत्युप्रत्यय गश्च । ९ कौ पृथिव्या मलते धारयति श्रियम् इत्यर्थ । “मल मल्ल धारणे” पचायच्च । परमेव कुमल इत्येव सिध्यति । वस्तुतस्तु ‘कोमल’ शब्दस्य सिद्धि प्रकारान्तरेणैव साधनीया । कौतीति कोमल इति विष्णोऽभिधानचिन्तामणौ । काम्यने जनैः इत्यन्यत्र । १० मूयते इति कर्मणि कु-प्रत्ययो न्याययः । ११ पिशत्येकदेशेन सर्व करोतीति । श्रीणादिकोऽलच् । रामाश्रमस्तु—‘पिश समाधौ’ पेशन पेश समाहितचित्तता, सोऽस्यास्तीति सिध्मादित्वादलच् इत्याह । पेशलशब्दस्य दक्षार्थो मुख्यः कोमलार्थो गौणः । तदुक्तम्—“दक्षे चतुरपेशलपटवः सूत्थान उपणश्च” इत्यमरः । २।१०।१३ । “दक्षस्तु पेशः ।” इति अभिं चिं ३।४८ । १२ “अग्र गतो” । ड । प्रतिनवमग्रमस्येति श्रीस्यामिरामाश्रमौ । प्रतिगतमग्रमनेनेति हैमचन्दः । १३ ‘गु स्तवने’ । अचो यत् । १४ नूयते नवम् । श्रदोदप् । एव कर्मणि विग्रहो युक्तः । १५ नवमेव नूतनम् । “नवस्य नूरादेशस्तप्तनपूखाश्र प्रत्यया वा० ४।४।३० । इति तनप् प्रत्ययो नूरादेशश्च । इत्यत्र । १६ ‘अग्रादिपश्चाडिभूमच्’ वा० इति डिमच् । नात्र पृथ्वादिभ्यः, इमन्, तस्य भावकर्मणोर्विधानात् पृथ्वादौ पाठाभावाच । सत्यपि । अग्रिमन् इत्यनिष्ठरूपापत्ते ।

नूलन्ध्र । सर्वे त्रिषु ।

पुराणं जठरं जीर्णं प्राक्तनं सुचिरन्तनम् ॥ १५६ ॥

पञ्च पुरातने । पुरा भवम् पुराणम् । जठ इति सौत्रोऽय धातु । जठतीति जठरम्^१ । जीर्णते जीर्णम् । प्राक् पूर्वं भवम् प्राक्तनम् । सुषु चिर भव सुचिरन्तनम् । प्रतनम् । प्रतनम् ।

५ भो रे हं हो इयामन्ते

एते शब्दा आमन्त्रणार्थे वर्तन्ते । भू सत्तायाम् । भोः^२ । रेपु ल्लवगतौ । रे । हनु हिसागत्योः । ह । हु दाने । हो । हि गतौ । हे ।

कश्चित् किञ्चन संशये ।

सन्देहार्थे^३ हो शब्दौ वर्तते । अविशेषाभिधाने चिद्वनशब्दौ अवगन्तव्यौ । तथा चोत्तम्—
१० “किम् सर्वविभवत्यन्ताच्छिष्ठनो” । कश्चित् । कश्चन । कौचित् । कौचन । केचित् । केचन इत्यादि ।
क्षिया काचित् काचन इत्यादि । कलावे किञ्चित् । किञ्चन । इत्यादि ।

‘द्रावक्षणेऽहाय’ मण्डि^४

शीघ्रार्थे त्रयः शब्दा वर्तन्ते ।

निषेधे मा न खल्वलम् ॥ १५७ ॥

६१ निषेधे चत्वार शब्दा वर्तन्ते ।

उच्चैरुच्चावचं तुङ्गमुच्चपुन्नतमुच्छ्रूतम् ।

पङ् दीर्घे । उच्चीयते उच्चैस्त् । अ-ययः । उच्च च अवच च उच्चावचम् । तुजति दैर्घ्यमादते
तुङ्गम्^५ । उच्चीयते उच्चम् । उन्नमत्युच्चतम्^६ । उच्छ्रूयते उच्छ्रूतम्^७ । प्राणु^८ तालव्यः । उदग्रम
दीर्घम् । आयत च ।

२० नीचं न्यगातनं कुब्जं नीचंहृस्व नयेत्परम् ॥ १५८ ॥

पङ् हत्वे । निचीयते नीचम्^९ । न्यज्ञतीति न्यक् । आतन्यते आतनम्^{१०} । कौति व्याधि कुब्ज ।

^१ यथापि जरठशब्दो जीर्णे प्रसिद्धो जठरशब्दमन्दरे, तथापि ऋचिजठरशब्दोऽपि जीर्णे
पठितस्तदाशयेनाह—जठतीति जठरमिति । यटुकम्—‘जठरः कुक्षिवृद्धयो’ अनेऽ स० ३५५ ।
२ भातीति भोः । डोःप्रत्यय । यथा—भो भागव । रिणातीति रे । विच् । यथा रे चेयाः । ह,
हो, इति पृथक् प्रत्ययोधनदयसुक्तम् । परन्तु नाटकादौ ‘ह हो’ इत्यदण्ड एव सम्बोधने प्रयुज्यते । ह
जुहोतीति हहो । यथा हहो तिष्ठ सखे । हिनोति हे । ‘हि गते वृद्धौ’ । विच् । यथा हे
हेरम्ब । ३ अविशेषार्थे इत्याशयः । ४ द्राति द्राक् । ‘द्रा कुत्साया गतौ’ । वाहुलकात्कः ।
अकार इत् । स चासौ वरणो डाक्कण । ५ आहवनम् आहाय “हनुङ् अपनयने” । घज् । पृष्ठो-
दरादित्वाद् वस्य य । ६ सम्पदाते सपदि । ‘पद गतौ’ । इन् । पृष्ठोदरादित्वात्समोऽन्यलोपः । ७ तुङ्गति
दैर्घ्ये पालयतीति । घज् । कुत्सम् । ८ उच्चमति स्म उच्चतम् । ९. उद्धर्व श्रयते उच्छ्रूतम् ।
१० प्राणुते दैर्घ्यं प्राणु । “अशूङ् व्यासां” । ११ निकृष्टामो लक्ष्मो चिनोतीति । डः । इति रामाश्रम ।
निन्ममञ्चति, नीचैरुच्चयस्य वा । अर्वा आदित्वादच् । अन्ययाना भमात्रे दिलोप । १२ नात्र प्रमाण-
मुपलब्धम् । १३, कौति व्याधिविशेषं ब्रूते सूचयति । कौ पृथिव्याम् उब्जति ऋजूमूवति । ‘उञ्ज आर्जवे’ ।
अच् । शकन्यादि । कु ईषद् उब्जमार्जवस्य वेति रामाश्रम ।

न्युबजः च । निचीयते नीचैस् । हसति हस्व ।

अमा सह समं साकं माद्वै सत्रा सज्जः समाः ।

अष्टौ सार्वे । अमति अमा^१ । सह हन्ति गच्छति सह । सह भिनोति समम् । सह अकृति गच्छति साकम् । सह ऋद्धम् साद्धम् । मह प्रायते सत्रा । उपी प्रीतिसेवनयो । जुप् सहपूर्वे । सह जुपते सजू. । किंच वेलोपः । सि । व्यञ्जः^२ । सिलोप । समन्ति समा । सह मान्ति वर्तन्ते ऋतवो यामा वा । सत्रीबहृत्वे ।

सर्वदा सततं नित्यं शश्वदात्यन्तिकं गदा ॥१४६॥

पट् नित्ये । सर्वस्मिन् काले सर्वदा । 'काले कि' सर्वयदेकान्येष्य एष दा' । सतन्यतेभ्य
सततं सन्ततम् च । नियच्छ्रुति नित्यम् । श्रमतीति शश्वत् । अत्यन्ते भवमात्यन्तिकम् ।
सदा इति निपात । सर्वशब्दात्परो दाप्रत्ययो भवति सर्वस्य समावश्च । सर्वस्मिन् काले सदा । मना- १०
तन्, सदातनम् । त्रवम् । शास्त्रतम् । शाश्वतिकम् । अनश्वरम् । अविनश्वरम् । सर्वे त्रियु ।

वियोगं मदनावरथां विरहं पल्लकं विदः ।

चत्वारो विरहे । वियोजन वियोग । मदनस्य वन्दिप्रत्यावस्था मदनावस्था । विरह्ण
विरहे । पल मल्ल धारणे । मल्लस्थाने चेचित्पल्ल इति पठन्ति । पलते पलल । स्वार्य क
पलनक ।

प्रेमाभिलापमालभ्य रागं स्नेहमतः परम् ॥१६०॥

पञ्च स्नेहे । प्रियम्य भव कर्म वा प्रेमा । प्रिय 'स्थिरेति प्रादेश । अभिलाप्यते तुभिलापः । लप श्लेषणकीडनयो । आलभ्यम् ॥ । ॥ सक्षिद्विपवर्गान्ताच्च ॥ रञ्ज रागे । रञ्ज् । रञ्जन रागः । भावेपत्रू ॥ रञ्जेर्भवकरणयो 'पञ्चमलोप । अस्यो० दीर्घ । चज्ञो० कगो वृद्ध वानु-
वन्धयोः ॥ जकारगकार । प्र०सि । रेफः । अथवा रञ्जतेऽनेन राग । 'व्य-जनाच्च' ॥ ॥ करणे पत्रू । प्र० २०
"रञ्जेर्भवकरणयो ॥ पञ्चमलोप । अत्यो० दीर्घ । चज्ञो० कगाविति जकारगकार । स्तिंहाते स्नेहः ।

संहितं सहितं युक्तं मंपुक्तं संभूतं युतम् ।

मंस्कृतं समवेत च ग्राहरन्वीतमन्वितम् ॥१६१॥

१ न माति सह मापिनामनेक्तवामेयता न गच्छति । डप्रत्यय । कप्रत्ययो वा । २
 “व्यञ्जनाच्च” का० सू० २।१।४६ । ३ “ममी समी परिमाणे” । मम धातु । पचायच्च । ममसिति मान्तम-
 द्ययम् । सहार्थकमत्रोक्तम् । तदमित्रः समा शब्दो वर्षव चक्रो न तु महार्थाचक । तदृक्तम्—‘हयनोऽस्मी
 शरत्समा’ । इत्यमरः । अतोऽुत्पिक्त्यर्थे एतत्प्रामाण्यं चिन्त्यम् । सह मन्ति श्रृतवो यामःसिति विग्रहोऽपि
 वर्षवाचकसमाशब्द एव सङ्गच्छते । तत्रैव श्रृतना सहमानात् । ४ का० सू० २।६।२४ । ५ ‘तनु
 विस्तारे’ । कः । ‘समो वा हिततयो’ इति नलोप । ६ त्यन्तेत्रुवै नित्यसिति वाऽन निश्वादत्यप् ।
 नियच्छति नियत भवतीत्यर्थ । ७ अत शशतीति वक्तु युक्तम् । शश लुप्तगतौ । ब्रह्मलकादवर् ।
 ८ सनातनादिशब्दाना विशेष्यनिज्ञाना यथोक्तशश्वदादिशब्ददसमार्थतया दीक्षाकृतिर्न सङ्गच्छते ।
 ९ मत्तलकपलत्कशश्वद्योर्विग्रहार्थत्वे प्रमाणान्तर नोपलब्धम् । १० पा० सू० ६।४।५७ । इति
 प्रादेश । इमनिच्चप्रत्यय । पृथ्वादिष्य इमनिज्वा इति । ११ आलभ्यशब्दस्य रागार्थे कोपान्तर-
 सवादो नोपलब्ध । १२ का० सू० ४।२।११ । १३ का० सू० ४।१।६६ । १४ का० सू० ४।६।१६ ।
 १५ का० सू० ४।५।१९ ।

दश सहिते । सहीयते संहितम् । सहितम् ।

“लुम्पेदवश्यमः कृत्ये तुम्कामनसोरपि ।

समो वा हिततयोर्मासस्य पचि युद्धचोः॥”

योजनं युक्तम्^३ । पृच्छी सम्पर्के । पृच्छ । सम्पृणक्ति स्म सम्पृक्तम् । “शत्यर्थाकर्मक०^४” इति
५ कर्तरि क्तप्रत्ययः । “चजोः कृगौ^५”—चत्य क । सम्भियते स्म सम्भृतम् । यौतिस्म युतम् । सस्क्रियते
स्म सस्कृतम् । समवेयते स्म समवेतम् । अन्वीयते स्म अन्वीतम् । अनिष्टतम् ।

वर्त्माडध्वा सरणिः पन्थाः मार्गः प्रचरसञ्चरौ ।

सप्त मार्गे । वर्तन्ते प्रतिपद्यते जना येन तत् धर्म । नान्तम् । “सर्वधातुभ्यो मन्” । गच्छति

अतति चलति अनेन नान्तोऽध्वा^६ । सरत्यनया सरणिः । दनतालव्यः । सुतिश्चास्त्रियाम् । द्वौ ।
१० पतन्ति गच्छति अनेन पन्था^७ । नान्त । इदन्तोऽपि । पथः । पथ । पथान् । पन्थ इत्यपि । एते पुंसि ।
मार्जनं मार्गयन्त्यनेन वा मार्गः^८ । पुंसि । प्रकर्षेण चरत्यनेनेति प्रचरः । सञ्चरत्यनेनेति सञ्चरः ।
पद्धतिः । एकपदी । वर्तनी । अयनम् । पदवी । पद्या । निगम ।

त्रिमार्गनामगा गङ्गा

मार्गपूर्वं त्रिशब्दे प्रयुज्यमाने गङ्गानामानि भवन्ति । त्रिवर्मा । न्यध्वा । त्रिसरणि । त्रिपथा ।

१५ त्रिपचरा । त्रिसञ्चरा ।

घोपो गोमण्डलं ब्रजः ॥१६२॥

त्रयो गवा स्थाने । घोषन्ते^९ गावोऽत्र घोप । गवा मण्डलम् गोमण्डलम् । गावो^{१०}
ब्रजन्त्यत्र ब्रजः । गोकुलम् । गोकुलम् ।

शृङ्गो दतिहरिनाथहरिस्तर्यक्त्य शृङ्गिगणः ।

२० पञ्च महिषादिके । पर शृणाति हिनस्तीति शृङ्गः^{११} (म्) । त्रियु । हृज् । हरणे । हृदति-
पूर्व । हृति चर्मप्रसेवक जलभाण्ड हरति वहति दतिहरि । “हरतेर्द्दतिनाथयोः^{१२} पशो” इत्यत्य ।
नामन्तगुणः । नाथ स्वामिन हरतीति^{१३} नाथहरि । “हरतेर्द्दतिनाथयोः पशो” । तिरोऽुच्चयतीति

१ सहीयते इति विग्रहो न युक्त । सम्पूर्वस्य हाकस्त्यागार्थकल्वाप्रस्तुतार्थप्रतीते ।
अतः सन्धीयते स्म सहितम् । सम्पूर्वाद्याजः क्तप्रत्यये धात्रो हिरिति ह्यादेशः । २ ६।१।४४
का० सू० ३ युज्यते स्म युक्तम् । ४ का० सू० ४।६।४० । ५. का० सू० ४।६।५६ । ६ का० उ०
सू० ४।२८ । ७ अतति सन्तन गच्छति जनोऽत्र अध्वा । “अत सातत्यगमने” । “वनिस्तत्य
षः” का० उ० सू० ६।५९ । इति वनिप्रत्ययः तकारस्य धकारश्च । “अति बल पथिकानाम् । अनेवं
श्रेति क्वनिपृ धशान्तादेश ।” इति रामाश्रम । ८. “पत्तु पतने” । पतेस्थश्रेतीति थोऽन्तादेशश्रेति
ग्रन्थाशयः । पथन्तेऽनेन । “पथे गतो” । पथन्तेऽनेन । “पथे गतो” । पथिमधिभ्यामिनि । इति
रामाश्रम । ९ मृड्यते विनृणीक्रियते पादै । मृज् शुद्धौ । धश् । वृद्धि । कुत्वं च । मार्यंते
इति वा । “मार्ग अन्वेषणे” । १० वासन्ते शब्दायन्ते इत्यर्थ । “वासु शब्दे” । ११ “शृङ्गशृङ्गाङ्गानि”
का० उ० सू० १।४।४८ । “शृङ्ग हिसायाम्” । शृङ्गप्रत्यये निपातः । शृङ्ग गवादीन विषाणमिति तत्रैव
दुर्गः । तत् शृङ्गमस्यास्तीति अश्च आदियोऽन्त् । एव सति महिषादिसज्ञा सगच्छते । अजभावे विषाण-
मेवार्थं स्यात् । १२ का० सू० ४।३।२६ । १३. नाथ नासारज्ञे हरतीत्यन्यत्र ।

तयञ्चः । शणातीति शङ्कम् । “शङ्कभङ्गाङ्गानि” एतेऽशङ्कप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । शङ्गानि विद्यन्ते येषा ते शृङ्खिण ।

गौश्चतुष्पात्पशः

त्रयोऽ गवि । पूजा गच्छतीति गौः । चत्वार पादा यस्यासौ चतुष्पात् । स्पश इति सौत्रो धातु । सशते [बाधते] इति पशु । ^३अपश्चादयः—“अग्निदुष्टुसुष्टुहिदुमितदुशतदुशकुधनुम्-
सुपशुदेवयुजायुक्तमारयमग्यवः” एते शब्दा क्रप्त्यथान्ता निपातयन्ते । ५

तत्र महिषी नाम देहिका ॥१६३॥

द्वौ महिष्याम् । तत्र तस्मिन् मव्यते * महिप । नदादित्वादी । महिषी । दिव्यते उपचीयते
दग्धेन देहिका' ।

कती नदीष्णो निष्णात् कुशली निषुणः पदुः ।

१०

कृष्णः प्रवीणः प्रगल्भः कोविदश्च विशारदः ॥१६४॥

एकादश कुशले । प्रशस्त कृत कर्मास्य कृती । नद्या स्नातीति नदीष्ण । “निनदीम्बोद्ध स्नातै कौशले” इति पत्वम् । नितरा स्नानाति स्म गुच्छित्वमानोति स्म निष्णात । कुत्सित श्यति कुशल । अथवा कुशान् लाति कुशलः । निपुणतीति निपुणः । शोभनकर्मतात् । पटति जानातीति पटुः । क्षुणत्ति स्म क्षुणण । क्षुदिर् सम्पेषणे । प्रकृष्टा वीणास्य प्रवीण । इति मुख्यार्थं परित्यज्य १५ निपुणे रुदा । तदाहुः—

“निरुद्धा लक्षणा कैश्चित्सामर्थ्यादभिधानवत् ।

क्रियते ऽद्यतनै कैश्चित्कैश्चिन्नैव त्वशक्तिः ॥१२॥

प्रगल्भते प्रगल्भ । गल्म धार्यते । को वेति तदभिग्रायमिति निरुक्त्या कवते कोचिदः ।
विशेषेण पाप शूण्यतिप्रिशारद । क्षेत्रज्ञ । कृतहस्त । कृतमुख । कृतकर्मा । दक्ष । शिक्षित । २०

विद्यग्धश्चतुरः

द्वौ चतुरे । विद्यते १० निदग्ध । पुरुषार्थान् चतते याचते चतुर ।

धूर्तश्चादुकृत् कितवः शठः ।

१ “तिर्यंच” इत्यकारान्तपाठश्चिन्त्य । वप्रत्ययान्तेऽन्तचावेष “तिरस्तिर्यलोपे” इति तिर्यादेश
इति चकारान्तस्यैव युक्तत्वम् । चकारान्तत्वे चाग्राक्षरपादे एकाक्षरोनत्वेन मूले छन्दोभज्ञश्च । न चाका-
रान्तस्तिर्यश्चशब्द केनाऽयन्यकांषकारेण पश्वर्थेऽभिमत । तदुक्तम्—‘पशुस्तिर्यद्भूरि’ अ० चिं-
ध२८१ । २ सामान्यविशेषार्थत्वादेषा पर्यायत्वामावाक्यो गवीति पाठश्चिन्त्य । गोशब्द पशुविशेषे
वलीवर्दादौ । चतुष्पात्रपशुशब्दयोः सर्वपशुवाचकत्वात्पवायात्पविमिति विवेकः । ३. का० उ० स० ११५ ।
४ “महिं वृद्धा” । महते वर्धते वा विशालाकायत्वात् । औणादिकशिपच् । आगमशास्त्र-
स्थानित्यत्वाच्च तुम् । इत्यन्यत्र । ५ नात्र कोषान्तरसवाद् । ६ पा० म० ८१३८१ । ७ अस्य पूर्वार्थ
धन्यालोकलोचने १६ कारिकाटीकायामेवमुपलभ्यते “निरुद्धालक्षणाः काश्चित्साम्यर्दभिवानवत्” इति ।
उत्तरार्धस्तु न समुपगत । ८ कौति प्रतिपादयति धर्मादि कौविदः । कुधातोर्बिंच् । वैतीति विद् । इगु-
धेति क । कौविदः । ग्रथवा कवि वैदे विदा यस्येत रामाश्रमः । ९ विशेषेण शारदोऽवृष्ट-
प्रत्यग्नो वा विशारदः । इति हेमचन्द्रः । विशिष्टो विपरीतो वा शारदः इति रामा० । १० विशेषेण
मैर्वचित दहति स्म विदग्धः ।

चत्वारो धूर्ते । धूर्ति स्म हिनस्ति म्म सदाचार धूर्तः । चाटु करोतीति चाटुकृत् । कितबोऽस्त्वयेति कितय । शठयतीति शाठः । दण्डाजिनक । कुहक । कापेटिक । जालिक । कौस्टि॒तः । व्यङ्गक । मायावी । मायी ।

कापि नागरिको ज्ञेयः

५ कापि कुत्रापि ज्ञेय जातव्य । नगरे भवो नागरिक ॥

गोत्रसज्जाङ्कनाम तत् ॥१६४॥

चत्वारो नाभिन । गवा वाण्या स्वाचारेण त्रायते रक्तति पालयति गोत्रम् । मजान सज्जा । अङ्ग च नाम च समाहारत्वादेकवचनम । अङ्गयने लद्यने अङ्गम् । नमनम नाम ॥

मुग्धो मूढो जडो नेडो मूर्खस्त्र कद्वदः ।

१० सम मूर्खे । वर्मकायेषु मुहूर्ति सशय प्रान्तीति मुग्ध । मुहूर्तैचित्ये । मुहूर्ति स्म मृढ । गव्यर्थस्यादिना कः । हो ट ॥ १ ॥ तवर्गं । टे हो लोप० । विः । रेफ । जडति न पुण्य गच्छति ॥ जडः । जालमश्च । न ईङ्गयने न स्त्रयते केनापि॑ नेड । मूटु बन्धने । मूयते मूकः । २ मूकाद्य—‘मूक्यूक्यूर्यन्कपृथुक्वृत्युक्मृक्मृकः’ एते कप्रशयान्ता निपात्यन्ते । मुहूर्तैचित्ये । मुहूर्ति कायेषु मूर्खः । ‘मुहूर्तैचित्ये । कुत्सित बदति कद्वदः । विवेयः । वालिशः । वादिशः । वाल । ३ वद्वर । मलि ॥ १ ॥ १५ ४ नालीक । पणु ।

स देवानां प्रियोऽप्राज्ञो मन्दः

त्रयो मन्ते । देवानां प्रियः ॥१५॥ प्रथि (निय)ल इत्यर्थः । न प्राज्ञ अप्राज्ञः । कायेषु मन्दते स्वपित्तावेति मन्द ।

१ कुस्त्या चरतीति कोस्तिक । तेन चरतीति ठक् । २ धूर्त्यामान्यार्थ इत्यर्थ । ३ वचला आचारेण च स्वस्य रुप रक्षयन्ते । नामाऽपि स्वानुरूपाचारवचोऽयामान्मान प्रतिष्ठान्यनि । रामाश्रमस्तुरूप्यने शब्दयते उच्चार्यते इति व्युत्पन्निमाह । “गुहू शब्दे” । ४ तदुक्तम—‘मजा स्याज्जेतना नाम हस्ताद्यैश्चार्थमूर्चना’ इति । अम० को० ३।३।३३ । ५ अङ्गक्यतेऽनेनेति शेषः । नामना ब्रोगङ्गितो भवति । ६ नमन नामेयसङ्गतम । भावे धनि प्रणामाथक दन्त्यनामशब्दसाकुवापत्तेः । अतः ना अन्यासे’ मनायते उत्त्यतेऽभिधीयतेऽयांतेऽनेनेति विग्रहो न्याय । नामन् सीमन् इति निपातित । ७ अत्र ‘मुहादीना वा’ का० स० २।३।१८ । इति तकारस्य धकारः । ८. “तवर्गस्य षट्वर्गाद्वयं” का० स० ३।१।४। इति धस्य द । ९ “उ लक्षोपीर्वश्चोपधायाः” । का० स० ३।१।६। इति दृष्टोपी दीर्घीश्चोपधायाः । १० जलति तीव्रो न भवति । डलयोरैक्ये जड इति हेमचन्द्रः । ११ नेडशब्द, कोषान्तरे नोपलभ्यते । एडमूरुशब्दोऽवडमूकशब्दो वा वाक्मुतिवर्जितार्थे लभ्यते । तदुक्तम—“एडमूरुस्तु वस्तु श्रोतुमशिक्षिते” इति । अम० को० ३।१।३८ । “एडमूकौ त्वाचाक्षत्रौ” अभिं० चिं० ३।१२। अतोऽत्रापि अनेडमूक इति पाठ । सम्भाव्यते । जडविशेषवाचकत्वेऽपि तस्य सामान्याभिप्रायेण जडे प्रयोगः अनेडशब्दो वा वधिरार्थः सामान्याभिप्रायेण प्रयोग । १२. का० उ० स० २।५८ । १३ का० उ० स० ४।१७ । १४ नात्र प्रमाणान्तरसुप्लव्यम् । १५ अत्रापि नान्यत्प्रमाणम् । १६ अत्राऽनेकार्थसङ्ग्रहः ३।५४ । प्रमाणम् । तदुक्तम्—नालीकोऽजे शरे सन्धे नालीकं पञ्चनन्दने” इति । १७ ‘देवानां प्रिय इति च मूर्खे’ वा० ३।३।२। । “षष्ठ्या अलुक्” इति पा० सूत्रे ।

धीनामवर्जितः ॥ १६६ ॥

धीवर्जित । दुद्धिवर्जित । प्रतिभावर्जित । प्रशावर्जितः । मनीषावर्जितः । विषयावर्जित ।
मतिवर्जितः । सख्यावर्जित । इत्यादीनि मूर्खनामानि भवन्ति ।

षाष्ठिकः कलमः शालिर्वीहिः स्तम्बकरिस्तथा ।

चत्वारः शालिभेदे । षष्ठिरात्रेण पञ्चन्ते षाष्ठिका^१ । षष्ठिदिवसैत्पन्ना हत्यर्थः । ५
कलयति पुष्टिमनेन कलमः । शालते धान्येषु शालि । अथवा सहालिना भ्रमरेण त्रुतः सालि । वर्हति
वर्धते वीहिः ।^२ स्तम्बकरि ।

वत्सः शकृत्करिजितः षोडन् षड्दशनः स्मृतः ॥ १६७ ॥

चत्वारो वत्से । मातरमभीक्षण वदति वत्सः । शकृत् करोतीति शकृत्करिः । (इ) । “स्तम्ब-
३ शकृतोरिति” व्रीहिवत्सयोरुपसख्यानादिन् । षट् दन्ता यस्य स षोडन् । “समासे दन्तदशासु^{१०}
पष उत्त्व दधोर्द्धौ” षट् दशनाः यस्य स षट्दशनः ।

शौण्डीरो गर्वितः स्तब्धो मानी चाहंयुरुद्धतः ।

उद्ग्रीव उद्ग्रो द्वसः

नव गर्विते । शौण्डतीति शौण्डीर । “कृशशौण्डम्य द्वैर्” । गर्वोऽहंकार संजातोऽस्य
गर्वित । तारकितादिदर्शनात्सजातेऽर्थे इतच् । स्तम्बते स्म स्तब्धः । मान पूजादिलक्षणो गर्वो विद्यते^{१५}
अस्य मानी । अहम् अहकारोऽुत्स्यस्य अहयु । “उर्णाऽहशुभम्यो युः”^{१६} । उद्धन्यते रूपेण उद्धतः^{१७} । उद्ध-
अर्धा ग्रीवा यस्य स उद्ग्रीवः । उद्धरति गर्वैश्यान्यम् उद्धर । हृप्तते हृसः ।

नीचश्च पिशुनोऽधमः ॥ १६८ ॥

त्रयो दुर्जने । नितरा पाप चिनोति नीच^{१८} । मैत्री पिंशति मैत्रीं पेशयति वा पिशुनः^{१९} । तालम्य ।
पिनष्टि वा पिशुनः । “० पिशुनफालुनौ” नपूर्वो धात्र् । न दधातीतीधमः । “१० घर्मसीमाग्रीष्मा-^{२०}
घमा” । दुर्जन । क्षुद्र । कर्णजप । दोषग्राही । द्विजिह ।

चौरैकागारिकस्तेनास्तस्करः प्रतिरोधकः ।

निशाचरो गृदनरो हेरिकः प्रणिघिश्च सः ॥ १६९ ॥

११ नव चौरे । चौरयतीति चोरः । स्वायेऽुणि चौरश्च । एकागारं प्रयोजनमस्येत्यैकागारिकः ।

१ “षष्ठिकाः पष्ठिरात्रेण पञ्चन्ते” पा० ५।१।९० । इति कन् प्रत्ययो रात्रशब्दलोपश्च ।
२ स्तम्ब करोतीति, स्तम्बकरि । “इः स्तम्बशकृतोः” । का० स० ४।३।२५ । इति कृज्ञ इप्रस्य । ३
का० स० ४।३।२५ । ४ का० उ० स० ३।४८ । ५ “उर्णाऽहशुभम्यो युः”^{१६} इति है० श० ७।२।१७ । ६.
उत्कण्ठ इन्ति गच्छति इनस्ति वा० उद्धत इति हेमचन्द्रः । ७ हस्वायेऽुय शन्दो गतः । तत्र न्यञ्चतीति
विग्रह उक्तः । अत्र पिशुनार्थानुरोधेन विग्रहभेदः । निपूर्वकाचिनोतेर्वाहूलकाङ्गः । उपसर्गदीर्घश्च ।
अन्यत्र तु निकृष्टमञ्चतीति विग्रहः । ८ पिंशत्येकदेशेन तूचयति “क्षुधिपिशिमियम्यः कित्” उ० स०
३।५५। इत्युनन् । पिशुनयति अपिशुनति वा । “आपिश्यति खण्डयतीति भोजः” इति हेमचन्द्रः ।
९ का० उ० स० २।६।१ । १०. का० उ० स० १।५६ । ११. चौरादयो निशाचरान्ताः षट् चौरे । गृदन-
रादयः प्रणिष्यन्तास्त्वयो गुप्तचरे । इति पाठ उचितः । तदुक्तम्-“हेरिको गृदपुरुषः । प्रणिषिः”-
अभिं० चि० ३।३।६।७ ।

स्तेनयति स्यायति वा स्तेन.^१ । उभयम् । तस्यति परद्रव्य क्षयं नयति तरकर । “तसे,^२ करः” । अथवा कृज् तत्पूर्वं । तत्करोतीति तत्करः^३ । तदाद्यृ । नाम्यन्तगुणः । रुदित्वात्स्य सकारः । प्रतिरूपादि मार्गं प्रतिरोधकः । निशा चरतीति निशाचरः । गूदश्चार्थं नरः गूढनरः । हिनोति परराष्ट्र गच्छति हेतिकः । प्रकर्षेण निरां गुप्तो धीयते प्रियते वा प्रणिधि । दस्युः^४ । परास्कन्दी । मलिम्बुचः । ५ मोषक । प्रतिमोषकः ।

प्रस्तरोपलपाषाणदृष्टातुः शिला धनः ।

प्रस्तुणात्याच्छादयति “प्रस्तर । काठिन्यमुपलाति^५ उपलम् । उभयम् । पिनष्टि सर्वे^६ पाषाणः । पाषाणश्च । दणाति चूर्णयति द्रियते आद्रियते वा कार्यार्थं दृष्टत्^७ । छियाम् । दधाति^८ धातु । शिनोति तनूकरोति^९ शिला । शिनी च^{१०} । छियाम् । हन्यते^{११} धन । अशम् । ग्रावन् । पुलकश्च^{१२} ।

१०

तत्र जातमयो लोहम्

द्वौ लोहे । तत्र तस्मिन् पाषाणे जातम् उद्भवम् तत्रजातम् । प्रस्तरोद्भव । उपलोद्भवः । पातुद्भव । दृष्टुद्भव । शिलोद्भवः । धनोद्भवः । इत्यादि लोहनामानि भवन्ति । अथते सर्वविकार सान्तम् अय । लुनाति सर्वे लोहम् ।

शातकुम्भं नयेत्परम् ॥ १७० ॥

१५

तत्र पाषाणे उद्भवानि सुवर्णनामानि भवन्ति ।

क्षामं शान्तं कृशं क्षीणं हीनं जीर्णं च वैरिणाम् ।
क्षीणविसानं दूनं च

नव क्षेत्रे । क्षायति स्म क्षामम् । शाम्यति स्मशान्तम् । कृशम् । क्षीणम् । हीनम् ।

१ “स्तेन चौर्ये” । चुरादिः । पचाद्यन् । २ का० उ० स० ६।३ । ३ “तदाद्याद्यन्तानन्त-कारबहुजाह्नदिवाविभानिशाप्रभाभाश्वित्रकृत्तनान्दीक्षिलिपिलिविकलिभक्तिक्षेत्रजह्नाधन्वरहसद्व्यामु च” का० स० ४।३।२।३ । इति कृञ्जप्रत्ययः । ४ दस्युप्रभृतयः प्रतिमोषकनात्ताशैरपरपर्योया न तु गुप्तचरपर्योया । गुप्तचरपर्यायात्म-यथार्हवर्णः । अपर्सर्व । मन्त्रविद् । चरः । वार्तायन । स्पशः । चारः । ५ “तत्त्वं आच्छादने” । पचाद्यन् । ६ अथवा पलतीति पलः । ओः शम्भो पलो वौपल । ७ “पिष्टु सञ्चर्णने” । बाहुलकादानन्द् । पृथोदादित्वादिकारस्याकार । “पष बाषे ग्रन्थे च” । दहश्चेति धश् । पषत्यनेनेति । अणातीत्यणा । “अण शब्दे” । अन्च् । पाषश्चासावण्यश्चेति विग्रहीत्यन्त्र द्रष्टव्य । ८. “दणाते पुग्ह हस्तश्च” ति साधुः । ९. “धातुस्तु गैरिकम्” अभिं चिं । “धातुर्मन-शिलाद्येगैरिकन्तु विशेषत” अप० को० । इत्यादिकोषप्रमाणत सामान्यप्रस्तरपर्ययेऽस्य पाठोऽयुक्त । १०. शिनोतीति तालव्यशिधातुर्न क्षितुपलम्यते । “शो तनूकरणे” । तस्य शयतीति रूपम् । तनूकरोतीत्यर्थ । तत् शिलेति निपातो बाहुलकादैणादिकार्येन समायाति । रामाश्रमादिव्युत्पत्तिकारैत्यु “शिल उञ्ज्ञे” शिलतीति शिला । इगुप्तेति क इत्युक्तम् । तत्रान्तरतम्यं सुवीभिर्विचारणीयम् । १' उदुम्बरध्याय शिली शिला चापि शिलि स्मृत् इति कल्पद्रुकोषवाक्यमत्रोपोद्गलकम् । १२ “मूर्तौ धनिश्च” का० स० ४।५।५।०। हन्तेरत्र धनादेशश्च । १३. तदुकतम्-“पुलक कृषिमेदे स्याम्यणिदोषे शिलान्तरे । गजान्वपिण्डे रोमाञ्चे गलवर्कहरितालयोः ।” चिं को० का० व० ११६ ।

जीर्णते स्म जीर्णम् । शीर्णते स्म शीर्णम् । अवस्थते अवसानम्^१ । दूयते स्म दूनं च । हे राजेन्द्र, तव वैरिणां शत्रुणा भवतु इति प्रयोजनीयम् ।

धैर्यं शौर्यं च पौरुषे ॥१७१॥

त्रयः^२ पौरुषे । धौरस्य भावो धैर्यम् । शूरस्य भावः शौर्यम् । पुरुषस्य भावः पौरुषम् ।
युष्माकं भवतु इत्यध्याहार्थम् ।

५

क्षिप्राशुमङ्गवरं शीघ्रं सहसा झटिति द्रुतम् ।
तूर्णं जवः स्यदो रंहो रयो वेगस्तरो लघुः ॥१७२॥

षोडश^३ वेगे । क्षिपति^४ निरस्यति क्षिप्रम् । रक्षत्यय उणादौ ज्ञातव्य । अश्नुते आशु ।
कृवापाजीति उण् । मज्जति महति वा मज्ज्मुः^५ । इर्यति मान्तमव्ययम् अरम् । अदन्त च अरम् । शेते
कार्यं शीघ्र (शिङ्ग) ति व्याप्तोति वा शीघ्रम् । सहते सहसा^६ । अव्ययम् । भटति सधातीभवति
इदन्तमव्ययम् । झटिति^७ । द्रवति स्म द्रुतम् । त्वरते स्म तूर्णम् । जवन जवः । जुगतो । स्यन्दते
स्यदः । “स्यदो जव^८” इति साधुः । रहयस्यनेन रहः । रयते रोणाति वा उनेन रयः । वीय (विजय) ते
वेगः । तरत्यनेन तरः । ““सर्ववातुभ्यो मुन्” । लङ्घते भूमि लङ्घुः । सवेगः । गतिवचनो जवो धर्म-
वचना आशुशीघ्रादय इत्यर्थमेदः ।

सदागतिप्रस्तावादाह—

१५

साधीयोऽत्यर्थपत्यन्तं नितान्तं सुष्टु वै भृशम् ।

सत भृशे । साधुभ्यो हित साधोय^९ । ईयम् । अतिकान्तोऽथ वेला मात्राम् अन्तं च
अत्यर्थम् । अत्यन्तम् । अतिवेलम् । अतिमात्र च । नितान्यति स्म नितान्तम् । सुषौति सुष्टु ।

१. अनावसानभिना अष्टावपि शब्दा विशेष्यनिधनास्तेन कुटुम्बमिति विशेषमध्याहार्य है
राजेन्द्र तव वैरिणा कुटुम्ब क्षाम भवतु । एव शान्त कृशमित्यादपि योज्यम् । अवसानशब्दस्य भावल्यु-
डन्तत्वात् तव वैरिणामवसान नाशो भवत्विति विवेक । अवस्थते उवसानमिति टीकोक्तविग्रहस्तवसङ्गतः ।
अवपूर्वस्य “षोडशत कर्मणि” इत्यस्य भावलिंगि अवसीयते इति रूपम्, नववस्थते इति । कर्त्तरि लटि दिवादी
अवस्थतीति परस्मैपदमेव । नापि कर्तृकान्तो उवसानशब्द । कल्पत्यये “अवितित” इति रूपस्यैव सर्वसम्भत-
त्वात् । तस्मादवसायतेऽवसायो वा अवसानमिति विग्रहो युक्तः । २. कोपान्तरप्रमाणतो ष्ववहाराच्च
धैर्यादिशब्दाना परस्परकर्ममेदात्पर्यायानहन्त्वेऽपि बलसामान्यविवक्षया त्रयः पौरुषे इत्युक्तम् । ३. गतिव-
चनो जवो धर्मवचना आशुशीघ्रादय इत्यर्थमेदस्य वक्ष्यमाणत्वात् क्षिप्रादयस्तूर्णा-ता नव शीघ्रायें,
जवादयो लच्छन्तास्तस वेगायें इति सुवचम् । “द्राक् च रोऽहाय भटिति” एतस्तद्वास्य शीघ्रायतया पाठे
कर्त्तव्येऽपि पृथगस्य पाठो भटितिशब्दपुनरुक्तिश्च दोष । ४. क्षिपति विलम्बमिति शेषः । ५. “दु मस्तो
शुद्धौ” । बाहुलकात्सु । महित्वनशोरिति तुम् । स्कोरिति सलौपः । मज्जति कालात्पत्वे मद्भ्यु । ६. “षह
मध्यरो । असा प्रथयः यदा सहस्यति । “षोडशत कर्मणि” । आप्रथयो डित् । विभक्त्यन्तप्रतिरूपकमाका-
रान्तमव्ययम् । उदाहरणम्—“सहसा विदधीत न क्रियामित्यादि” । ७. “कट सङ्घते” । श्रौणादिक
इतिः । ८. का० स० ४१।३४। स्यन्देवंत्रिन लोपो दीर्घीभावश्च । स्यन्दनं स्यद इति भावविग्रहो
न्यायः । ९. “ओ विजी भयचलनयोः” । १०. का० उ० स० ४५६ । ११. अतिशयेन साधु बाढ वा
साधीय इति । साधुभ्यो हित इति टीकोक्तविग्रहस्तु न सङ्घच्छते । अतिशयायें ईयसो विधानात् । साधीय
इति मूलोकपदस्य क्लीबत्वेन हित इति पुविग्रहोऽपि तथैव ।

‘अपष्टुदयः—अपष्टु दुष्टु बुष्टु हरिदु मितदु यतदु शङ्कु धनु इत्यादयः । वै अव्ययम् । विभर्ति भृशम् ।

स्फुर्तं साधु खलु स्पष्टं विशदं पुष्कलामलौ ॥१७३॥

सप्त निर्मले । स्फुरत्यभिशायोऽस्मात् ३स्फुटम् । साध्यतीति साधु । खलतीति खलु ४ ।
स्पश्यते स्प स्पष्टम् । विशति चिते विशदम् । पुष्णातीति पुष्कलम् । न मलमस्मिन् अमलम् ।
५ प्रकाशम् । प्रकटम् ।

चित्राश्चर्चर्याद्गुतं चोद्यं विस्मयः कौतुकोऽप्यहो ।

षट् कौतुके । चित्र चयने । चिनोतीति चित्रम् । आचरतीत्याइचर्यम् । पारस्करादि-
त्वास्तुट् । भू सत्तायाम् । अद् पूर्वः । अद् विस्मितो भवत्यत्र अद्गुतः । “अदि भुवो दुत्” । चोद्यते इति
चोद्यम् । विस्मीयते इति विस्मयः । कुतुकस्य भावं कौतुकम् । अहो लोका आश्चर्यम् इति
१० प्रयोजनीयम् ।

अभियोगोद्यमाद्योगा उत्साहो विक्रमो मतः ॥१७४॥

पञ्चोद्यमे । अभियोजनम् अभियोग । यमु उपरमे । यम् उद्पूर्व । “चुरादेश्च”-इन् ।
“अस्योप० १०”-दीर्घः । उद्यमि इति जातम् । “मानुचन्वाना०” हत्वा । उद्यमि जातम् । उद्यमनमुद्यमः ।
भावे घञ् । “कारितस्य० ११” । उद्योजनम् उद्योग । उत्सहनमुत्साह । विक्रमण विक्रमः ।

५१ रहोऽनुरहसोपांशु रहस्यं च भिनत्ति कः ।

चत्वार एकान्ते । रहति व्यजति जनः सङ्गं यत्र सान्त रह । क्लीबे । अव्यय च । अनुगत
रह अनुरहस्यम् । “१३ अन्ववत्त्वेभ्यो रहस्” । उपासनुते अव्ययमुदन्तम् उपांशु । रहसि भव रहस्यम् ।
कः पुमान् भिनत्ति विदारयति । प्रञ्जलम् । एकान्तम् । नि शलाकम् । उपदूरम् । विजनम् ।
विविक्तम् । जनान्तिकम् ।

२० कीनाशः कृपणो लुब्धो गृध्नुर्दीनोऽभिलाषुकः ॥ १७५ ॥

षट् कृपणे । लोभेन क्लिश्यति बाध्यते १४ कोनाशः । कों वाणीं याचकाना नाशयति विनाशय-
तीति कीनाश । कल्पते रक्षितु न दु दातु कृपण । लुभ्यति स्म लुब्धः । गृध्नाति गृञ्जः । गृञ्जुरेत्यपि
स्यात् । लोभेन दोतते शोभते (दोयते ल्ययति) दीन । दीद् ल्यये । क्वचित् हानः इति पठन्ति । लष
कान्तो । अभिपूर्व । अभिलषतायेवशाल । अभिलाषुक । “शृकमगमहनवृथालसपतपदामुक्त०” ।

१. का० उ० स० ११५ । इति कुप्रत्ययः । २. भृशातोः शपत्ययः किदित्यर्थः । भृश्यतीति
भृश वा । “भृशु भ्र शु अथ पतने” । दिवादि । इगुपेति कः । भृशरत्रान्तर्भावितप्यर्थ । ३ स्फुटतीति
कर्तृविग्रहो न्याय । नत्वपादानकः तत्र घजि स्फोट इत्यापत्ते । अत्रेगुपेति क । ४. “खल सहृदैः” ।
बाहुलकादुः । खलुशब्दो नानार्थे । तदुकम्—“निषेधवाक्याऽलङ्कारे जिज्ञासाऽनुनये खलु” । अम० को०
३।३।२२५ । ५ “चित्र चित्रीकरणे” । चित्रयतीति चित्रम् । पचाद्यच् । इत्यन्यत्र । ६. आ इति
चर्यते भिनीयते इति विग्रहोऽन्यत्र । “आश्र्वयमनित्ये” इति सुट् । ७. का० उ० स० ४।२५ । ८ चोद्यशब्द
आश्र्वयते । तदुकम्—“चोद्यन्तु प्रेये प्रश्नेऽद्युतेषि च” अनेऽ स० २।३६२ । ९. का० स० ३।२।११ ।
१०. का०स० ३।६।५ । ११ का०स० ३।४।६।५ । १२ का०स० ३।६।४।४ । इतीनो लोपः । १३. का०स०
३।४।४।१ । अत्र राजादिवृत्ति २९ । १४ “क्लिशु विवाघने” । “क्लिशेरीज्ञोपधाया कन् लोपश्च लो नाम्
च” पा० उ० स० ५।६।६ । १५. का० स० ४।४।२।४ ।

कदर्यः । किंपचान । मितम्पच । क्षुल । क्षुलक । क्लीबः । क्षुद्र । वराकश्च ।

पाशनीतः सितो वद्धः सन्धानीतो नियन्त्रितः ।

नियामितः शृङ्खलितः पिनद्धः पाशितो पिषुः ॥ १७६ ॥

नव वद्धे । पाशं नीतः पाशनीतः । सीयते स्म स्तित । बध्यते स्म बद्धः । सन्धा प्रतिशा नीतः । प्रापितः सन्धानीतः । नियन्त्रं सजातमस्य नियन्त्रित । नियामो जातोऽस्य नियामितः । शृङ्खला ५ सजातोऽस्येति शृङ्खलितः । तारकितादिदर्शनादितच् । पिनद्धते स्म पिनद्धः । पाशः सजातोऽस्य पाशितः । क पिषुः शतुः ।

कान्तं च कमनं कप्रं कमनीयं मनोहरम् ।

अभिरामं र(रा)मणीयं रम्यं सौम्यं च सुन्दरम् ॥ १७७ ॥

दश वरिष्ठे (अतिसुन्दरे) । काम्यते कान्तम् । काम्यते कमनम् । काम्यते इत्येवशीलं १० कप्रम् । काम्यते बाञ्छथते कमनीयम् । “तव्यानीयौ” । मनोहरति मनोहरम् । मनोहारी । मनोरमम् । अभिरामणम् अभिरामम् । रमणस्य (जाय) हित रमणीयम् । रम्यते रम्यम् । सौमस्य भावः सौम्यम्^३ । सुन्द सौत्रोऽय सुन्दति सुषुटु नन्दयति इति निश्चल्या सुन्दरम्^४ ।

चारु श्लक्षणं च रुचिरं प्रशस्तं हृदयबन्धुरम् ।

दर्शनीयं मनोज्ञं च

श्रष्टौ मनोज्ञे । चरन्ति नेत्राण्यत्र चारु । शिष्यते युज्यतेऽनेन इलक्षणं ॥ । रोचते सर्वेष्यो रुचिरम् । प्रशस्तते स्म प्रशस्तम् । हृदयस्य प्रियम् हृदयम् । चित बन्नाति बन्धुरम् । हृदयते दर्शनीयम् । मनो जानातीति मनोक्षम् ।

चित्तपर्यायहारि च ॥१७८॥

चित्तहारि । मनोहारि । इत्यादीनि मनोहरनामानि शातव्यानि ।

अवश्यायं तुषारं च प्रालेयं तुहिनं हिमम् ।

नीहारम्

षड् हिमे । अवश्यायते अवश्याय । “दिहिलिहिशिलिश्वसिव्यध्यतीणश्याऽता च^५” एग्रहय । तुष्यन्त्यनेन तुषार । प्रलयादागत प्रालेयम्^६ । तोह्यत्यर्दयति तुहिनम् । तुहिर् अर्दने । हिनोति वर्धते जलमनेन हिमम् । निहियते नीहारः । मिहिका । धूमिका । देश्याम् ।

१ का० सू० ३।७।९ । २ रमणाय हितमिति विग्रहो युक्त । तस्मै हितमिति चतुर्थन्ताच्छ । मूले छुट्ठोभृदोषवारणाय रमणीयमेव रामणीयम् इति स्वार्थिकोऽुणिकार्यः । ३ सौमस्य भाव इति विग्रहोऽुयुक्त । “प्रकृतिजन्यबोधे प्रकारीभूतो भावः” इति सिद्धान्तात् सौम्य इत्यस्य सौमत्वमित्यर्थापत्ते । अतः सौमो देवताऽस्येति षुष्यत्ति, “सौमाट्यूण्” । इति द्यण् । अथवा सौम इव सौमः । ततश्चतुर्वर्णादित्वात्यण् इति रामाश्रमः । ४ सुषुटु द्रियते आद्रियते । दुधातोरप् । पृषोदरादित्वान्तुम् । सुषुटु उनति आद्रीकरोति चित्तं वा । सुपूर्वकात् “उन्दी क्लेदने” उन्दधातोर्बहुलकादरः । शकन्धवादित्वात्परस्यम् । इति रामाश्रमः । ५ नेत्र मनो वेति शेषः । “शिलष आलिङ्गने” । “शिलषे रचोपधाया” । ६ का० सू० ४।२ । ५८ । ७. प्रलीशन्ते पदार्थी अत्रेति प्रलयो हिमाचलः । तस्मादागत प्रालेयम् । अण् । केक्यमित्युप्रलयाना यादेरिय । पा० सू० ७।३।२ । इति यादेरियादेशः ।

तत्करं विद्धि मृगाङ्कं रोहिणीपतिम् ॥ १७६ ॥

तस्य करस्तकरस्तम् । हिमशब्दात्करशब्दे प्रयुच्यमाने चन्द्रनामानि भवन्ति । अवश्यायकर । तुषारकरः । प्रात्येयकरः । तुहिनकर । हिमकर । नीहारकर । मृगाङ्कः । रोहिणीपति । अष्टौ नामानि विद्धि जानीहि ।

५ पुषागं सञ्चरं प्राहुः

द्वौ प्रधानपुष्ये । पुमौँस्चासौ नामः भेषः पुषागः । संश्चासो नर सञ्चरः । प्राहुः ब्रूवन्ति ।

तिलकं च विशेषकम् ।

ललाटिका ललामापि पूर्णवाहं तथा द्रुमम् ॥ १८० ॥

१० 'षट् तिलके । तिलकाङ्क्षिः तिलकः । तिलतीति तिलकम् । विशिनष्टीति विशेष । स्वार्थेः कः । विशेषकः । लल्यते ललाटम् । के प्रत्यये ललाटिका । लल्यते ललामा । पूर्णं वाहयतीति पूर्णशाहः । द्रवति वृद्धिं गच्छति द्रुमः । तमालपत्रम् । चित्रकम् ।

अञ्जनं कज्जलं नागं गजपाटलमारुणम् ।

१५ षट् कज्जले । अञ्जयतेऽनेत्यज्जनम् । कषति नेत्रैरैर्ष्य कज्जलम् । न शोभाम अगति गच्छति नागम् । गजति शोभया मायति गजम् । पाटलाया हृदम् पाटलम् । गच्छति गच्छति शोभाम् आरुणम्^३ ।

सालं परिधि वृक्षं च

त्रयं प्राकारे । सरति गच्छति कालान्तर सालः । परिधीयते वेष्यते अनेन परिधि वृणोति नगरमाच्छादयति वृक्षम्^४ ।

कुल्यां स्त्रीं सारणीं विदुः ॥ १८१ ॥

२० त्रयः^५ पानीयनिर्गमनमार्गे । कुले यहे साधुः कुल्या । सृणाति वैरूप्यमाच्छुनति स्त्री । सरत्यनया सारणी । तो विदु कथयन्ति घनञ्जयकवयो भाष्यकर्तारोऽमरकीत्याचार्याश्च ।

चारोऽवसर्पः प्रणिधिर्निंगूढपुरुषश्चर ।

पञ्चं चारे । चरति शत्रुमण्डले चारः^६ । अवसर्पति अवसर्प । अपसर्पश्च । प्रकरेण

१ अत्र तिलकविशेषके टीकोक्तमालपत्रचित्रके च ललाटकृततिलकाऽलङ्करणे । तदुकम्—“तिलके तमालपत्रचित्रपुण्ड्रविशेषका” । अभिः० चिः० ३।३।७ । ललाटिका पत्रसमूहकृत-ललाटभूषणम् । तदुकम्—“पत्रपाशया ललाटिका” अभिः० चिः० ३।३।९ । ललामा दु सीमन्ताग्रे मरु-मणीभिरिव धार्यमाणं रत्नादिकृतभूषणम् । तदुकम्—“पुरोन्यस्त ललामकम्” अभिः० चिः० ३।३।६ । पूर्णवाहृमयोस्तु कोषान्तरे पाठो नोपलब्धः । २ पट् कज्जले । हृत्यविचारसहम् । अखनकज्जलौ समानार्थौ । नागगजपाटलारुणा श्वोऽकपोलादिरञ्जकलोहितरङ्गविशेषवाचका । तदुकम्—“अनेकार्थ-सङ्ग्रहे—“नागो मरुक्कजे सर्पे पुन्नागे नागकेसरे” २।३४ । “पाटलन्तु कुमुमश्वेतरक्षयोः” ३।७०।१ । “श्रुणोऽनूहसूर्ययो । सन्ध्या रागे द्वुषे कुष्ठे निःशब्दाऽव्यकरागयो” ३।१।९८ । ३ अरुणमेव आरुणम् । ४ वृक्षशब्दस्य सालार्थे कोषान्तरसंवादो नोपलब्धः । ५ अत्र द्वायिति वक्तव्यम् । स्त्रीशब्दोऽत्र कुल्या-सारण्यो ज्ञालिङ्गवैष्णव । तस्यार्थाः । ६ पूर्वमुक्ते उपि सिंहावलोकनन्यायेन चारेऽर्थेऽन्यानपि शब्दान् समुच्चिनोति । ७ चरति शत्रुमण्डले चरः, चरेरच् । तत स्वार्थिकोऽण् । चर एव चारः ।

नितरां गुतो धीयते प्रणिधिः । निगृदश्चासौ पुरुषः निगृदपुरुषः । चरतीति चरः । स्पशः । १० यथार्थ-वर्णः । मन्त्रशश्च ।

तद्वानुक्तः सहस्राक्षः

तस्मात् पूर्वोक्तशब्दात् परं धान् इति प्रयुज्यमाने सहस्राक्षनामानि भवन्ति । निगृ-पुरुषवान् । चरवान् इत्यादीनि शातव्यानि । ५

सत्यार्थं सूनृतं ऋतम् ॥१८२॥

सत्यार्थं द्वौ । सु सुष्टु ऋत सत्यं सूनृतम् । पृष्ठोदरादित्वान्नाडागमः । ऋच्छ्रुति गच्छ्रुति जन. प्रत्ययमन्त्रं ऋतम् । तथा चामरकोषे—“सत्यं तथ्यमृतं सम्यक् ।”

निस्तलं वर्तुलं वृत्तम्

त्रयो वर्तुले । निर्गतं तलं प्रतिष्ठाऽस्य निस्तलम् । अथवा निर्गतं तलादधोभागान्निस्तलम् । १० भूमौ न तिष्ठति वा । वर्तते भ्रमति वर्तुलम् । वृत्तयते स्म वृत्तम् । सर्वे त्रिषु ।

स्थपुटं विषमोन्नतम् ।

विषमोन्नते स्थपुटम् । स्थापयत्यात्मनो विषमोन्नतत्वे स्थपुटम् । प्रायः कलीवे ।

दीर्घं प्रांशु

द्वौ^३ दीर्घे । दृणाति दीर्घम्^४ । प्राशनुते व्याप्तोतीति प्रांशु^५ । १५

विशालं च बहुलं पृथुलं पृथु ॥१८३॥

चत्वारो विस्तीर्णे । विस्तारं विशति विशालम् । बहून् लातीति बहुलम् । प्रथते वर्षते पृथुलम् । गुणमात्रवृत्तेऽप्यते । पर्थते पृथु । वृहत् । उरुः । गुरु । विस्तीर्ण ।

उल्वणं दारणं तिगमं धोरं तीव्रोग्रमुत्कटम् ।

सप्त धोरे । उल्वणस्युल्वणम्^६ । पृष्ठोदरादित्वात्पद्मे लः । दारयति दारणम् । तितिक्षतीति तिगमम्^७ । शुरुति धोरम्^८ । तीवति तीव्रम् । तीव स्थौल्ये रक् । उच्यति उग्रम्^९ । उत्कटथते उत्कटम् । प्रतिभयम् । भीमम् । भयानकम् । आभीलम् । भीषणम् । भैरवम् । २०

शीतलं तिमिरं याथं मन्दं विद्धि विलम्बितम् ॥१८४॥

१ यथार्थं यथा अर्थं प्रयाजनं वर्णो जाति प्रसिद्धिर्वा यस्येति तदर्थः । २ अम० को० ११७२२। ३ वक्तुतस्यु प्राशुदीर्घयोरर्थभेद । दीर्घविस्तुतायतशब्दा पर्याया । प्राशुस्तून्त । तटुकम्—‘दीर्घमायतम्’ अम० को० ३।१७०। ४ ‘दृविदारणे’ । बाहुलकाद्वक । दृणाति हस्तव्वमिति दीर्घं । ५ प्रकृष्टा अशब्दोऽस्येत्यपि । ६ ‘विश प्रवेशने’ । बाहुलकादाल । रामाथमस्तु—‘वे शालच्छङ्कटचौ’ इति० पा० सूत्रेण विशब्दाच्छालच्प्रत्ययमाह । ७ उल्वणतीति उल्वणम् । पृष्ठोदरादिवुदोल इति पाठोऽत्र युक्तः । ‘वण शब्दे’ । अच् । उल्वणशब्दो वस्तुतः स्पष्टार्थकः, न तु दारणार्थकः । स्पष्टो हुद्वेजको भवति खलानाम् । अत उद्वेजत्वसामान्यात्तथाह । ८ तितिक्षतीति तिगमम् । ध्यक्षत्यय । ९ ‘शुर भीमा र्थशब्दयोः’ । धोरयतीति धोरम् । ष्यन्तादच् । १० उच्यति कुषा सम्बद्धते उग्रम् । ‘उच समवाये’ । दिवादिः । ‘ऋग्रेन्द्र’ इत्यादिना रक् गश्चान्तादेश ।

पञ्च कार्यविलासे (मिते) । शीतं लाति मन्दो भवति काये शीतलम् । ताम्यति स्वकार्य-मित्तिति तिमिरम्^१ । स्तिमिति स्थिमितं वा पाठः । यथा भव याथम् । मन्द्यते मन्दम् । विलम्ब्यते स्म विलम्बितम् । विद्धि जानीहि ।

स्वभावः प्रकृतिः शीलं निसर्गो विश्वसो निजः ।

५ पञ्च स्वभावे निजे । स्वः स्वकीयो भावः स्वभावः । प्रकरण प्रकृतिः । शील्यते शीलयति वा शीलम् । निसुज्यते निसर्गः । विश्वसितीति विश्वसः^२ । विश्वासरच । विश्रामः ।

योग्या गुणमिकाऽभ्यासः

त्रयोऽभ्यासे । युज्यते योग्या^३ । गुण्यते उद्दर्निश गुणनिकाः^४ । अभ्यसनमभ्यासः ।

स्यादभीक्षणं सुहुर्महुः ॥ १८५ ॥

१० मुहुर्मुहुर्वारं वार स्यात् भवेत् । अभीक्षणम् । अभीक्षणम् अभीक्षणम् । अभिमुखमीक्षते वा अभीक्षणम्^५ । नितराम् ।

मृषालीकं मुधा मोघम्

चत्वारोऽलीके । मृष्यते सहते नारकं दुःखमनेन मृषा । आदन्तमव्ययम् । अलति स्वस्वाद्वा- (स्वर्गा)निवारयति अलीकम् । मुच्चति व्यजति निमित्त मुधा । आदन्तमव्ययम् । मुद्यतेऽत्र चित्त मोघम् ।

विफलं वितर्थं वृथा ।

१५ निष्फलवचने त्रयः । विगत फल विफलम् । विगत तथा सत्य यस्मात् वितर्थम् । वृणो-त्याच्छादयति गुणान् वृथा । अव्ययम् ।

विधुरं व्यसनं कष्टं कृच्छ्रं गहनमुद्धरेत् ॥ १८६ ॥

पञ्च कटे । कष्टेन विधुनोति शरीर विधुरम् । व्यस्यते अनेन व्यसनम् । कष्यते (कपति) कष्टम् । कृणोति छिनति दुखेन कृच्छ्रम्^६ । गाहते गहनम् । उद्धरेत् निस्तरेत् ।

समस्तं सकलं सर्वं कृत्स्नं विश्वं तथाऽखिलम् ।

षट् समते । समस्यते एकीकरोति समस्तम्^७ । सम ग्रसते समग्रम्^८ । समान कलयतीति १० सकलम् । सरति सर्वम् । कृत्सति वेष्यति व्याख्यातोति कृत्स्नम् । विश्वति तिष्ठति सर्वत्र विश्वम् । नास्ति विल शून्यमस्याखिलम् । निखिल च ।

१ “तिम आद्रीभावे” । तिम्यति आद्रीभवति तिमिरः । विलम्बशीलो जन सर्वदाऽर्द्ध इव शीतः स्फूर्तिरहितश्च भवति । २ विश्वसशब्दस्य प्रकृत्यये प्रमाणान्तर नास्ति । एव विश्वासो विश्रामोऽपि । विश्वसशब्दाऽन्वाख्यानमपि व्याकरणादस्पष्टम् । अतोऽत्र त्रिष्वपि मूलटीके एव प्रमाणम् । ३ योगे चित्तैकाद्ये साधीति योग्या “तत्र साधु” रिति यदन्यत्र । ४ गुण्यते गुणाना । चुरादिग्यजन्ताद् भावे “यासश्रन्येति युच् । ततः स्वार्थे क । गुणनैव गुणनिका । ५ अभिक्षणौति अभीक्षणम् । “क्षणु तेजने” । बाहुलकाड्डमुः । अन्येषामपीति दीर्घः । इति रामाश्रम । ६ अत्र मृषालीकशब्दौ वद्यमाणो वितर्थ-शब्दशास्त्रवाचक । मुधामोघशब्दौ विफलवृथाशब्दौ च वद्यमाणौ व्यर्थवाचका इति चिवेकोऽन्यत्र । तदुक्तममरे—“मृषा मिथ्या च वितर्थे” ३।१।१५ । “अलीक त्वप्रियेऽन्तते” ३।३।१२ । “मीर्व निरर्थकम्” ३।१।८।१ । व्यर्थके तु वृथा मुधा” ३।४।४ । “वितर्थ त्वन्तृत वचः” १।८।२।१ । इति । ७. कर्त्तिति कृत्सति वेति द्वीप स्वातः । ८ समस्यते स्म समस्तम् । “असु चेपणे” । कर्मण कः । ९ सङ्कृतमग्रमस्य समग्रम् । १० सह कलाभिर्वर्तते सकलम् ।

शकलं विकलं खण्डं शलकं लेशं लवं विदुः ॥ १८७ ॥

षट् खण्डे । शक्नोति काये शकलम् । शलक च । विगता कला यस्मात् तद् विकलम् । खण्डते खण्डः । लिशते लेशः^१ । लिश विच्छु गतौ । “अर्कर्तरि च कारके संजायाम्^२” । रौति शब्दं करोति लवं । विदु कथयन्ति । अर्थम् । नेम । सामि । असम्पूर्णम् । दलं च ।

मर्म कोपं च

द्वौ मर्मणि । व्रियतेऽनेन मर्म । नान्तम् । कुण्यते कोषम्^३ ।

कलहं परिवादं छलं नयेत् ।

करेण हन्त्यत्र कलहः । परिवदन परिवाद । छलयती (त्यन्ते)ति छलम् ।

शोणितं लोहितं रक्तं रुधिरं क्षतजासुजम् ॥ १८८ ॥

षट् रुधिरे । शोण्यते वर्ण्यते देहोऽनेन शोणितम् । तालव्य । रोइति देवे जायने लोहितम् । १० रजति रस रक्तम् । रुद्धिदि रुधिरम् । क्षताद् व्रणाजायते क्षतजम् । अस्यते क्षिप्यते असुक् ।

सन्ततानारताजसान्वहं कन्यापतिर्वरः ।

त्रयः (चत्वारः) सन्तते । सन्तन्यते सम सन्ततम् । न आरतम् अनारतम् । न जम्यतीत्येवशील मज्जस्म् । अन्तहम् । कन्यापतिर्वर नन्दतु इति प्रयोजनीयम् ।

उद्भाहः परिणयनं विवाहश्च निवेशनम् ॥ १८९ ॥

चत्वारो विवाह । उद्भवन उद्भाहः । परिणीयते परिणयनम् । विवाहते विवाहः । निवेशयते निवेशनम् ।

शुषिरं विवरं रन्ध्रं छिद्रम्

चत्वारशिष्ठद्रे । शुष्यति जलमत्र “शुषिरम्” । उषशुशीति रः । विवियते भूम्यमनेन विवरम् । रणति वानेन रथति द्विस्ति प्राणिन वा रन्ध्रम् । छिद्रते तत् छिद्रम् । कुहरम् । विलम् । निर्व- २० अनम् । रोकम् । त्रवभ्रम् । वपा । शुषि ।

गर्ता च गह्वरम् ।

गर्ताया द्वौ । पतित प्राणिन गिरति गर्ता । गर्तः । ग्रहतीति गह्वरम् ।

श्वभ्रं रस्यं च पातालं नरकं यान्त्यमेघसः ॥ १९० ॥

चत्वारो नरके । व्ययते वर्धतेऽत्रोपरि चरतो शङ्का, शवभ्रान्ति वा श्वभ्रम् । रसाया भव रस्यम् । पतन्त्यस्मिन् पातालम् । नरा कायन्त्यत्र नरकः । नारकः । पुसि । अमेघस बुद्धिरहिता

१ “लिश अल्पीभावे” । दिवादि । ततो श्वविधानमर्थाऽनुरूपम् ॥ २ का० स० ४५४ । ३ लूयते छिद्रते लव । अट्टोरप् । टीकोक्तविग्रहस्तु न लवनर्थाऽभिधायो । ४ कोष-शब्दं पेशीवाचकां मेदिन्या लभ्यते । पेशीना मर्मस्थानवमायुर्वेदे सम्मतम् । अत उपचारात् कोपोऽपि मर्मेयम्युन्नेयम् । तदुक्तम्—‘कोपोऽुक्ती कुडमले पात्रे दिष्ट्ये खङ्गपिधानके । जातिकीषेऽर्थसहाते पेश्या शब्दादिस्तद्ग्रहे’ । षा०वर्ग० ६ । ५ “तिमिरुधिमदिमन्दिच्चिदिवधिरुचिशुषिष्य किर.” का०उ० १२३ । सुषिरस्यास्तीति विग्रहे तु “उषसुषिमुष्कमधो र”^६ पा०स० ५।२।०७ । इति र । रप्त्ययपत्ते दन्त्यादिरयम् । उषसुषीति पा० सत्रे दन्त्य एव पाठः । क्षीरस्वाम्यपि दन्त्यमेव पपाठ ।

सम्यक्त्वारिप्रहिता यान्ति गच्छति नरकम् । निरय । दुर्गति ।

अद्भ्रं भूरि भूयिष्ठं वंहिष्ठं बहुलं बहु ।

प्रचुरं नैकमानन्त्यं प्राज्यं प्राभूतपुष्कलम् ॥ १६१ ॥

द्वादश प्रभूते । न दध्रमदध्रम् । भवति प्राचुर्यमत्र भूरि, भूयिष्ठं च । अतिशयेन बहु भूयिष्ठम् ।

५ “बहो॑ लौपो॒ भू॒ च बहो॑” “दृष्टस्य॒ यिद्देविति॑” भूरादेशो यिडागमश्च । अतिशयेन बहुलो वंहिष्ठः । वहिति॑ प्राचुर्ये॑ बहुलम् । प्रचुरति॑ प्रचुरम् । न एक नैकम् । अनन्तस्य भाव आनन्त्यम् । प्राज्यते प्रकर्षेण वीयतेऽनेन वा प्राज्यम् । प्रामति॑ स्म प्राभूतम् । प्रभूत च । पुष्टि॑ पुष्कलम् । पुष्टं च । पुरुजम् । पुष्टम् ।

भवो भावश्च संसारः संसरणं च संसृतिः ।

तन्वज्ञश्तुरो धीरस्त्यजेऽजन्माजवं जवम् ॥ १६२ ॥

१० अद्यौ ससारे । भवतीति भवः । भवतीति भावः । “वा ज्वलादिनीभुवो णः” । ससरति अस्मिन् संसारः । संसियते अस्मिन् संसरणम् । सपरण संसृतिः । जनयतीति जन्म । आजवतीति आजवम् । जवति चतुर्गत्या भ्रमति (अत्र) जव ।

ऊर्जस्फूर्जस्वी तरस्वी तेजस्वी च मनस्यपि ।

चत्वार (पञ्च) त्तेजोयुक्तपुरुषे । उक्तं ऊर्जा वाऽस्त्यस्येति ऊर्जस्वी । एकोऽस्यास्तीति॑ १५ सूर्जस्वी । तरोऽस्यास्तीति॑ तरस्वी । तेजोऽस्यास्तीति॑ तेजस्वी । मनोऽस्यास्तीति॑ मनस्वी ।

मास्वरो भासुरः शूरः प्रवीरः सुभटो मतः ॥ १६३ ॥

पञ्च सुभटे । नासते इत्येवशीलो भास्वरः । भासुरः । “भिदि॑भासिमजा शुरः” । शूरयति॑ शूरः । शूर वीर विकान्तौ । प्रवीरयते प्रवीर । सुषु भटः सुभट । विकान्त ।

तनुत्रं वर्म कवचमावृतिर्वाणवारणम् ।

२० पञ्च कवचे । तनु शरीर त्रायते रक्षति तनुत्रम् । वृणोत्यङ्ग वर्म । कन्धते वर्धते शरीरम् अनेन कवचम् । आवरणमावृति॑ । वाणाना वारण निषेधन वाणवारणम् ।

कूर्पासं कञ्चुकम् ।

द्वौ कञ्चुके । करोति शोभा कूर्पासम् । कर्पास च । कन्धते वर्धते कञ्चुकः ।

छत्रमातपत्रोष्णवारणम् ॥ १६४ ॥

२५ त्रयश्चत्रे । वर्षातपौ छादयतीति छत्रम् । त्रिषु । छत्र, छत्री । आतपात् त्रायते आतपत्रम् । उष्णस्य वारणम् उष्णवारणम् । वृपलद्दम ।

केशं शिरोरुहं वालं कचं चिकुरमीहयेत् ।

पञ्च केशे । के मस्तके शेते केश । शिरसि रोहति शिरोरुह । वल्यते सवियते वालः । मस्तके चीयते कचति वा कच । चीयते यनेन चिङ्गुरः । चिकुरश्च । मूर्धजः । शिरसिः ।

१ पा० स० ६।४।१५८ । २ पा० स० ६।४।१५६ । ३ प्रचोरति प्रचुरम् । चुर स्तेये । चुरादीना शिङ्गैकल्पिकः । इगुप्तेति॑ क । प्रगत चुराया प्रचुरमिति॑ वा रामाश्रमः । ४ प्राज्यते काम्यते “अञ्जू व्यक्त्यादै॒” अञ्जोः सज्ञायामिति॑ क्यप् । यद्वा प्रवीयते “अञ्ज गतिचेष्टणयोः” क्यप् । वोभावो नेति॑ टीकाशय । ५ का० स० ४।२।५५ । इति॑ ण । ६ “कपिपिसिभासीशस्याप्रमदा च” का० स० ४।४।४७ । इति॑ वरः । ७. का० स० ४।४।४१ ।

वृजिन १ । कुन्तलः ।

चूडापाशं च धमिमलं कवरी केशबन्धनम् ॥ १६५ ॥

चत्वार केशबन्धने । चुद संचोदने । “चुरादेशच^२” हन् । नामिनो^३ गुण । चोदन चूडा । “ऊन चूदपीडमृगयतिंय इनन्तेभ्य सजायाम्” अद् प्रत्ययः । कारितलोप । निपातनात् उपधाय हस्तव्यम् । दस्य डत्वम् । चूडाया, शिखायाः पाशः बन्धन चूडापाशः । धमिः सौत्रः । धम्यन्ते केशा ५ वधन्ते धमिमलः । क मस्तक वृणोति कवरो नददिव्वादी कवरी । इदन्तोऽपि कवरि । आबन्तो वा कवरा । केशस्य बन्धन केशबन्धनम् । वेणी । प्रवेणी । वीणा च

उररीकृतमप्यूरीकृतमङ्गीकृतं तथा ।

त्रयोऽङ्गीकारे । ऊरीप्रभृतीना कृत्रा सह ममासो वा भवति । तथाहि—ऊरी उररी अङ्गी-
करणो विस्तारे च । आश्रुतम् । प्रतिज्ञातम् । उपगतम् । १०

अस्तुकारोऽभ्युपगमे

अ+युपगमे अङ्गीकारे अस्तुकार कथ्यते । अत्त करोतीति(करणम्)अस्तुकार । “कर्मण्”
अरण यत्यय । अस्योप० वृद्धि । व्यजनम्^१ । “सत्यागदास्तूना कारे” । मकारागम ।

सत्यङ्गारः पणार्पणे ॥ १६६ ॥

सत्यापणे सत्य करोतीति सत्यङ्गारः ।

१५

सौहार्दं सौहृदं हार्दं सौहृद्यं सर्व्यसौरभम् ।

मैत्री मैत्रेयिकाजयं सहाय्यं संगतं मतम् ॥ १६७ ॥

दश (एकादश) सर्वये । सुहृदा भावः सौहार्दम् । सौहृदम् । हार्दम् । सौहृद्यमेकमेव
वाक्यम् । सर्वुभाव सर्व्यम् । सुरख्येद (भेरिद) सौरभम् । मित्रस्य भावो मैत्री । मैत्र्या नियुनो
मैत्रेयिक । न जीर्यते अजर्यम् । सहाजी (अथ) ते सहाय्यम् । सगमनम् सज्जतम् । २०

क्षेमं कल्याणमुभयं श्रेयो भद्रं च मङ्गलम् ।

भावुकं भविकं भव्यं श्वोवसीयं शिवं तथा ॥ १६८ ॥

दश (एकादश) कल्याण । त्रिष्णोति क्लेशान् क्षेमम् । कल्यते जायते कल्याणम् । कल्य
नीरुत्त्वमनिति वा कल्याणम् । प्रकृष्ट प्रशस्य श्रेयस् । सान्तम् । भद्रते ह्नादते सुखीभवत्यनेन भद्रम् ।
म पाप गालयतीति मङ्गलम् । भवनशील भावुकम् । “श्रुकमगमहनवृषभूस्थालवपतपदामुकज्”^२ । प्रशस्तो
भवोऽस्यास्तीति भविकम् । पुण्यकतो भवितव्य भवति भवयम् । श्व शोभनश्च वरीयः इवोवसीय ।
श्वोवसीयस च । “श्वसो वसीयस्” । शीयते तनूकियते दुखमनेन शिवम् । भाष्यविधातणां श्रीमद्भर-
कीर्तना शिव भवतु । २५

१ वृजिनशादो भड्गुरवाची । तदुक्तम्—“वृजिन भड्गुर सुगमराल जिह्मूर्तिमत्”
अभिं० चिं० द१९३ । लक्षण्या भड्गुग्केशोऽपि वृजिनशब्दप्रयोग । २ का० सू० ३।२।१ ।
३ का० सू० ३।५।२ । ४ का० सू० ४।५।२ । अत दुर्गवृत्ति “ऊनचूदपीडःगयतिंय इनन्तेयौ या
प्राप्ते वचनम्” इत्येवल्पा । ५ अस्तुकरणमस्तुकार । ६ का० सू० ४।३।१ । ७ “व्यञ्जनमस्वर परवर्णे
नयेत्” का० सू० १।१।२।१ । ८ का० सू० ४।१।२।३ । ९. सत्यस्य करण ललङ्गारः । भावे धज् । कृ-
विग्रहष्टीकोतस्त्वयुक्त । १० का० सू० ४।४।३।४ । ११ का० सू० २।६।४।१ । वृत्ति २७ ।

वक्ता वाचस्पतिर्यत्र श्रोता शक्तस्तथापि तौ ।
शब्दपारायणस्यान्तं न गतौ तत्र के वयम् ॥ १६६ ॥

अस्य श्लोकस्य सुगमव्याख्या ।

तथापि किञ्चित् कस्मैचित् प्रतिबोधाय सूचितम् ।
५ वोधयेत्क्यदुक्षिणो मार्गज्ञः सह याति किम् ॥ २०० ॥

तथापि मया धनञ्जयकविना सूचित कथितम् कस्मैचित् प्रतिबोधाय ज्ञानाय । उक्तिशो वोधयेत् ज्ञापयेत् । मार्गज्ञ किं सह याति गच्छति, अपि तु न गच्छति ।

प्रमाणमकलङ्कस्य पूज्यपादस्य लक्षणम् ।
द्विःसन्धानकवेः काव्यं रत्नत्रयमपश्चिमम् ॥ २०१ ॥

१० एतद्रत्नत्रयमपश्चिम नवीनमपूर्व वर्तते ।

कवेर्धनञ्जस्येयं सत्कवीनां शिरोमणे: ।
प्रमाणं नाममालेति श्लोकानां हि शतद्वयम् ॥ २०२ ॥

धनञ्जयस्य कवे, सत्कवीना शिरोमणे इति अमुना प्रकारेण इयं नाममाला श्लोकाना शतद्वय २०० प्रमाणमस्ति ।

१५ ब्रह्माणं समुपेत्य वेदनिनदव्याजात् तुषाराचल-
स्थानस्थावरमीश्वरं सुरनदीव्याजात् तथा केशवम् ।
अप्यम्भोनिधिशायिनं जलनिधिध्वानोपदेशादहो
फूल्कुर्वन्ति धनञ्जयस्य च भिया शब्दाः समुत्पीडिताः ॥२०३॥

आहं लोका धनञ्जयस्य च भिया कृत्वा शब्दाः समुत्पीडिता सम्यक् प्रकारेण पीड़िता २० फूल्कुर्वन्ति । कि कृत्वा पूर्व वेदनिनदव्याजात् मिषात् व्रद्वाण उमुपेत्य प्राण्य, ईःवर तुषाराचलस्थान-स्थावर सुरनदीव्याजात् प्राण्य, केशव श्रीविष्णु कि विशिष्ट अम्भोनिधिशायिन जलनिधिध्वानोपदेशात् समुपेत्य सुगमोऽय श्लोकः ।

इति महापण्डितश्रीमद्भर्कीर्तिना त्रेविद्येन
श्रीसेन्द्रवंशोत्पन्नेन शब्दवेधसा कृताया
धनञ्जयनाममालाया प्रथमं काण्ड
व्याख्यातम्

श्रीमद्भनञ्जयकविविरचिता

अनेकार्थ नाममाला

—०—

जिनेन्द्रं पूज्यपादं च चैलाचार्यं शिवायनम् ।
अहन्तं शिरसा नत्वाऽनेकार्थं विवृणोम्यहम् ॥ १ ॥
गम्भीरं सचिरं चित्रं विस्तीर्णार्थं प्रसाधकम् ॥
शाब्दं मनाकृ प्रवक्ष्यामि कवीनां हितकाम्यया ॥ २ ॥

गम्भीरं सचिरं मनोङ्ग चित्रं विस्तीर्णार्थं प्रसाधकम् । सुगमव्याख्याऽस्ति ।

५

अहंतिपनाकिनौ शेषम्
शम् इति द्विवचनान्तं पदम् ।

जिनावहंचथागतौ ।

जिनौ कथ्येते ।

वेदसूर्यों विवस्वन्तौ

१०

वेदश्च मूर्यश्च वेदसूर्यों विवस्वन्तौ स्यौं कथ्येते ।

विष्णुरुद्रौ वृषाकर्णी ॥ ३ ॥

विकुण्ठाविन्दगोविन्दौ अनेन्तौ शेषशार्ङ्गिणौ ॥

शेषश्च धरणेद्, शार्ङ्गो च विष्णु. शेषशार्ङ्गिणौ ।

जीमूर्तौ तु करिक्रीडौ पूर्जन्यौ शक्रवारिदौ ॥ ४ ॥

१५

वनमम्भसि कान्तारे

अम्भसि कान्तारे वनम् ।

भुवनं विष्टपेऽर्गसि ।

सुगमव्याख्या ।

१. श कल्याणं भवतीति शम्भु. । दुग्रत्ययः । केशवत्रह्वाची च । तदुक्तम्—‘शम्भु स्याद् ब्रह्मशिवयोरहर्त्यपि च केशवे, । इति वि० लो० भा० व० ९ । हैमे च—‘शम्भुर्वा॒हतोः शि॒वे’ । २१६ । इति च । २ विष्णु, अतिवृद्ध, जित्वर, इत्येतेष्वपि जिन । तदुक्तम्—‘जिनस्त्वर्हति चुद्रेऽतिवृद्धजित्वरयोऽस्मिन्’ वि० लो० ना० व० ८ । हैमे—‘जिनोऽर्द्धुद्विष्णुपु’ २।२६९ । ३ “विवस्वन् देवसूर्योः” अनेऽ स० ३।३।७ । अथ देवशब्दपाठात्प्रस्तुतेऽपि देवशब्द एव युक्त. । ४ अनिश्च । तदुक्तम्—‘वृषाकपिर्वासुदेवे शिवेऽन्ना च’ अनेऽ स० ४।२।१६ । ५ अनविवरायनन्तार्थ । “अनन्तः केशवे शेषे पुमाननवधौ त्रिषु” इति मेदिनी । ६. “जीमूर्तो वासवेऽम्भुदे । धोपकेऽद्वौ भृतिकरे” इति० अनेऽ स० । ७ पूर्जन्यो मेषगर्जितेऽपि । तदुक्तम्—“पूर्जन्यो मेषशब्देऽपि ध्वनदम्भुद-शक्रयो” इति मेदिन्याम् ।

धृतं सर्पिषि पानीये विषं हालाहले जले ॥ ५ ॥
 तल्पं दरेषु शश्यायां ज्योतिश्वसुषि तारके ।
 घबले सुन्दरे रामो वामो वक्रे मनोहरे ॥ ६ ॥
 नक्षत्रे मन्दिरे धिष्यम्

५ देवेष्टि शब्दं करोत्यत्र जनो धिष्यम् । नपुसकम् । धिप शब्दे ।
 वसने गगनेऽम्बरम् ।
 वसने गगने अम्बरं वर्तते । अम्ब शब्द राति ददातीति अम्बरम् ।
 परिधौ पादये सालः
 परिधौ पादये सालो वर्तते । सा लःमौ लातीति साल ।
 १० “सालः शर्जनतर्गौ वृक्षमात्रप्राकारयोरपि” इति हैम ।
 सिन्धुः सोतसि योषिति ॥ ७ ॥
 सोतसि योषिति सिन्धु । स्यन्दते सिन्धु ।
 सारसः शकुनौ ध्रुते
 सरसि तडगे भव २ सारसः ।

५१ केतनं दीधितौ ध्वजे ।
 केतन्ति जानन्त्यत्र केतनम् । तथा च—
 “कृत्ये निमन्त्रणे चिह्ने मन्दिरे केतनं विदुः ।”
 मयूखः कीलके दीसौ
 मयते विस्तार यातीति मयूख ।

२० पतङ्गः शलभे रवौ ॥ ८ ॥
 पततीति पतङ्गः । पन्तृ गतो ।

अञ्जनः कञ्जले नागे
 कञ्जले नागे अञ्जनो वर्तते । अञ्ज वयक्तिश्चणकान्तिम् । विक्रमेण^३ अञ्जते प्रकटं-
 कियते अञ्जन ।

२५ सारङ्गः पृष्ठे गजे ।
 सरतीति सारङ्ग ।

सरलः प्रगुणे वृक्षे
 कृजुत्वात्सरलः ।

३० पुनागः सन्नरे तरौ ॥ ९ ॥
 पुमोश्चासौ नाग श्रेष्ठ ।

१. अनेऽ स० २०८७ । २. धूतपक्षे तु अरसेन द्वैषेण सहितः सारम इति विवेक ।
 ३. गजोऽपि विक्रमेण जायने, कल्लोऽपि विक्रमणबलेन म्रद्यते । ४ सार दृढमङ्ग यस्येत्यपि । सरतीत्यस्य स्थाने सारयतीति युक्तम् । ५. “पुनागस्तु सितोत्पत्ते । जातीकले नरश्रेष्ठे पाण्डुनागे दुमान्तरो” इति मेदिनी

पाञ्चञ्जन्योऽनले शङ्खे

पञ्चजने पाताले भवः पाञ्चञ्जन्यः ।

कम्बुः^१ शङ्खे मतञ्जजे ।

कम्बुः सौत्र कम्बयते वर्णर्थे कंबु । अथ वा कवृ वर्णे उणादित्वादस्मादेव नकारागमश्च ।

कस्वरो द्युभवे द्युमने

द्युभवे स्वर्गोऽन्दवे द्युमने सुवर्णे ५० ४८ । कुत्सित स्वरति कस्वरः ।

स्यन्दनं शकटेऽम्बुनि ॥ १० ॥

स्यदन्ते स्यन्दनम्^२ ।

अद्विर्गिरिवनस्पत्योः

गिरिश वनस्पतिश्च गिरिवनस्पती तयोर्गिरिवनस्पत्योः । अत्ति आकाशमित्यद्विः ।

शिखरी तरुभूधयोः

शिखरमस्ता तीति शिखरी ।

राजा चन्द्रमहीपत्योः ।

राजने इति राजा ।

द्विजो दशनविप्रयोः ॥ ११ ॥

द्विर्जतो द्विजः ।

मोचामरक्षियो रम्भा

ब्रह्मार्पणपि रमयतीति रम्भा ।

कदली ध्वजमोचयोः ।

केन वायुना दल्यते विद्यर्थते कदली ।

अशोकः सुमनस्तर्वोः

न शोको यस्माद्यस्य वा अशोकः ।

सुमनाः सुरपुष्पयोः ॥ १२ ॥

सुरश्च पुष्प च सुरपुष्पे तयो च्चुरपुष्पयोः । शोभनचित्तः सुमनाः ।

मुक्तारजतयोस्तारः

तीर्थते तारः ।

भूरि भूयः सुवर्णयोः ।

पुण्यवन्सु भवतीति भूरि । कलीवे ।

पानीयदुग्धयोः क्षीरम्^३

घस्तु अदने । सौत्रोऽयम् ।

३०

१ “पाञ्चञ्जन्यस्तु विष्णुशङ्खे द्रुमान्तरे” इति मेदिनी । २ “कम्बु पुमान् गजे । वलये शङ्खे-शम्बुककन्धरामले के लित्रियाम्” इति विं० लौ० बा० व० २ । ३ “स्यन्दनं प्रसवे नीरे स्यन्दनस्तिनिशे रथे” विं० लौ० ना० व० १५१ । ४ राजा प्रभौ च रूपतो द्वित्रिये रजनीपतौ । पक्षे शक्ते च पुनिस्यात्” इति मेदिनी । ५ घस्तु अदने । “घस्तु अदने” । घसेः किञ्चेति कीरः ।

पयः सलिलदुर्घयोः ॥ १३ ॥

पीयते पयः ।

कालप्रकर्षयोः काष्ठा

कालश्च त्रुट्यादिलक्षणः ।

५

“स्वस्थे नरे सुखासीने यावत्स्पन्देत लोचनम् ।

तस्य त्रिशत्तमो भागस्त्रुटिरित्यभिधीयते ॥”

अथवा--

“सर्वपस्य प्रयत्नेन त्रिपात्य पततोऽम्बरात् ।

द्वियव यावदध्वान कालः स (च) त्रुटिः स्मृतः ॥”

प्रकर्षश्च प्रकर्षता उत्कृष्टता वा । कालश्च प्रकर्षश्च कालप्रकर्षयो तयो कालप्रकर्षयोः काष्ठा १० कथ्यते । काशते भासते काष्ठा । शान्तोऽयम् ।

कोटिः संख्याप्रकर्षयोः ।

कुट्टीति कोटिः ।

“कियती पञ्चसहस्री कियती लक्षा च कोटिरपि कियती ।

औन्नार्योन्नतमनसा रत्नवतो वसुमती कियती ॥”

१५

रन्ध्रसंश्लेषयोः सन्धिः

सन्धान सन्धिः ।

“सन्धिर्योन्नो सुरज्जाया नाश्चेऽद्गृहे श्लेषभेदयोः” इति हैमी ।

सिन्धुर्नदसमुद्रयोः ॥ १४ ॥

स्वन्दने सिन्धु ।

२०

निषेधदुःखयोर्वर्धा

वन्धन (वाधन) वाधा । वारु प्रतिवाते ।

व्यामोहो मूर्खमौद्ययोः ।

व्यामुद्यते व्यामोह ।

कौपीनाकारयोर्गुद्यम्

२५

गुद्यते गुह्यम् । गुह्य सवरणे । “गुह्यमुपस्थे रहस्ये च” इति हैमी ।

कीलाल रुधिराम्भसोः ॥ १५ ॥

कीला लातीति कीलालम् । “कीलाल रुधिरे नीले” इति हैमी ।

मूल्यसत्कारयोरर्धः

अर्द्यने पूज्यतेऽनेनत्यर्थः । “‘ध्यज्ञनाच’ धन् । हांपवत्वादीर्थो ना “न्यद्ववादीना इश्वरः” ॥” ।

३०

जात्यः श्रेष्ठकुलीनयोः ।

१ अनेऽ स० २१२५७ । २ व्यामोहशब्दस्य मूर्खार्थे मूल मृग्यम् । ३ अनेऽ स० २१३५८ ।

४ कीला ज्वालामलति वारयति । अल पर्याप्त्यादौ । इति जले विग्रह । उचिरार्थे तु टीकोक्त । ५ अनेऽ स० ३१६८३ । ६ का० स० ४१५१९९ । ७ का० स० ४१६१५७ ।

अष्टकुलीनयोर्जात्यः । जात्या भवो जात्यः ।

मेघवत्सरयोरज्जदः

अवतीति अज्जदः । कुन्दादय १—“कुन्दवृन्दमन्दादा.” । “अज्जदः संवत्सरे मेघे मुस्तके गिरिभिद्यपि २ ।”

ताक्षर्यो हयगरुत्मतोः ॥ १६ ॥

५

तृक्षस्यात्पय ताक्षर्य । तुंसि ।

स्तव्यथास्थूणयोः स्तम्भः

स्तम्भ इति सौत्रोऽय धातु ।

चर्चा चिन्तावितर्कयोः ।

चर्चण चर्चा ।

हरकीलकयोः स्थाणु

तिष्ठतीति स्थाणु ।

स्वैरः स्वच्छन्दमन्दयोः ॥ १७ ॥

१०

स्वस्य ईर स्वैरः । ३स्वस्यात ऐतर्मारेरिणोरपि वक्तव्यम् । तथा चालङ्कारे—

“स्वैरं विहरन्ति स्वैरं शेते स्वैरं च जल्पति ।

१५

मिष्ठुरेकः सुखो लोकं राजचोरभयोऽन्नितः ॥”

“स्वैरो मन्दे स्वतन्त्रे च” इति हैमी ।

शङ्कुः सङ्कीर्णविवरे पलालायौ च कीलके ।

संख्यायाम्

श कायति कूयते वा “शङ्कु ।

२०

काननोदभूते वह्नौ दावो दवोऽपि च ॥ १८ ॥

काननोदभूते वह्नौ दावो दवोऽपि च । दुनोतीति दवः । दाव । “वा ज्वलादिदुभुवो णः” ।

कीनाशः कृपणे भृत्ये कृतान्ते पिशिताशिनि ।

तथा पुण्यजनान् प्राहुः सजनान् राक्षसानपि ॥१९॥

लोभेन विलश्यते बाध्यते कीनाश । तालव्यः ।

२५

विरोचनो रवौ चन्द्रे दनुमूलौ हुताशने ।

विरोचते इत्येवशीलो विरोचन ।

हंसो नारायणे ब्रह्मे यतावश्वे सितच्छदे ॥ २० ॥

हन्तीति हस ।

सोमश्वन्दोऽमृतं सोमः सोमो राजा युगादिभूः ।

३०

सोमः प्रतानिनीभेदः सोमपोऽगस्त्यदिग्पतिः ॥ २१ ॥

१ का० उ० स० ३१६४ इति दप्रत्ययः । २ अनेऽस० २१२२६ । ३ “स्वस्येरेरिणीरिषु”
का० र० प० ३८ । ४ अनेऽस० २१४८२ । ५ शङ्कतेुस्मात् शङ्कु । “शकि शङ्कायाम्” । श्रीणा-
दिक उ । ६ का० स० ४१२५५। इति यप्रत्ययः “दुदु उपतापे” ।

षुञ्च अभिषेषे । अनेन सर्वेषा साधनिका शातव्या ।

अजो विघिरजो विष्णुरजः शम्भुरजस्तमः ।

अजस्त्वैवार्षिको त्रीहिरजो रामपितामहः ॥ २२ ॥

न जायने नोत्पद्यते अजः ।

शुद्धेऽनुपद्यते वहौ ब्राह्मणे सचिवोत्तमे ।

आपादेऽध्यात्मसंविच्चौ ब्रह्मचर्ये शुचिर्मतः ॥ २३ ॥

मतः कथितः । एतेष्वर्थेषु शुचिशब्द । शोचति जनो देहलग्नेऽत्र शुचि । तथा च यश-
स्तिलकचम्पूकाद्ये-

“न खीमिः सङ्गमो यस्य सर्वद्विविर्जितः ।

१० त शुचि सर्वदा प्राहुः मारुत च हुताशनमिति ॥”

अर्थोऽभिषेयरैवस्तुप्रयोजननिवृत्तिषु ।

अर्थशब्दः पद्यने । अभिषेयश्च शदो वाचक, शब्दमध्ये योऽसावर्थ स वाच्यः अभि-
षेयश्च कथ्यते । रा सुवर्णम् । वस्तु—अस्थ्यादिलोहितादिर्वा । गैरिकान्वित (दिक च) वस्तु । प्रयोजन
कार्यम् । निवृत्तिश्च सुकिः । तातु । शू गतौ । अर्थते इत्यर्थ ।

१५

भावः पदार्थचेष्टात्ममत्ताभिप्रायजन्मसु ॥ २४ ॥

एतेष्वर्थेषु भावः पद्यने । भवतानि भावः । “वा” उल्लादिदुनोभुवो ण ॥”

प्रायो भूमोपमात्कर्यप्रभृत्यननिवृत्तिषु ।

एतेष्वर्थेषु प्रायः शब्द ।

अन्तः पदार्थमामीप्यधर्मस्त्वव्यतीतिषु ॥ २५ ॥

२०

एतेष्वर्थेषु अन्तः ।

अक्षो द्यूते वरुथाङ्गे नयनादौ निमीतके ।

द्यूते वरुथाङ्गे रथचक्रावयवे, नयनादौ, विमीतके पूतनायाम अक्षो वर्तते ।

सारः श्रेष्ठे बले वित्ते कोशे जलचरे स्थिरे ॥ २६ ॥

२५

श्रेष्ठे, बले, वित्ते, कोशे, कोशे वा पाठः । जलचरे, स्थिरे सारो वर्तते । सरत्यनेनेति सार ।

३ “बलमत्स्ययोश्च” इति परम्यवेण धनु । स्वप्ने “अर्कर्त्तरि च कारके मशायाम्” इति धनु । “मारो
मज्जस्थिरांशयोः, बले श्रेष्ठे ‘च’ इति हैमि ।

वाचि वारि पशौ भूमौ दिशि लोम्नि रवौ दिवि ।

विशिखे दीधितौ दृष्टावेकादशसु गोमूर्तः ॥ २७ ॥

पूजा गच्छतीति गौ । गमेडोः ।

२०

चन्द्रे सूर्ये यमे विष्णौ वासवे दर्दुरे हृषे ।

मृगेन्द्रे वानरे वायौ दशस्वपि हरिः स्मृतः ॥ २८ ॥

हरतीति हृषिः ।

१ का० सू० ४२१५५ । २ प्रकृष्टमयन प्राय । “इण गतौ” । ३. “सर्तेंस्थिरन्याधि-
मत्स्यज्ञे” है० श० ५१३१७ । ४ का० सू० ४५१४ । ५. अनें० स० २१४७८ ।

पदे करिकरप्रान्ते व्योम्नि खङ्गफले गदे ।
दायमाण्डमुखे तीर्थे जले पुष्करमष्टमु ॥ २६ ॥

पुष्णातीति पुष्करम् ।

शृङ्गारादौ कथायादौ वृतादौ च विषे जले ।
निर्यासे पारदे रागे वीर्येऽपि रस इष्ट्यते ॥ ३० ॥

शृङ्गारादौ—

“शृङ्गारहास्यकरुणारोद्वीरभयानकाः ।

बीभत्साऽद्वृतशान्ताश्च नव नाटष्ये रसाः स्मृताः ॥”

कथायादौ—तिक्ताम्लमधुकटुकथायेषु । वृतादौ—दुग्धदधिघृततैललवण्येषुरसेषु ।
विषे जले, निर्यासे वृक्षरसविशेषे, पारदे रागे, वीर्येऽपि रस इष्ट्यते ।

५

१०

तीर्थं ग्रवचने पात्रे लघ्वाम्नाये विदांवरे ।

पुण्यारण्ये जलोत्तारे महासत्ये महामुनौ ॥ ३१ ॥

एतेष्वर्थेषु तीर्थम् ।

धातुः पञ्चसु लोहेषु शरीरस्य रसादिषु ।

पृथिव्यादिचतुष्के च स्वभावे प्रकृतावपि ॥ ३२ ॥

१५

पञ्चमु लोहेषु मुकर्णं तत्ताम्लरोतिकाम्येषु । शरीरस्य रसादिषु रसासृहमासमेदोऽस्थिमज्ज्ञुकेषु ।

पृथिव्यादिचतुष्काके च पृथिव्यमेजावायु (वनस्पति) पु, स्वभावे, वातपित्तश्लेष्मादिषु एतेष्वर्थेषु धातुः
पठ्यते । दधातीति धातु ।

प्रधानशृङ्गलाङ्गलभूपापुण्डप्रभावना ।

ध्वजलक्ष्मतुरग्नेषु ललामो नवसु स्मृतः ॥ ३३ ॥

२०

एतेष्वर्थेषु ललामः । ललामन् ।

आकृतावक्षरे रूपे ब्राह्मणादिषु जातिषु ।

माल्यानुलेपने चंव वर्णः पट्टसु निगद्यते ॥ ३४ ॥

आकृतो, अकृते, रूपे, ब्राह्मणादिषु जातिषु माल्यानुलेपने च वर्णोऽनि निगद्यते ।

अकारादावुदात्तादौ पद्मजादौ निस्वने स्वरः ।

२५

एतेष्वर्थेषु स्वरः कथ्यते । अकारादौ—अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, श्रु, शृ ए, ऐ, आ आँ, ।

उदात्तादौ—“उच्चैरुपलभ्यमान उदात्,” “नीचैरुदात्.” “समवृत्त्या स्वरितः” । पद्मजादौ—

“निपादपिभगान्धारपद्मजमध्यमध्यवनाः ।

पञ्चमश्चेत्यमी सप्त तन्त्रिकण्ठोत्थिता. स्वराः ॥”

निस्वने शब्दे ।

३०

सङ्केताचारसिद्धान्तकालेषु समयः स्मृतः ॥ ३५ ॥

समयते समयः ।

१ तरति तीर्थते वाऽनेति तीर्थम् । २. “लड़ विलासे” । डलयोरमेदात् ललतीति ललामः ।

३ “वर्णं शब्दे” । वर्णयति वर्ण्यते वा वर्णं । वज्र कर्मणि, अज्वा कर्तरि । ४ सारस्व० स० २ । ५. अम०
को० १०७१ ।

तन्त्रं प्रधाने सिद्धान्ते सैन्ये तन्तौ परिच्छदे ।
 तन्त्यन्ते व्युत्पाद्यन्ते शब्दा अनेनेति तन्त्रम् । अप्रत्यय ।
 सत्त्वमोजसि सत्तायामुत्साहे स्थेमि जन्तुषु ॥ ३६ ॥

५ एतेष्वयैषु सत्त्वम् ।
 रूपादौ तन्तुषु ज्यायामप्रधाने नये गुणः ।
 गुणायतीति गुणः ।
 ज्ञानचारित्रमोक्षात्मश्रुतिषु ब्रह्मवाग्वरा ॥ ३७ ॥

१० वरा विशिष्टा ।
 अवकाशे क्षणे वस्त्रे बहिर्योगे व्यतिक्रमे ।
 मध्येऽन्तःकरणे रन्ध्रे विशेषे रहितेऽन्तरम् ॥ ३८ ॥

१५ एतेष्वयैषु अन्तरः ।
 हेतौ निर्दर्शने प्रश्ने श्रुतौ कण्ठसमीकृतौ ।
 आनन्तयेऽधिकाराये माङ्गल्ये चाथ इष्यते ॥ ३९ ॥

२० इष्यते कथ्यते । अथ एष्वयैषु ।
 हेतावेवंप्रकारादौ व्यवच्छेदे विपर्यये ।
 प्रादुर्भावे समाप्तौ च इतिशब्दः प्रकीर्तिः ॥ ४० ॥

२५ प्रकीर्तिः कथित इतिशब्द एतेष्वयैषु । इणु गतो । इ । प्रति एवमादिकमर्थमिति ।
 “इति १अमुर्षणि प्रभृतिन्यो यावत्” इत्यनेनेतिप्रत्यय । इति जातम् । प्रथ० ति । “अन्व-
 २याच्च” सिलोपः ।

३० धर्मो धनुष्यहिसादावुत्पादादावये नये ।
 द्रव्यक्रियाश्रये वित्ते जीवादौ दारुचैकृते ॥ ४१ ॥

३५ एतेष्वयैषु धर्मः । धरतीति धर्मः ।
 मूर्तिमत्सु पदार्थेषु संसारिण्यपि पुद्गलः ।
 एतेष्वयैषु पुद्गलः^३ ।

४० अकर्मकर्मनोकर्मजातिभेदेषु वर्गणा ॥ ४२ ॥

(अकर्म पुद्गलस्कन्धः) कर्म-ज्ञानावरणादि, नोकर्म — शरीरादि । जातिगोत्रादि । एतेषु वर्गणा
 वर्तते ।

४५ एशवर्यस्यासमग्रस्य वीर्यस्य यशसः श्रियः ।
 वैराग्यस्यावचोधस्य षणां भग इति स्मृतः ॥ ४३ ॥

५० भजन्त्यस्मिन्निति ^४भगः ।
 प्राहुः कैवल्यमार्हन्त्ये विविक्ते निर्वृतावपि ।

१. कातन्त्रेऽस्य शुद्ध रूप नोपलब्धम् । २. का० स० २४।४ । ३. पूर्यन्ते पुनः पुन सत्यमें
 इति पुरः । गलन्ति विलीयन्ते गलाः । पुरश्च ते गलाश्च, पुद्गलाः । पृष्ठोदरादित्वाद्रस्य द । ४. भज्यते
 सेव्यते धार्यते वा भगः ।

केवलस्य भाव कैवल्यम् ।

लब्धिः केवलबोधादाविष्टासौ नियतौ श्रियाम् ॥ ४४ ॥

लम्भन लब्धिः ।

अनेकान्ते च विद्यादौ स्यान्निपातः श्रुते क्वचित् ।

‘स्यात् भवेत् एतेष्वयेषु निपातः ।

भैद्राको धर्मचन्द्रस्तत्पद्टे धर्मभूषणः ।

तत्र देवेन्द्रकीर्तिः श्रीकुमुच्चन्द्रस्नतः परम् ॥ १ ॥

धर्मचन्द्रस्ततो ज्ञानसागरस्तत्पदेऽभवत् ।

तेन पुस्तकमेतद्वि दत्तं (लोकहितेच्छया) ॥ २ ॥

५

इति

धनञ्जयनाममाला सटीका समाप्ता

— — —

१ स्यात् इत्याकारको निपात एतेष्वयेषु इति सम्बन्ध । २ इतः पर मुद्रितपुस्तकेष्वधिकः पाठ उपलब्धते, तद्यथा—‘दर्शनादौ मणौ रन्न भव्यः शते प्रसेत्यति ॥४५॥ परमात्मा जिने सिद्धे पर-मेष्ठयर्हदादिषु । सिद्धाः सिद्धनिष्ठायामर्हस्तिद्धभियामपि ॥४६॥ अहत्तिद्धमिति द्वावप्यर्हस्तिद्धाभिधायिनौ । अर्हदारीनपि प्राहुः शरणोत्तममङ्गलान् ॥४७॥ इति । ३ अत्राशुद्दिदोषात् किञ्चित्याठमेद, स च शोधित इत्यरूपं संवृत्तः ।

अनेकार्थ-निघण्टुः

गम्भीरान् रचिरांश्चत्रान् विस्तीर्णार्थप्रसाधनान् । कष्टशब्दान् प्रवक्ष्यामि कवीनां हितकाम्यया ॥१॥
 वांदिग्भूरश्मिवज्रेषु पश्वक्षिस्वर्गवारिषु । नवस्वर्थेषु मेधावी गोशब्दमुपलक्षयेत् ॥२॥
 क प्रजापतिराहिष्टो को वायुरभिधीयते । कः शब्द स्वर्गमाख्याति क इत्यात्मा मत क्वचित् ॥३॥
 सलिल कमिति ज्ञेय शिर कमिति चोच्यते । देवाननिमिषानाहुर्मंत्स्याननिमिषांस्तथा ॥४॥
 अग्निश्च वर्णिण चैव वृक्ष कुकुट एव च । शिखिनोऽभिहिता शस्त्र पृथुकश्च मत शिखी ॥५॥
 ह्यो नारायणः प्रोक्त व्यविद्वसो दिवाकर । अश्विचापि स्मृतो ह्यो हस्यव्यापि विहगम ॥६॥
 मार्तमस्तरसिजेन्द्रो पतञ्जयिच सारस । राजाऽपि नृपतिज्ञयो राजा चोक्तो निशाकर ॥७॥
 विभावमुहुताश स्याच्छ्रवेत्तच्छ्रव श्वर्च्छ्रद्वेत् । हिमाराति स्मृतो वहिं हिमारातिश्च भास्कर ॥८॥
 धनञ्जयोऽग्निवर्णाल्यातो पार्थिवापि धनञ्जयः । बीभत्सह च मत पार्थो बीभत्सो विकृत स्मृत ॥९॥
 अग्निविरोचन प्रोक्तो भास्करस्तु विरोचन । विरोचनश्च चन्द्र स्यात्कवच्छ्रद्वेत्यो विरोचन ॥१०॥
 पाङ्गजन्य श्वर्चिद्विति । श्वर्चिद्वित्त्वा निगद्यते । कम्बुश्च गदितः शङ्ख कम्बुशिष्टश्च कुञ्जर ॥११॥
 भास्करोऽग्निं समुद्दिष्टः सहस्राशुरपि श्वर्चित् । पतञ्जो दिनकृद ज्ञेय । पतञ्ज शलभः स्मृत ॥१२॥
 कोशिको देवराजः स्यादुल्कश्चापि कौशिक । शम्भुव्रक्त्वा च विष्णुश्च शम्भुश्चर्व भ्रह्मवरः ॥१३॥
 वृषकेतुर्भव शडकु शडकु कीड इहोच्यते । जम्बुको वरणो ज्ञेय शृगत्सच्चापि जम्बुकः ॥१४॥
 अक इष्टस्तु मध्यान् धर्माशुरकं उच्यते । मन्थो राहुश्च चन्द्रश्च ग्रहो मन्थो निरच्यते ॥१५॥
 केतवो रसमयो ज्ञेयाः केतवश्च महाध्वजाः । तमोनुद सहस्राशुरग्निश्चापि प्रकीर्त्यते ॥१६॥
 मयूखा किरणा ज्ञेया मयूखाश्चापि कोलका । सप्तषिरस्त्वं प्रोक्तः सप्तान्ये क्रृष्य । श्वर्चित् ॥१७॥
 चस्त्र शवरा उक्ता देवाश्च वस्त्रो मताः । नक्षत्र धिष्यमित्युज्जत गेह धिष्यम च श्वर्चित् ॥१८॥
 बासाऽम्बरमिति व्यातमन्द्रर च नमःस्थलम् । पय सलिलमुद्दिष्ट पय क्षीर मत श्वर्चित् ॥१९॥
 शिव पानीयमुद्दिष्ट शिव श्रेय शिव सुखम् । शिव व्योमर्पति प्राहुः शिव श्रेष्ठ प्रचक्षते ॥२०॥
 क्षर जल विजानीयाश्चवचिमेध विदुः क्षरम् । स्यन्दन चाम्बुनिर्दिष्ट स्यन्दनश्च महारथः ॥२१॥
 कृष्ण तम समाल्यात कृष्णश्चाधोक्षजस्तथा । अमृत क्षीरमित्युक्त श्वर्चिच्छेष्ट समुद्रजम् ॥२२॥
 शव च सलिल प्रोक्त मृतमाहु शव तथा । तोय धूतमिति प्रोक्त धृत सर्पि श्वर्च्छ्रद्वेत् ॥२३॥
 पानीय च विष प्रोक्त श्वर्चिद्वालाहल विषम् । हस्तिहस्त कर प्रोक्त करो हस्तः प्रचक्षयते ॥२४॥
 कीलाल सधिर प्रोक्त नीर चंच प्रशस्यते । भ्रवन सलिल प्रोक्त आकाश भ्रवन स्मृतम् ॥२५॥
 प्रवाल कोमल ज्ञेय कोमल स्पष्टवाचकम् । सदन च स्मृत तोय सदन वेशम उच्यते ॥२६॥
 तोय सद्येति गदित निलय सद्य निगद्यते । सवर च जल प्रोक्त सवरः पर्वतो भवेत् ॥२७॥
 सवरत्वाऽमुर स्यातो यो बिभर्ति रसा प्रियाम् । स्वरवाक्षमास्त्वदा प्राहुरिडा चाम्बरदेवताम् ॥२८॥
 पत्नी चन्द्रेरिडा प्राहुरिला तत्समता गता । अदिति पृथिवी ज्ञेया देवमाताऽविति श्वर्चित् ॥२९॥
 अधृष्टा भार्या परित्यक्ता त्वद्विदिश्च निगद्यते । वृद्धो धर्म्य श्वर्चिज्ञेयो गवामपि पतिवृष्ट ॥३०॥
 वृषा कर्णश्च गदितो वृषा चोक्तः शतक्रतु । रौहिणेयो बल प्रोक्तो रौहिणेयो बुध श्वर्चित् ॥३१॥
 बलदेवो मत शेषो नामो वा शेष उच्यते । रामस्तु लागली ज्ञेयो रामो दाशरथि श्वर्चित् ॥३२॥
 रामश्च शुक्लो वर्णो रामश्च भवनाशनः । वराह केशवः ख्यातो वराहो जलद श्वर्चित् ॥३३॥
 वराह शकरो ज्ञेयो विष्णुमेंघो हरिस्तथा । अजाराटस्मरेनद्वो ज्ञेयास्त्रिनेत्रश्चाप्यजो मत ॥३४॥
 अज पशुश्च विल्यातो तथाजौ ब्रह्मकेशवौ । शरीरजः स्मृतो गोग पुत्रश्चापि शरीरजः ॥३५॥

जय पुष्करमन्त्रं च नागनासाग्रमेव च । कूल नभः समाख्यात कूल रोध प्रचक्षते ॥३६॥
 व चानन्तमिति प्रोक्तमनन्तं च बल क्वचित् । विष्णु ववचिदनन्तं स्थानागश्चानन्तं उच्यते ॥३७॥
 प्रजापति स्मृतो राजा ब्रह्मा चापि प्रजापति । प्रजापति स्मृत क्षत्ता क्षत्ता च चर उच्यते ॥३८॥
 वाम पवधरं प्रोक्तो वाम स्थावृद्विण हर । वामश्च मदन प्रोक्तो वामश्च प्रतिकूलके ॥३९॥
 आगोपो गोपको ज्येष्ठ ववचिदागोपको ध्वज । उरश्चाङ्ग समाख्यातः स्थानमङ्गः स्मृतस्तथा ॥४०॥
 वासरस्तु स्मृतो नागो वासरो दिवसो मतः । विभावसुनिश्चा ज्येष्ठा गन्धर्वं च ववचिन्मतः ॥४१॥
 शर्वयो रात्रयः प्रोक्ता शर्वर्यश्च स्त्रियो मताः । सान्द्र धनमिति प्रोक्तं स्त्रिध सान्द्र निगद्यते ॥४२॥
 स्वः स्वर्गस्य मत नाम स्वः सुख ववचिदुच्यते । स्व आत्मा चैव निर्दिष्टः स्व प्रोक्तो गृहमूर्खिक ॥४३॥
 कन्तुश्छन्दन्दोविशेषज्ञो मतः शास्त्रेषि ना कुपु । कुकुम्हीरुहं प्रोक्तो ज्येष्ठस्तु कुकुभो दिवाः ॥४४॥
 क्षय वेशम समुद्धिष्ठ क्षय रोग प्रचक्षते । जन्मदस्तु प्लवो ज्येष्ठ प्लवो ज्येष्ठस्तथोडुप ॥४५॥
 प्रासादो मण्डप प्रोक्तो विहारश्चापि कथयते । धन धन विजानीयाद् धन विपुलमुच्यते ॥४६॥
 प्रयुज्यते च कस्त्रिमित्रिद धन सङ्गातवादायो । वरुण स्यन्दनाप्य स्थादृश्य वेशम उच्यते ॥४७॥
 चमूकच वर्ष ताहसा प्रवदन्ति मनीषिण । अमुराश्च मुरा ज्येष्ठा ववचिद्वेवार्योऽमुरा ॥४८॥
 नागाश्च द्विरदा ज्येष्ठा पन्नाश्च ववचिन्मता । गन्धर्वश्च तथा वायु ववर्दिन्म्याद् देवगायत्र ॥४९॥
 नाश्यो हय समुद्धिष्ठस्ताकर्यं चापि पनत्रिगाट । वालेषानमुरानाहृविलेयश्च ववचिन् वरान् ॥५०॥
 तृणो वनस्पति प्रोक्ता वनचिदार्द्धिच कथयते । शिवरो वृक्ष उद्दिष्ट शिवरो पवर्तन स्मृत ॥५१॥
 दिजो विप्रश्च दन्तश्च द्विज पक्षो निगद्यते । चौरो मदिम्लुचो ज्येष्ठो वातश्चापि मलिम्लुच ॥५२॥
 आन्मज्ज रक्तमुद्धिष्ठ सुत कामस्तयैव च । कीनाशो मृतको ज्येष्ठ कीनाशश्चापि राक्षस ॥५३॥
 कीनाशोऽग्निं कृतननश्च कृपणो यम एव च । कीनाश कर्षको ज्येष्ठ कीनाशश्च वृकोदरः ॥५४॥
 अवदात प्रधान स्यादवदान च पाण्डुरम् । ज्योतिल्लोचनमद्धिष्ठ ज्योतिर्नक्षत्रमुच्यते ॥५५॥
 ज्योतिश्च गदितो वह्नि काव्येषु मुनिषुहृवे । प्रधान नज्जन ज्येष्ठ प्रधान इवेतमुच्यते ॥५६॥
 अद्वः सवत्सरो ज्येष्ठो मेषधश्चापि ज्वचिन्मत । बलाहका महामेया गिर्वरी च बग्धाहक ॥५७॥
 तोयद जन्म प्राहुस्तोयद कथयते घृतम् । जीमूतश्च मनो नागो जीमृत ववचिदस्वद् ॥५८॥
 पोलस्त्य तु मन युद्ध पोलस्त् पोरुष विदु । शुचिकृद्रजक्षिन्नैव प्रोक्तो निन्द्र ब्रुद्धं रस ॥५९॥
 परजन्य जन्म प्राहु पर्जन्य तु शतकनु । शिरोमुवा स्मृता वाणा प्रमगाश्च शिरोमुवा ॥६०॥
 लेखा सीमेति विज्ञेया लेखा यित्रकृतो मना । अम्बरीष ववचिद्भग्नाद् ववचिद्युद्ध निगद्यते ॥६१॥
 पुस्त्व चापि मत युद्ध पुस्त्व पोरुषमुच्यते । विद्वामोरिपवो ज्येष्ठा विद्वासम्बवसवो मता ॥६२॥
 मायाऽविद्येति विज्ञेया ववचिन्माया तु सावरी । मधु द्राक्षीति विज्ञेया ववचित्स्यान्मधु माक्षिकम् ॥६३॥
 मधु चाम्दु समाख्यात सुरा च मधुसज्जका । व रध्यमिति विज्ञेय व गृह नभ एव च ॥६४॥
 व्यमिन्द्रियमिति ख्यात व च नक्षत्रमुच्यते । धार्तराष्ट्रा महाहसा धूतराष्ट्रमुना ववचित् ॥६५॥
 प्रभाकरो मत सूर्यो वह्निश्चापि प्रभाकर । सित शुक्लमिति ज्येष्ठ सित बद्ध प्रचक्षते ॥६६॥
 असित कृष्णमित्यूत अशित भक्षित स्मृतम् । वभूस्तु नकुलो ज्येष्ठ पाण्डवो नकुलस्तथा ॥६७॥
 क्रिश्चकुमाहर्मार्जीरमूविश्चापि तवेष्ठने । यमस्तु वायसो ज्येष्ठो यम प्रेताधिपस्तथा ॥६८॥
 लक्षण सारस विद्यातथा दशरथात्मजम् । लक्षम चन्द्रस्य काल्यं स्याललक्ष्य केतुः प्रकोपितः ॥६९॥
 केतुश्चापि मत काल्ये लक्षमेति सुनिषुहृवे । यामगेष्ठ स्मृतो दक्षो दक्षश्चाचेतस ववचित् ॥७०॥
 आशुकारी भवेदक्ष स्यावली तोमर स्मृत । अदित्य च र्त्वं विद्याद् वैत्यश्चायदिते मुत ॥७१॥
 रोगो रजस्तथा रेणु रजो लोहितमुच्यते । स्कन्धो नितम्बसज्ज स्यान्नितम्ब जघन तटम् ॥७२॥
 हेम वविति विज्ञेय बमु तेजो निगद्यते । सारङ्गं चातक प्राहुः स्वर्णं चापि सितासिती ॥७३॥
 रसभाश्च कहली प्राहु रसभा स्वर्णाङ्गुला मता । ग्रावाणो गिरिजा प्रोक्ता मेषधश्चापि मनीषिभि ॥७४॥

निगद्यते । औषण रसमहिष्टमृत सत्यमपि व्यचित् ॥७५॥
 अक्ष आत्मेति विज्ञेयः केचिदाहुर्बिभीतकम् । ज्ञेयमिन्द्रियमक्ष च शाकट कर्ष एव च ॥७६॥
 अक्ष च पाशक विद्याद्वयावहरिकमेव च । पद्ममिन्द्रियमित्युक्तं पद्म तामरस विदु ॥७७॥
 चेत्यमायतनं प्रोक्तं नीडमायतनं तथा । पुष्पं लोहितमुहिष्ट पुष्पं च कुसुमं तथा ॥७८॥
 वाजी तुरङ्गमो ज्ञेयो वाजी इयेनो विहङ्गमः । विष्विवन्द्रसिंहमण्डकचन्द्रादित्यास्तु वानरान् ॥७९॥
 वभृशिवानिलह्यान् हरोनिच्छन्ति कोविदाः । पुरुषवज्रलङ्घेषु हयभृषणलक्षमषु ॥८०॥
 रामशेषावनीन्द्रेषु ललाम नवमु स्मृतम् । शुक्रा स्मृताऽक्षिदेषोना लवली मञ्जरी तथा ॥८१॥
 वक्षवक्ष शुक्रो ज्ञेय कोकिला वचनप्रिया । पुलिन जलविच्छेदं पङ्कजं स्यात्कुशेशयम् ॥८२॥
 रतं पापमिति ज्ञेय सत्वरं शीघ्रमुच्यते । पिशङ्गं रोचनाभं स्याम्भेचकस्तिलको मतः ॥८३॥
 ललाटेऽवस्थितं चिह्नं विद्विष्टस्तिलकं मतम् । परिचर्यं च कटकं निकाशस्तु कषो मतः ॥८४॥
 नानारत्नेश्यचिता मञ्जूष रागिणी स्मृता । दिनकृद्वार्जिसहेषु केसरित्वं विधीयते ॥८५॥
 अव्यक्तो मधुरं शब्दः कलं इत्यभिधीयते । अलातमुलमुकं ज्ञेयं छेदो नामं भयड्कर ॥८६॥
 भावं शृङ्गारमाधुर्यं भावोऽवस्थाप्ररूपणम् । विलासं कामजो दोषस्तदेव ललितं मतम् ॥८७॥
 उत्तमाङ्गं विना देहं कवन्धं चेति शस्यते । गिरसो वेष्टनं यद्वं तदुणीष निगद्यते ॥८८॥
 आहृतं समवोर्धं स्यान्निविडं पीडितोन्नतम् । मण्डको भेकसज्जः स्याद्रव्यभृत्वातको मतः ॥८९॥
 शिवा पिङ्गवनी ज्ञेया विशालं सबलं मनम् । दुरुचर्मा शिपिविष्टं स्यात्कर्षकस्तु कृषीबल ॥९०॥
 कन्याजातश्च कानीनो पण्ड वलीब इति स्मृतं । उत्कृष्टं श्वसुरं स्याता मिलष्टस्यक्षतवाचकम् ॥९१॥
 रवनो हस्तिवन्तं स्याह्यानं कटकसज्जितम् । तोदनं चाइकुशं विद्यादालानं हस्तिबन्धनम् ॥९२॥
 घनाघनं इति ख्यातं शास्त्रेष्वधिकपौरुषं । अपाचीनं मनोजं च बुद्धिज्ञेया तु शेमुषी ॥९३॥
 अर्कस्तु पादपे ज्ञेयो नदीं स्यात्केनवाहनी । अश्वारोहो मरुद्यानोऽश्वानां हृदये ध्वनि ॥९४॥
 आकून्दं इति विज्ञेयं खुराश्च शफमज्जिता । आममासं भवेत्कर्यं पक्वं पिण्डितमुच्यते ॥९५॥
 शुष्कं तु विरसं ज्ञेयं मृष्टं सरसमुच्यते । शङ्खं जशुकितजं चैव वाराहं तिर्मिमौकितकम् ॥९६॥
 वशादाशीविषयान्नागाज्जीमूताच्च तथाष्टमम् । लोकक्षो दक्षिणो ज्ञेयो दक्षिणश्च तुरं स्मृतं ॥९७॥
 आकूतं तु मतं विद्यात्कष्टकं गहनं मतम् । आननं चाकुले नेत्रे चिकुरं चापि शस्यते ॥९८॥
 पापं श्यामं इति प्रोक्तो वभृस्तु कपिलो मत । स्थविष्टं स्थावरे चैव दविष्टं दूरमुच्यते ॥९९॥
 परमेष्ठो मतं श्रेष्ठं प्रेमं प्रियमुदाहृतम् । प्रकाशं स्त्रीगृहेरक्तं शैलूपं इति सज्जित ॥१००॥
 पद्मकुच्छव्यमंकारं स्यान्नापितस्त्वजयं स्मृतं । लावण्यमाहुर्मधुर्यं चित्रं च शुभकम्मंजम् ॥१०१॥
 व्याधयश्चामया प्रोक्ता पानीयं तु समुच्चय । आधयस्तु स्मृता प्राज्ञैऽिच्चतोत्पन्ना उषव्रबा ॥१०२॥
 रहो वेगं समाख्यातं सत्रं सच्चरितं स्मृतम् । आलद्वालं स्मृतं सद्भिरपा वेगनिवारणम् ॥१०३॥
 चटकं कलविङ्गू श्यात्तुल्यं सद्भास्मुच्यते । किलासं पाण्डुरं ज्ञेयं दोला प्रेष्ट्वंति शस्यते ॥१०४॥
 मन्दिरं नमरं ज्ञेयं निलः चापि मन्दिरम् । सहस्रनयनोऽगारि प्रधनं युद्धमुच्यते ॥१०५॥
 पलाशो हरितो वर्णोः मेचको नीरपित्तजर । उक्षाणं वृषभं विद्याल्लुलायो महिषो मत ॥१०६॥
 उसा वध्या वसा वेहत् पृष्ठोहीं गर्भणी हि या । व्याख्यातो मस्करो वेणुस्त्वचिसारं परिकीर्तित ॥१०७॥
 हिलं कामं शपं चैव रोषमाहुर्मनोषिण । कलभोऽल्पवयो नागं कलुषं चाविलं मतम् ॥१०८॥
 वृजितं कुटिलं विद्यात्सप्राट् राजा च भूमुजो । रत्नं वज्रं विजानीयात्त्रियामा क्षणदा मता ॥१०९॥
 द्वीर्घं प्राणुं विजानीयात् हस्तं नीचकमुच्यते । भूरि प्रभूतमुहिष्टमभितः सर्ववाचकम् ॥११०॥
 पवनश्वानिलो ज्ञेयं पवनश्चाधमो जन । प्रियवाक्यो भवेदार्थं स्नातश्च परिकीर्तित ॥१११॥
 आहम्बरश्च पटहो व्यञ्जनं बोधनं मतम् । विषचो वल्लकी ख्याता बीणा चैव निगद्यते ॥११२॥
 मालतीं सुमना ज्ञेया सुमना मुदितो जन । वल्लरी मञ्जरी ख्याता प्रपात्प्लाला प्रकीर्तिता ॥११३॥

आयुर्निरुद्धते तोयं तेन जीवति पश्यकम् । तस्य पत्राक्षिप्तानेन रामो राजीवलोचनः ॥११४॥
 उत्कृष्ट्य कवच वेहादसुगवर्ध च यत्पुरा । इन्द्राय वैत्यान्कर्णस्तेन वैकर्तन स्मृत ॥११५॥
 तीर्णशिंचं च प्रचण्डश्च वृको नामानलो मत । स पाण्डवस्य उदरे तेन भीमो वृकोदर ॥११६॥
 यस्य श्रुतिमुखा वाणी पुण्य-ज्ञलोक स उच्यते । य सेवो चानिवर्ती च युद्धशौण्डः स उच्यते ॥११७॥
 महासर्गसंस्कृत भैरवास प्रचक्षते । स्वविक्रमेस्तापयेच्च पर यूथ तापयेत् ॥११८॥
 यूथ तापयेच्च स्वज्ञेयश्च स यूथप । तस्मादपि च यो वर्यं स तु यूथपयूथप ॥११९॥
 सिहानिंतान्तसौवीर स नृसिंह इति स्मृत । ये हि स्पष्टप्रवक्तारो मतास्ते व्यक्तदादिन ॥१२०॥
 यो यमित्य च नाम्नाति स कीनाश इति स्मृत । योप्रबुद्धो उल्पबुद्धिश्च स तु मन्द इति स्मृत ॥१२१॥
 उपकार तु यो हन्ति स कृतधन इति स्मृत । हर्षे गर्वे सुखे खेदे वृद्धो च प्रतिभासते ॥१२२॥
 स्नेहभाग्यक्षये चैव मन्दशब्दो निगद्यते । नातीत्य वर्तने यत्र तदध्यात्म प्रचक्षने ॥१२३॥
 चेतसश्च समाधान समाधिरिति गद्यते । सर्वक्लेशविनिर्मुक्तो स हि दान्त इति स्मृत ॥१२४॥
 निर्ममो निरहङ्कारो विज्ञेय छिन्नसशय । प्रदाता देशकालत्र समाधिस्थः स उच्यने ॥१२५॥
 मुखरोऽप्तमतिर्यस्तु सक्रोधश्चैव कोटक । वृत्तियत्र तु गृहचाना परोक्षे बहि तत्क्रिया ॥१२६॥
 आहारव्यवहारेषु सा प्रीतिर्निरूपस्करा । परस्पर स्वदारेषु सता येवा प्रवर्तते ॥१२७॥
 विश्वभात्रणयाद्विपि सा प्रीतिर्निरूपद्वावा । यश स्याति विरिति प्रोक्त तद्योगात्प्राहुरुच्यते ॥१२८॥
 कीर्तिल्यातिपश्योगाद् भगवन्निति चोच्यते । प्रियदानेषु य शुद्ध स उदार इति स्मृतः ॥१२९॥
 रजस्वला तु या नारी सा चोदक्या प्रकीर्तिता । प्रीतिर्भविक्षये स्वच्छरक्षालिगितनु विपुम् ॥१३०॥
 तेजो रेतसि दीप्तौ तपो हि स्याद् वृथार्थक । योऽन्यजातो हनो जीव स शराह इति स्मृत ॥१३१॥
 मिध्यादृष्टिरहस्यानी नास्तिक स प्रकीर्तित । कामः क्रोधश्च वै पूर्वे लोभोऽसत्य च मध्यमे ॥१३२॥
 अन्ते मोहो विषादश्च यस्य ज्ञेय स षड्वद । अमृते जारज कुण्डो मृते भर्तंरि गोलक ॥१३३॥
 अनयोर्योऽन्नमङ्गाति स कुण्डाशी निगद्यते । भ्रूणस्त्री गर्भिणी वाला ब्राह्मणी वद्यजीविनी ॥१३४॥
 परचित्ये यवोपान् यो ज्येष्ठपत्नी परामृशन् । यः पश्चिमश्च ज्येष्ठोऽपि परचित्ये स उच्यते ॥१३५॥
 पुष्पज क्षोमज चर्मस्कोशज भर्मज तथा । गुणज च समुद्दिष्ट तद्भेदा वस्त्रजातिषु ॥१३६॥
 विम्बारक्तधरा या स्त्री विम्बोष्ठी ता विनिर्दिशेत् । या स्यात् सकीडनपरा ललना ता विनिर्दिशेत् ॥१३७॥
 दृव्वर्काकाङ्गप्रतीकाशा कुभौ यस्यास्तनु कुची । सर्वरूपविविक्ताङ्गी सा भवेद्वरविष्णनी ॥१३८॥
 लावण्यपुक्ता या नारी ललिता ता विनिर्दिशेत् । या मत्ता मत्तवज्जयोति सा ज्ञेया मत्तकाशिनी ॥१३९॥
 भूरिश्च भूरिसुद्धिष्ट अन्त श्रव इति स्मृतम् । भूरि श्रवो ददातीह तस्माद् भूरिश्रवो हि स ॥१४०॥
 चतुष्पादविजातिभुजो लोहितपीव एव च । निसर्गादारुणात्कूराद्रवणाद् रावण स्मृत ॥१४१॥
 रोषणा या भवेश्वारी भामिनी ता विनिर्दिशेत् । न्ययोधलक्षण विद्याद्धाना परिमण्डलम् ॥१४२॥
 ताम्यामुपेता वर्णिता न्ययोधपरिमण्डला । तत्तुल्ये चाक्षिणी यस्या सा स्त्री राजीवलोचना ॥१४३॥
 वर्णप्रमाणनिर्धेषोऽछिन्नसपद्भिरन्वित । राजीवमन्ये शतस्ति स्त्रिगद्यवर्णं सितासितम् ॥१४४॥*
 किंचिदुत्तरतद्योगात्सीता राजीवलोचना । बलिभिर्यस्त्रिभिर्युक्ता शङ्कुष्ठी उदाहृता ॥१४५॥

जराकराकार स्यन्दनाप्रमिवाग्रत । वस्त्वे ति तज्ज्ञेय तस्यवाय ॥१४६॥
 त मर्मसंयुक्त तत्त्यालिनमुच्यते । प्रहणे धारणे सामे वाहने धर्मसंयुता ॥१४७॥
 रमणे कीडने सङ्गे भार्या नाम प्रवर्तते । मूढतायां सविद्याया सप्ताश्वस्त्वशुभालिनि ॥१४८॥
 विषमाक्षदरा एते ज्ञेयाते विस्थिता । कोटरस्था इति ज्ञेया सर्पकीटवगादय ॥१४९॥
 आताप्रपल्लवो यस्तु वृक्षाणामचिरोदगम । ॥१५०॥

सौकुमार्य किसलय कोमलत्वं च तत्स्मृतम् । शताना च चतुहस्त नल्व तदिहसक्षितम् ॥१५१॥

* नोट—मूल प्रनिमे १४४ मे १४८ तके पदोपर उनके नम्बर नहीं पढ़े हैं।

कुम्भो वाह प्रस्थ सम नत्व इति विधीयते । विपिन शून्यमित्युक्त विपिन गृहमेव च ॥१५२॥
हक्षम वर्णं च वाम च दर्शनीयार्थवाचक । सर्वायंश्चाप्युचर्णश्च पानीय शीतमुच्यते ॥१५३॥
नीहार शीतमित्युक्त प्रदोषान्तो निशीयक । ॥

इति महाकविश्रीघनञ्जयकृते निघट्टममये शब्दसकीर्णे अनेकार्थप्रहृष्णो द्वितीयपरिच्छेद ॥२॥

एकाक्षरीकोषः

विश्वाभिधानकोशानि प्रविलोक्य प्रभाष्यते । अमरेण कवीन्द्रेणैकाक्षरनाममालिका ॥१॥
अ कृष्ण आ स्वयभूरि काम ई श्रीरहीनवर । ऊ रक्षणं कृ ऋ ज्ञेयो देवदानवमातरौ ॥२॥
लूदेवसूर्यवाराही भवेदेवाण्णुरं शिव । ओवेष्ठा औरनत स्याद ब्रह्म परम्पर शिव ॥३॥
को ब्रह्मात्मप्रकाशाके क स्याद्वायुयमाग्निषु । क शीर्षे सुसुखे कुस्तु भूमौ शब्दे चु कि पुन ॥४॥
स्यात्क्षेपनिन्दयो प्रश्ने वितके च खमिन्द्रिये । स्वर्गे व्योम्नि मुखे शून्ये सुखे सविदि खो रवौ ॥५॥
गस्तु गातरि गधवर्वे गा गीती गो विनायके । स्वर्गे दिवि पश्च वज्रे भूमाविन्दो जले गिर ॥६॥
घस्तु सुघटीशे धा किकिष्या च धुधवनौ । डो मञ्जने डो वृष्ट भेजिने च चन्द्रचौरस्यो ॥७॥
च सूर्ये कठउये छ तु निर्मले जस्तु जेतरि । विजये तेजसि वाचि पिशाच्या जि जवेऽपि च ॥८॥
ओ नष्टे रवे बायो जो गायने घर्घरधवनौ । ट पृथिव्या करटे च ठो ध्वनौ ठो महेइवरे ॥९॥
शून्ये वृहद्दूषनौ चद्वमडले ड शिवे ध्वनौ । ढो भये निरुणे शब्दे ढक्काया णस्तु निश्चये ॥१०॥
जाने तस्तस्करे कोडपु चछयोस्ता पुनर्दया । थो भोत्राणे महोधे द पत्या दा दातृदानयो ॥११॥
बन्धे च धा गुह्ये केशे धातरि धीमती । धूर्भारकपर्वतासु नो नरे बन्धुबुद्धयो ॥१२॥
निस्तु नेतरि नु स्तुत्या नौ सूर्ये पस्तु पातरि । पावने जलयाने च फो ज्ञानजलफेनयो ॥१३॥
भाः कातौ भूभूव स्थाने भीमये म शिवे विधी । चद्रे शिरसि मा माने श्रीमात्रौवारणेऽप्ययम् ॥१४॥
मु पु सिंबं धने यस्तु मातरिइवनि य यश । यास्तु यातरि खट्वागे याने लक्ष्म्या च रो धृतौ ॥१५॥
तोव्रे वैश्वानरे कामे रा स्वर्णे जलदे ध्वनौ । रो भ्रमे रभये सूर्ये ल इद्रे चलनेपि च ॥१६॥
ल तेले ली पुन श्लेषे ली भये वो महेइवरे । व पश्चिमदिशास्वामी व इवार्थे स्मरेऽप्ययम् ॥१७॥
श शुभे ज्ञा तु शोभार्या शी शयने शु निशाकरे । ष शिलष्टे पुनर्गम्भे विमोक्षे ष परोक्षके ॥१८॥
सा लक्ष्म्या हो निपाते च हुस्ते दारणि शूलिनि । क्ष क्षेत्र रक्षसोत्युक्ता माला प्राक्सूरिसम्मता ॥१९॥

इति एकाक्षरी नाममाला ममाप्ता ॥४॥

धनञ्जय-नाममालागतशब्दानुक्रमणिका

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
अ	अ		अन्यर्थ	८३	१७३	अन्तक	७१	१४५
अशु	२३	४५	अदभ	९०	१९१	अन्तरिद	२८	५३
अशुक	५९	११७	अदिनिमुत	३०	५६	अन्त्य	६३	१२४
अम	५०	१०१	अद्भुत	८४	१७४	अन्त्यकाशयप	५८	११५
अहम्	६६	१३०	अदि	४	८	अन्वेषासिन्	३	११४
अहिप	५	११	अधम	७३	१५४	अन्वकार	७२	१४८
अकूपा	१२	२५	अधर	८१	१६८	अन्वय	६३	१२४
अक्ष	{ ६१ ६५	१२२	अधिप	५	१०	अन्वाय	”	”
अधि		१३०	अधिष	३७	७५	अन्वित	७७	१६१
अधि	४९	९९	अधोक्षज	३७	७५	अन्वीत	”	”
अदाहिणी	४३	८६	अध्वन्	७८	१६२	अहत्याय	७६	१५७
अग्निल	८८	१८७	अनतर्ग	६०	१४१	अप्	७	१५
अग्	५	११	अनन्तान्तम्	३६	७३	अपघन	१९	३८
अग्नि	३३	६४	अनन्यज	३९	७७	अपत्य	१९	३९
अग्निमूल	३४	६६	अनध्राट	८	१८	अपाह्न	४९	९९
अग्नज	{ २१ ५०	४३	अनल	३३	६५	अपाग्वार	१३	२५
अग्न		११४	अनागत	८९	१८९	अप्राज	८०	१६६
आग्रम	७५	१५६	अनालम्ब	६३	१३५	आसरोनाथ	३०	५९
अज	६६	१३०	अनिमिष	८	१७	अबला	१५	३१
अइ	८०	१६५	अनिमेष	८	१७	अद्ज	२७	५८
अह	१९	३८	अनिल	३२	६२	अद्विव	१२	२५
अह्नना	१४	३०	अनीक	४३	८६	अभय	९१	२००
अह्नरग	६०	११९	अनुकम्पा	५४	११०	अभियोग	८४	१७४
अह्नाकृत	९१	१९७	अनुक्रोध	”	”	अभिराम	८५	१७५
अट्टिघ	५१	१०३	अनुग	१४	२९	अभिष्प	५५	१११
अट्टिप्रा	५	११	अनुचर	”	”	अभिलाप	३७	१६०
अचल	४	८	अनुज	२१	४२	अभिलापुक	८४	१७५
अज	३६	७२	अनुजा	२१	४३	अभिमारिका	१७	३५
अजय	९१	१९७	अनुजीविन्	१४	२९	अभीष्ण	८८	१८५
अजम	८९	१८९	अनुरहम्	८४	१७५	अभ्यण	६९	१४१
अजातरिपु	७१	१४६	अनेकप	४५	८८	अभ्यास	{ ९९ ८६	१४१ १८५
अञ्जनान्तमज	३३	६३	अनेहम	६२	१३२	अभ्र		१८
अट्टी	४०	७९	अनोकह	५	११	अमर	३०	५६
अत्थन्त	६	१३	अन्त	५	११			
			अन्त करण	४१	८१			

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
अमर्त	५४	१०९	अवर्ज	२१	४२	आत्यन्तिक	५३	१६१
अमल	८४	१७३	अवलम्बन	८७	१११	आदिग	५४	१५५
अमा	७७	१००	अवसर	६६	१३३	आनन	४९	९८
अभित्र	२२	४४	अप्सान	८२	१७१	आनन्द्य	१०	१९१
अमृत	६२	१२२	अवमर्प	८६	१८२	आनन्द	५४	१०९
अमृतोद्भव	१५	२५	अवश्याय	८५	१७९	आपगा	१२	२४
अम्बर	२८	५३	अविद्वार	६९	१४२	आभरण	६०	११९
	५९	११३	अशनि	०	१९	आद्य	५७	११४
अमृ	७	१५	अश्लील	७२	१०६	आमाय	८३	१२४
अम्बुजानन	६८	१३७	अश्व	२	५२	आयुव	८२	८३
अम्बुवि	८	१६	अष्टारात्	८६	१०	आर्या	१३	३४
अम्भम्	३	१९	अष्टापद	४३	१०३	आलम्यमुख	८३	१३५
अयस्	८२	१७२	अमि	८३	५०	आलय	८८	१३२
अरण्य	६	१३	अमित	७२	१८८	आलय	५७	१६०
अरण्यानीचर्ग	७	१४	अमुपति	७८	२७	आलो	२०	८१
अरम्	८३	१७२	अमृज	८९	१८८	आवलि	१३	९०
अर्वावन्द	११	२१	अमृतुकार	११	१०८	आवाम	८८	१३३
अर्गाति	२२	४४	अमृत	८२	८३	आवृत्ति	१०	११४
अगि	२२	४४	अहयु	८१	१८८	आवय	५१	११०
अरुण	८२	१५०	अन्त्	२८	१०७	आशा	८२	८१
अर्क	२६	४९	अन्त्नालित	५८	११०	आयु	८३	१५२
अर्णि	२३	४५	अहि	८४	१२८	आशुद्युवणि	८३	८६
अर्जुन	८७	९३	अहित	८२	८४	आनन्द	८८	१३६
	७०	१८३	अहा	८५	१०६	आभन	११६	११३
अर्णव	१५	२६	आ			आमन्दा	५६	११३
अर्णस्	७	१५	आकालिकी	०	११	आमन्न	६९	१४१
अर्थ	४३	१५	आकाश	२१	५३	आमव	६१	१२१
अर्भक	२०	४०	आकृत	८१	८१	आम्बानाविपति	५६	११२
अर्यमन्	२६	४१	आकृत्तुर	३०	५७	आम्पद	६६	१३३
अर्वान्	२७	५२	आगम	३	४	आम्य	४९	९८
अर्हन्	५८	११६	आगार	६६	१३३	आम्बनित	४१	८१
अलकानिलय	४८	९६	आचार्य	५१	१११	इ		
अठि	४२	८२	आजि	४४	८७	इन	५	१०
अलिप्रभ	७२	१४८	आज्ञा	७४	१५४	इन्दिग	२६	५०
अलीक	८८	१८६	आज्य	८१	१२२			
अवदान	७१	१४७	आतन	७६	१५८	इन्दिग	३८	७६
अवद्य	७३	१५२	आतपत्र	९०	१९४	इन्दीवर	११	२१,२२
अवधि	१३	२६	आताम्ब	७२	१४९	इन्दु	२३	४६
अवनि	३	५	आत्मज	१९	३९	इन्दुमौलि	३५	६९
			आत्मभू	३६	७३			

ગઢ	પૃષ્ઠ	શ્લોક	ગઢ	પૃષ્ઠ	શ્લોક	ગઢ	પૃષ્ઠ	શ્લોક
દન્દ	૫	૧૦	દન્દાગ	૮૪	૧૦૪	દન્દાકુ	૫૭	૧૧૪
દન્દ	૩૦	૫૭	દન્દાહ	૮૦	૧૦	દન્દાઓ	૬૩	૧૨૦
દન્દાજિતુ	૮૫	૧૨૮	દન્દાહ	૧૯	૧૮૯	દન્દાઓ	૬૯	૧૪૦
દન્દિદ્ય	૬૫	૧૨૯	દન્દાન	૮	૧૫૮	દન્દાઓઠ	૫૦	૧૧૦
દન્દ	૪૫	૮૮	દન્દાન	૧૩	૨૬	દન્દાઓધીશ્વર	૨૪	૪૦
દન્દ	૬૧	૧૨૦	દન્દાન્યકા	૮	૧	ક		
દન્દા	૩	૬	દન્દામા	૬૭	૧૩૬	ક	૭	૧૫
દન્દ	૩૯	૧૮	દન્દામાન	૬૮	૧૩૭	ક	૩૬	૭૨
દન્દાટ	૧૮	૩૭	દન્દાન	૮૨	૧૭૦	કાકુન	૧૨	૧૦૪
દન્દાટ	૧૬	૩૩	દન્દાન	૮૪	૧૦૫	કાદ	૩૨	૬૧
દન્દિન	૫૨	૧૦૮	દન્દાન્દ	૩૩	૫૪	કાદા	૬૩	૧૩૬
દન્દાન	૫	૧૦	દન્દાય	૨	૨	કાચ	૯૦	૧૦૧
દન્દિન	૫	૧૦	દન્દાપતિ	૨૯	૮૦	કાચ્ચુદ	૯૦	૧૧૪
દન્દિન	૫	૧૦	દન્દા	૮૪	૧૨૮	કાદાથ	૬૯	૯૯
દન્દામૃગ	૫૫	૧૨૩	દન્દાનીકુન	૧૧	૧૯૬	કાટિ (કાટી)	૫૧	૧૦૩
દ			દન્દાન	૬૦	૧૦૨	કાટિમૂત્ર	૬૦	૧૨૦
દગ	૩૫	૩૦	દન્દાન	૩	૬	કાટીમૂત્ર	૬૦	૧૨૦
દગ	૮૩	૧૮૪	દન્દાન	૩	૬	કાઠિન	૫	૧૫૫
દન્દા	૭૬	૧૫૮	દન્દાની	૧	૧૧	કાઠાર	,	,
દન્દાચાવચ	,	૧૧૮	દન્દાની	૧	૧૧	કણ	૩૦	૭૮
દન્દાચીમ	,	૧૫૮	દન્દાની	૮૦	૧૮૪	કણ	૩૦	૭૮
દન્દાદૂન	,	૧૧૮	દન્દાની	૮૦	૧૧	કણાણ	૫૦	૧૦૦
દન્દાદુ	૨૫	૪૮	દન્દાનીન	૧	૧૯૬	કણાણ	૮૫	૧૦
દન્દાન	૮૦	૧૮૪	દન્દાની	૮૦	૫	કદન	૪૪	૮૭
દન્દાનિવા	૧૦	૨૦	દન્દાની			કદમ્બા	૬૦	૧૩૯
દન્દાની	૧૨	૧૦૪	દન્દાનીકુ	૧૧	૧૧૦	કદદ	૮૦	૧૬૬
દન્દાની	૮૮	૨૬	દન્દાની	૧૩	૮૬	કનનક	૪૭	૯૩
દન્દાનીયાનિ	૮૮	૨૬	દન્દાની	૧૦	૧૧૩	કનીયમ	૨૧	૪૩
દન્દાનીયાય	૨૦	૬૦	દન્દાની			કનીય	૬૨	૮૩
દન્દાની	૧૧	૨૨	દન્દાની			કનીયા	૩૫	૭૦
દન્દાનીધા	૬૮	૧૩૮	દન્દાની	૨૫	૪૮	કનીયાન	૩૫	૭૦
દન્દાની	૫૮	૧૦૯	દન્દાની	૮૦	૧૮૨	કનીયાન	૩૫	૭૦
દન્દાની	૮૬	૧૦૪	દન્દાની	૨	૩	કનીયાન	૩	૧૨
દન્દાની	૮૬	૧૦૪	દન્દાની			કનીયાન	૭૦	૧૪૩
દન્દાની	૧૩	૮૩	દન્દાની			કનીયાન	૧૧	૧૧૫
દન્દાની	૫૧	૧૦૨	દન્દાની	૧	૩૬	કનીયાન	૮૫	૧૭૭
દન્દાની	૬૨	૧૨૩	દન્દાની	૮૮	૧૫	કનીયાન	૮૫	"
દન્દાની	૪૦	૮૦	દન્દાની	૮૧	૧૬૯	કનીયાન	૧૦	૨૦
દન્દાની	૮૧	૧૬૮	દન્દાની	૮૬	૧૩૧	કનીયાન	૮૫	૧૭૭
દન્દાની	૮૧	૧૬૮	દન્દાની			કનીયાન	૧૨૩	૪૫
દન્દાની	૮૧	૧૬૮	દન્દાની	૪૨	૮૩	કનીયાન	૧૫૦	૧૦૧
દન્દાની	૮૮	૧૩૪	દન્દાની	૩૦	૫૯	કનીયાન	૬૫	૧૨૯

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
करभ	४६	११	कामिन्	१८	३७	कुमुद	११	२२
करवालक	४३	८१	कामिनी	१४	३०	कुमुदप्रिय	२४	४७
कराड्गुलि	५०	१०१	कामुक	१८	२७	कुमुदविप्रिय	२७	५१
करिन्	४५	८८	कामुकी	{ १५ १७	३१ ३६	कुमिभन्	४५	८८
करण	५४	११०	काय	१९	३८	कुमिभनी	३	६
करेण्	४५	८९	कार्तस्वर	४७	९४	कुरुणश्रु	८४	१४५
कक्ष	७५	१५४	कार्तिकेय	३४	६७	कुल	६३	१२४
कर्ण	४९	९८	कार्मुक	४०	७९	कुलटा	१७	३५
कर्णगूलिन्	७०	१४४	कार्मुकिन्	७०	१४३	कुल्या	१६	३२
कर्दम	१०	२०	काल	{ ७१ ७२	१४५ १४८	कुवलय	११	२२
कर्पूर	५९	११८	कालशेय	६२	१२३	कुश	७	१५
कलङ्क	७३	१५२	काली	७३	१५०	कुशलिन्	७९	१६४
कलत्र	१६	३२	काश्यप	५८	११५	कृपार	१२	२५
कलधौत	४७	९४	काहल	७५	१५५	कूर्मास	९०	१९६
कलभ	५२	१०५	काष्ठा	३२	६१	कृच्छ्र	८८	१८६
कलम	८१	१६३	काष्ठापाल	३२	६१	कृतान्त	{ ३ ७१	८
कलह	{ ४४ ८१	८७	काष्ठाम्बर	३२	६१	कृतिन्	७९	१४५
कलपिन्	६३	१२६	किवदन्ती	७४	१५४	कृत्स्न	८८	१८७
कलाभूत्	२४	४७	किकार	१४	२९	कृपण	८४	१७५
कलिल	६६	१३१	किनन	७६	१५७	कृपा	५४	११०
कलेवर	१९	३९	किजन्तक	{ ७३ ७३	१५९ १५२	कृपाण	४३	८५
कल्माषी	७३	१५०	किनव	२९	१६०	कृश	८८	१७१
कल्याण	११	१९८	किरण	२३	४५	कृष्ण	{ ३९ ७२	७८
कल्लोल	१३	२७	किरात	७	१४	कृष्ण	{ ७२	१८८
कवच	१०	१९४	किरीठिन	७०	१४४	केकार	४९	९०
कट्ट	८८	१८६	किर्त्तिष	६६	१३१	केकिन्	६३	१२५
कस्तूरी	५९	११७	कीचकश्रु	७१	१४५	केतु	४३	८४
कस्वर	४७	९५	कीति	७४	१५३	केवलिन्	५८	११६
कान्चन	४७	९३	कीनाय	८४	१७५	केश	९०	१९५
काञ्ची	६०	११९	कु	३	६	केशवन्वन	९१	..
काष्ठ	३९	७८	कुकुर	४६	९२	केशरिन्	८५	९०
कादम्बरी	६१	१२०	कुक्षि	५१	१०२	केशव	३७	७४
कानन	६	१३	कुकुम	१९	११७	केशवाप्रज	७०	१४२
कानीनजनक	२७	५१	कुच	५१	१०२	केशिन्	३६	७५
कान्न	{ १८ ८५	३७	कुचेर	४८	९५	केरव	११	२२
कान्ता	१६	३३	कुबज	७६	१५८	कोक	६४	१२७
कान्तार	६	१३	कुमार	३४	६७	कोकनद	१०	२१
कान्तिमत्	२४	४७						
काम	३९	७७						

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
कोटि	६०	७९	खग	३९	७८	गृहस्थान	६८	१३७
कोदण्डक	६०	७९	खङ्ग	४३	८५	गुलिका	४७	९४
कोप	५८	१०९	खण्ड	८९	१८७	गुह	३४	६७
कोमल	३५	१५५	खन्कृत	५३	१०६	गूढचर	८१	१६९
कोविद	७९	१६४	खरदण्ड	१०	२१	गृहन्	८४	१५५
कोप	८९	१८८	खल	२२	४४	गृह	{ १६	३२
कोरेयक	६३	८१	खला	१७	३५	{ ६६	१३२	
कौतुक	८४	१७४	खलु	{ ८४	१५९	गेह	६६	१३२
कौनेय	७१	१४६		{ ८४	१७३	गेहिनी	१६	३२
कौमुदी	२४	४७	खान	६७	१३४	गो	{ २३	४५
कौरव्य	७१	१४६	खेचर	२८	५४	{ ७९	१६३	
कौलेयक	४६	९२	खेद	५४	१०९	गोत्र	८०	१६५
कौशिक	३०	६०	खेय	६७	१३४	गात्रशत्रु	३०	५८
कौमुम	७३	१५९	रथानि	७४	१५३	गोथा	१३	२८
कृतु	५६	११२		ग		गोपुर	६७	१२४
क्रेकृत	५३	१०७	गगन	२८	५३	गोमण्डल	७८	१६२
क्रोट	४६	९१	गहा	{ ३६	७१	गोमिनी	३८	७६
क्रोध	५४	१०९		{ ७८	१६२	गोलाद्गूल	६	१२
क्रांच	५२	१०७	गज	४५	८८	गोविन्द	३७	७६
क्रौचभेदिन्	३४	६७	गणिका	१७	३६	गीतम	५७	११४
क्षणे	०६	१५७	गन्धवाह	३२	६२	गौर	७२	१४०
क्षणदा	२५	४८	गम्भि	२३	४५	गौरी	७३	१५०
क्षगमचि	९	१९	गरुमत्	८५		ग्रन्थ	३	४
क्षतज	८९	१८८	गर्ज	५२	१०५	ग्रहाविष्प	२६	४९
क्षगाकर	२६	४८	गर्ता	८९	१९०	ग्रामशादूल	४६	९२
क्षमा	३	५	गविन	८१	१६८	ग्रीवा	५०	१००
क्षाम	८२	१७१	गल	५०	१००	ग		
क्षिति	३	६	गव्या	४१	८२	{ ८	१८	
क्षिपा	२५	४८	गहन	{ ६	१३	{ ८२	१७०	
क्षिप्र	८३	१७२		{ ८८	१८३	घन		
क्षीर	६२	१२२	गहर	८९	१९०	घनमार	५९	११८
क्षीण	८२	१७४	गहरी	३	५	घनाघन	८	१८
क्षुण्ण	३९	१६४	गाण्डेविन्	७०	१४३	घृष्टि	४६	९१
क्षुरप्र	३९	७८	गिर	५२	१०४	घोर	८७	१८४
क्षेम	९१	१९८	गिरि	४	८	घोष	७८	१६२
क्षोणी	३	६	गिरीश	३५	६९	घ्राण	५०	१०२
क्षमा	३	"	गीवणिंग	३०	५८	च		
	ख		गुण	{ ४१	८२	{ ८	७६	
				{ ६०	११९	चक्रधर	३८	
			गणनिका	८८	११९	चक्रवाक	२७	५१
			गुणावलि	७४	१५३	चक्राङ्ग	६३	१२५
	ख	{ ६५	गुह	९२	१२३	चण्डी	१६	३३
		१२९				चतुर	७९	१६५

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
चतुर्मुख	३६	७२	जननी	१८	३८	तट	{ ४	९
चतुर्ष्यात्	७९	१६३	जनपद	४८	९७	तटी	{ १३	२६
चन्द्र	२४	४७	जनान्न	४८	११	तटोच्छ्रवाम	१३	२७
चन्द्रमम्	२४	"	जनि	१६	३२	तटिन्	९	१८
चमू	४३	८६	जनोदाहरण	८४	१५३	तटिद्वन्वा	३०	५६
चमूर	४६	९०	जह	५१	१०३	तनि	६९	१४०
चर	८६	१८२	जल	५	१५	तनय	२०	४०
चरण	५१	१०३	जलद	५३	१०५	तन्	१९	३८
चरण्य	३२	६३	जव	८५	१३२	तनु	९०	१९४
चलन	५१	१०३	जवन	३८	६३	तनुत्र	९०	१९४
चला	११	३०	जङ्घात	२९	५०	तनूदरी	१५	३६
चान्द्रकृत्	७९	१६५	जान	८१	१६७	तनूनपात	३२	६४
चाप	८०	७०	जानस्प	८७	०३	तपन	२६	४९
चार	८६	१८२	जानकेदग्	३२	६४	तपनीय	४७	९४
चार	८५	१६८	जानु	५१	१०३	तपश्चिन	२	३
चिकुर	००	१९५	जाया	१६	३२	तम	७२	१४८
चिन्त	४१	८१	जाहवी	३३	७१	तमम्	७२	
चित्र	८४	१०४	जिन्या	७०	१४३	तमारि	२६	५०
चिह्न	४३	८४	जिन	५३	११२	तर	८३	१७२
चिराय	५५	१८२	जिण्ण	७०	१४३	तरग	१३	२७
चीनकृत्	५३	१०६	जिह्वा	४६	९२	तरगिणी	१२	२४
चीर	५९	११७	जीमूत	८	१८	तरणि	२६	४९
चूडापात्र	९१	१२९	जीमूत	{ ८६	१५६	तरवारि	४२	८५
चेतम्	८१	८१	जाण	{ ८२	१०१	तरग्निन्	१०	१९३
चेन	५०	११७	जीवन	८	१५	तर	५	११
चाय	८४	१७३	जीवा	८१	८२	तस्कर	८१	१६०
चौर	८१	१०९	ज्या	४२	८२	तापम	२	३
	८		ज्या	४२	८२	तामरम्	१०	२०
छव	९०	११४	ज्याम्	५७	११४	तारा	२५	४८
छद्गन्	६८	१३८	ज्येष्ठ	२१	४३	तारुण्य	६२	१२४
छिद्र	८९	११०	ज्योति	२३	४६	तार्थ्य	६५	१२८
छल	{ ६८	१३८	ज्वलन	३३	६५	तिग्म	{ २६	४९
	{ ८९	१८८				तिमि	{ ८७	१८४
ज			झ				८	१७
जगन्	१७	११३	जटिनि	८३	१७२	तिमिर	{ ७२	१४८
जगता	३	६	झप	८	१७		{ ८७	१४४
जघन	५१	१०३	झषकेतु	४३	८४	तिमिरार्ग	२६	५०
जठर	{ ५१	१०२	झषध्वज	४३	११	तीर	१३	२६
	{ ७६	१५६	झड़ कृत	५३	१०१	तीर्थ	५८	११५
जउ	८०	१६६	त			तीर्थकर	५८	११६
जनक	१८	३८	तक	६२	१२३	तीर्थकृत्	५८	"

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
तीर्थ कर	५८	११६	दशमीस्थ	५४	१०८	दृष्टि	४९	९९
तीव्र	८७	१८४	दगा	६२	१२४	देव	३०	५६
तुक्	१८	३९	दस्यु	७	१४	देवानाप्रिय	८०	१६६
तुङ्ग	७६	१५८	दहन	३३	६५	देह	१९	३८
तुरग	२७	५२	दामोदर	३७	७४	देहिका	७९	१६३
तुरगम	२७	,	दारक	२०	४०	दैत्यारि	७०	१४४
तुरगमा॒ह	३०	६०	दारा	१६	३२	दोम्	५०	१०१
तुला	६७	१३६	दारिका	१७	३६	दोष	२५	५०
तुलाकोटि	५३	१०७	दारण	८३	१८४	द्युति	२३	४५
तुल्य	६७	१३६	दामी	१७	३६	द्युमणि	२६	४९
तुपार	८५	१७९	दिक्-दिग्	३२	६१	द्यर्धुनी	३६	७१
तुहिन	८५	१७९	दिक्पाल	३२	६१	द्युम्	२८	५३
तूर्ण	८३	१७२	दिग्मवर्ग	३२	६१	द्यूत	३६	७१
नेजम्	२३	४५	दिग्गज	३२	६१	द्यो	२८	५३
नेजम्बिन्	९०	१९३	दिन	२६	५०	द्वि॒ष्टि	३०	५६
नोक	१९	३९	दिव्-दिव	२८	५३	द्रविण	४७	९५
नीमर	३९	७८	दिवस	२६	५६	द्रव्य	४७	"
नाम	७	१५	दिवा	२६	५०	द्रक्	७६	१५७
नोप	५४	१०९	दिव्यवाक्पति	५८	११६	द्रुत	८३	१७२
निककुत्	४	८	दीक्षित	३	४	द्रुम	५	११
निदय	३०	५६	दीविनि	२३	४५	द्रुहिण	३६	७१
निनेत्र	३५	६९	दीन	८४	१७५	द्वन्द्व	२	२
निपत्नया	३६	७१	दीप्ति	२३	४६	द्रूय	२	"
निरुत्तारि	३५	६९	दीर्घ	८७	१८३	द्वितय	२	"
निमार्गगा	७८	१६२	दुर्ग	६२	१२२	द्विप	४५	८९
न्यम्बव	३५	६८	दुर्गिन	६६	१३१	द्विगद	४५	८८
द	८६	९१	दुर्गा	६	१३	द्विरेक	११२	२४
दधित्रून्	८६	९१	दुर्जन	२२	४४	द्विष	२२	४४
दथावन्या	३२	६१	दुष्कृत	६६	१३१	द्विषत्	२२	"
दण्ड	४३	८६	दुष्ट	२२	४४	द्वेष	५८	१०९
दन्त	४	९	दुर्ति	२०	४०	द्वेषिन्	२२	४४
दन्तवास	५०	१००	दृती	१७	३५	द्वैत	२	२
दन्तिन्	४५	८८	दून	८२	१७१	ध		
दया	५४	११०	दृढ	७५	१५५	धन	४७	९५
दयित	१८	३७	दृतिहरि	७८	१६३	धनजय	७०	१४४
दयिता	१६	३३	दृष्टि	८१	१६८	धनद	४८	९६
दरीभूत्	४	८	दृश	४९	११	धनदाय	४८	"
दर्शनीय	८५	१७८	दृष्ट	८२	१७०	धनुष	४०	७९
दशनच्छद	५०	१००	दृष्ट	५४	१०८	धन्वन्	४०	७९
						धर्मनीधम	५०	१००

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
धर्मलल	११	११५	ननादृ	२१	४३	नित्य	७७	१५९
धरणी	३	६	नन्दन	२०	४०	निदेश	७८	१५४
धरा	३	५	नभम्	२८	५३	निपुण	७९	१६४
धरित्री	३	६	नभस्वत्	३२	६३	निबोध	७३	१५२
धर्म	१०	७९	नभ्राद्	८	१८	निभ	६८	१३८
धर्मचक्रभूत्	५८	११६	नमुचिशत्र्	३०	५८	निम्नगा	१२	२४
धर्मात्मज	७१	१४६	नयन	४९	९९	नियन्त्रित	८५	१७६
धव	१८	२८	नग	१३	२८	नियामित	८५	१७६
धवल	७१	१८३	नगक	८९	१९०	नियोग	७४	१५४
धातु	८२	१७०	नलिन	१०	२०	निर्धात	९	१९
धात्री	३	५	नव	७५	१५६	निर्वूह	६७	१३५
धानुषक	७	१४	नवय	—	—	निलय	६६	१३३
धामन्	{ २३	४६	नाक	३०	५६	निवसन	५९	११७
	{ ६६	१३३	नाग	{ ४५	८९	निवृत्त	६६	१३२
विषणा	५५	११०		{ ६४	१२८	निवेशन	८९	१८९
धिष्ण्य	६६	१३२	नागरिक	८०	१६५	निशा	२५	४८
धी	५५	११०	नागारि	४५	९०	निशाचर	८१	१६९
धुनी	१२	२४	नाथ	५	१०	निशाल	६६	१३२
धुर्य	२७	५२	नाथहरि	७८	१६३	निपाद	७	१४
धूम	७२	१४८	नाथान्वय	५८	११५	निपादिन्	४५	८९
धूर्जटि	३५	६८	नाभिज	५७	११४	निष्णात	३९	१६४
धूर्त	७९	१६५	नाम	८०	१६५	निमग	८८	१८५
धूलि	७३	१५१	नारद	३७	७३	निष्ठल	८७	१८३
धूलिकुट्रिम	६७	१३४	नाराच	३९	७८	निरित्रित	८३	८५
धेनु	५२	१०५	नारायण	३७	७४	नीच	{ ५६	१५८
धैर्य	१३	१७१	नारी	१८	३०		{ ८१	१६८
धवजा	४३	८४	नासा	५०	१०२	नीचंम्	७८	१५८
धवजिनी	४३	८६	निकट	६९	१४१	नीर	७	१५
ध्वानात्मि	२६	५०	निकर	६९	१३९	नील	७२	१४८
	न		निकाय	{ ६६	१३३	नीलकण्ठ	६२	१२६
न	७६	१५७		{ ६९	१४०	नीलपितृजरी	७३	१५०
नक्तम्	२५	४८	निकुरम्ब	६९		नीललोहित	३५	६९
नक्तव	२५	—	निकेतन	६६	१३२	नीलवसन	७०	१४२
नग	५	११	निगदपुरष	८६	१८२	नीलाम्बुजन्मन्	११	२२
नगरी	४८	९७	निचय	६९	१४०	नीहार	८५	१७९
नद	१२	२४	निज	८८	१८५	नूतन	७५	१५६
नदी	१२	—	नितम्ब्र	{ ४	९	नूपुर	५३	१०७
नदीश्वरी-नदीश्वर	३६	७१		{ ५१	१०३	नृ	१३	२८
नदीष्वरण	७९	१६४	नितम्बिनी	१५	३१	नृप	{ ४	७
			निष्मान्त	८३	१७३		{ १४	२८

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
नपकतु	५६	११२	परामु	५४	१०८	पाशित	८५	१७८
नेड	८०	१६६	परिखा	६७	१३४	पाशनीन	८५	१७६
नव	४९	९९	परिचित	५८	१०८	पाषाण	८२	१७०
नेक	६०	१६१	परिणयन	८०	१८९	पितामह	३६	७२
नेयाधिक	५५	१११	परिधि	६०	१३४	पितृ	१८	३८
न्यूच	७६	१५८	परिवाद	१८६	१११	पिन्ड	८५	१७६
प								
पक्षिन्	२९	५८	परिवृद्ध	५	१०	पिशित	२९	५५
पड़क	११०	२०	परिषत्	१०	२०	पिशुन	८१	१६८
पड़क	१७३	१५२	पहय	५५	११५	पिशी	७३	१५०
पक्षि	६१	१४०	पर्जन्य	८	१८	पीठ	५६	११३
पटु	७९	१६४	पर्वत	४	८	पीत	७०	१४९
पट्टन	८८	९७	पल	२९	५५	पुश्चर्णी	१७	३५
पण्डित	५५	१११	पल्लक	७७	१६०	पुटभेदन	४८	९७
पण्यस्त्री	१७	३६	पवन	३२	६२	पुण्य	६५	१२९
पनड़	१२६	४६	पवनपुत्र	३३	६३	पुण्डरीक	१०	२१
पनड़	१२८	५४	पवनमत्व	३३	६४	पुत्र	१९	३९
पत्रिन्	२९	५४	पशु	५०	१६३	पुनर्भू	१७	३५
पत्राका	४३	८४	पासु	७३	१५१	पुम्	१३	२८
पति	५	१०	पाकशत्रु	३०	५८	पुर्	४८	९७
पतिवर्ली	१३	३८	पाटल	८२	१९	पुर	८८	..
पतिवता	१३	३४	पाटीन	८	१७	पुर	८८	५८
पत्तन	४८	९७	पाणि	५०	१०१	पुरन्दर	३०	३१
पति	१४	२९	पाण्डु	७१	१४७	पुरन्धी-पुरन्द्रि	१६	३१
पत्ती	१६	३२	पाण्डुर	७१	१४९	पुरण	७६	१५६
पत्रिन	२६	५८	पानाल	८०	१९०	पुरी	८८	९७
पथिन	७८	१६१	पायस्	८	१५	पुरु	५७	११४
पद	५१	१०३	पाद	१२३	४५	पुरुष	१३	२८
	६६	१३३		१५१	१०३	पुरुषोत्तम	३७	७४
	६८	१३८	पादप	५	११	पुरुहूत	३०	६०
पदग	१४	२०	पाप	६६	१३१	पुरोगति	४६	९२
पदार्थ	१४	..	पाप्मन्	६६	..	पूर्ण	६२	१२३
पद्य	१०	२०	पार	१३	२६	पुलिन्द	७	१४
पञ्चनाम	३७	७५	पारावार	१२	२५	पुलोमार्गि	३०	६०
पन्नग	६४	१२८	पारिषद्व	५६	११२	पुष्कर	११	२१
पय्म्	७	१५	पार्श्व	४	९	पुष्करिन्	४५	८९
पयोधर	६२	१२२	पालाश	७२	१५९	पुष्कल	८८	१७३
पराग	७३	१५१	पाली	१३	२७		९०	११४
			पावक	३३	६४	पुष्प	४०	८०

शब्द	पृष्ठ	इलोक	शब्द	पृष्ठ	इलोक	शब्द	पृष्ठ	इलोक
पुष्पहेति	४२	८३	प्रवृत्ति	७४	१५४	फूल	४०	८०
पूग	६९	१३९	प्रशस्त	८६	१७८	व		
पूषन्	२६	४९	प्रसन्ना	६१	१२१			
पृतना	४३	८६	प्रसव	४०	८०	वड	८५	१७६
पृथिवी	३	५	प्रमाधन	६०	११८	वन्धकी	१७	३५
पृथुरोमन्	८	१७	प्रमूल	४०	८०	वन्धु	२१	४२
पृथुल	८७	१८३	प्रस्तर	८२	१७०	वन्धुर	८५	१७८
पृथु	८७	"	प्रस्थ	४	९	वल	{ ४३	८६
पृथ्वी	३	५	प्रसन्ना	१६	१२१	{ ७०	१४२	
पृष्ठ	६४	१२७	प्राग्	८७	१८३	बलयत्	३०	५८
पेशल	७५	१५५	प्राकार	६७	१३४	बलाहक	८	१८
नेशन्	२९	५५	प्राकृतन	७६	१५६	बलिसूदन	३७	७५
पोन	२०	४०	प्राचीनर्वाह	३०	५७	बहिष्ठ	९०	१९१
पोत्रिन्	४६	९१	प्राज्य	९०	१९१	बहु	९०	१९५
पौष्टि	८३	१७१	प्राज्ञ	५५	१११	बहुल	{ ८०	१८३
प्रकर	६९	१४०	प्राभन	९०	१११	{ ९०	१९७	
प्रकृति	८८	१८५	प्रायम्	६२	१२३	वाण (वाण)	३९	७८
प्रगत्यम्	७९	१८४	प्रारम्भ	५२	१०४	वाणवारण	९०	१९४
प्रचर	७८	१६२	प्रालेय	८५	१७१	वाणमृदन	३७	७५
प्रचुर	९०	१९१	प्रावृष्टिक	६३	१२६	वाणी (वाणी)	५४	१०४
प्रजा	१९	३९	प्रामाद	८७	१३५	वाल	९०	१९५
प्रजापति	{ ३७ ५७	७४ ११४	प्रिय	{ १८ ७४	३७ १५४	वाला	१५	३१
प्रज्ञा	५५	११०	प्रिया	१६	३३	वाहु	५०	१०१
प्रणयिनी	१६	३३	प्रियाम्बिका	२२	४३	वाहिणिम्	५०	"
प्रणिधि	{ ८१ ८६	१६९ १८२	प्रीत	१८	३७	विमिनी	११	२३
प्रतिरोधक	८१	१६९	प्रेमन्	७७	१६०	वध	५६	११२
प्रतीन	५४	१०८	प्रेयम्	७८	३७	व्रद्धन	२६	४९
प्रतोली	६७	१३४	प्रेयमी	१६	३३	व्रद्धन	७३	११६
प्रत्यय	७५	१५६	प्रेण्टि	५२	१०४	झीहि	८१	१६१
प्रभव्यजन	३२	६३	प्रेष्ठा	१६	३३			
प्रभा	२३	४५	प्रेष्य	७४	१५४	भ	२५	४८
प्रभु	५	१०	प्लवग	६	१२	भग	१३	२७
प्रभव्याधिप	३५	६८		क			{ १४	२९
प्रभद	५४	१०९	फणिन्	६४	१२८	भट	{ ५३	१०६
प्रभदा	१६	३३	फलिन्	५	११	भद्र	९१	११८
प्रभोद	५४	१०९	फलेग्राहिन्	५	११	भर्त्	५	६०
प्रवीण	७९	१६४	फलगु	७५	१५५	भर्तु स्वसा	२१	४३
प्रवीर	९०	१९३	फलगुन	७०	१४३	भर्मन्	४७	९३

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
भरतान्वय	७१	१४८	आतृजानी	२१	४३	मन्यु	५४	१०९
भव	{ ३५ ९०	७० १९२	आतृव्य	२२	४४	मत्रपूतान्मन्	६५	१२९
भवन	६६	१३२	म			मय	४६	९१
भविक	९१	११८	मकरवज	३९	७७	मयूखवन्	२८	५२
भव्य	९१	११८	मकरवद	७३	१५९	मयूर	६३	१२६
भागधेय	६५	१३०	मधु	८३	१७२	मराल	६३	१२५
भागीरथी	३६	७१	मगल	९१	११८	मरीचि	२३	४५
भाग्य	६५	१३०	मद्यवन्	३०	६०	महत	३०	५९
भानु	{ २३ २६	४५ ८९	मजीगक	५३	१०७	महत्	{ ४ ३२	६२
भासा	१५	३१	मठल	८३	९२	मरुत्वन्	३०	५९
भासिनी	१४	३०	मडलाय	४३	८५	मरुपुत्र	३३	६३
भारती	५२	१०४	मर्णित	५३	१०६	मरुसम्ब	{ ३० ३३	६० ६४
भार्या	१६	३२	मतराज	४१	८८	मर्कंट	६	१२
भाव	१०	११२	मन्य	८	१६	मर्त्य	६३	२८
भावुक	११	११८	मत्तवाण्ण	६७	१३५	मर्म	८९	१८८
भास्	२३	४५	मयित	६२	१२३	मर्लिन	७३	१५२
भासुर	१०	११३	मदन	३९	७७	मलिका	५९	११३
भास्कर	२३	४६	मदिग	६१	१२०	मरीमम	७३	१५२
भास्वर	१०	१०३	मद्य	६१	१२०	महति	५८	११५
भिक्षु	२	३	मद्यप	६१	१२१	महम्	२३	८६
भीक	१४	३०	मधु	७३	१५१	महावीर	५८	११५
भृज	५०	१०१	मधुवाग	६१	१२१	महाद्रव	४४	८७
भृजगम	६४	१२८	मधुवत	४२	८२	महिला	१६	३२
भवन	५७	११३	मधुसूदन	३७	७५	महिनी	७९	१६३
भू	३	५	मत्यमपाण्डव	३०	१४३	मही	३	५
भृमि	{ ३ ३८	५ ८६	मनस्	८१	८१	महेश्वर	३५	८८
भूमिधर	३८	७६	मनस्मिन्	९०	१९३	महोत्पल	१०	२१
भूयिष्ठ	९०	१११	मनस्मिनी	९७	३४	मास	२९	५५
भूरि	९०	१११	मनीषा	५१	११०	मा	७६	१५९
भूपण	६०	१११	मनुज	१३	२८	मातग	८५	८०
भृग	४२	८२	मनुप्य	१३	,,	मातरिश्वन्	३२	६३
भृतक	१४	२९	मनोज	८५	१७८	मातुलानी	२२	४३
भृत्य	१४	२९	मनोहर	८५	१७७	मातृ	१८	३८
भृशम्	८३	१७३	मद	{ ८० ८७	१६६ १८४	मानव	१३	२८
भो	७६	१५७	मन्दाकिनी	३६	७१	मानिन्	८१	१६८
अमर	४२	८२	मन्दिर	६६	१३२	मानिनी	१६	३२
			मन्मथ	३९	७७	मानुष	१३	२८
						मार	८१	८१०

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
मार्ग	७८	१६२	मैत्री	९१	१९७	रक्षा	२९	५५
मार्गण	३०	७८	मैत्रेयिक	९१	१९७	रजत	४७	९४
मार्तण्ड	२६	४९	मैरेप	६१	१२०	रजनी	२५	४८
माला	६०	११९	मोष	८८	१८६	रजम्	७३	१५१
मान्य	६०	"	मोण्ड्य	३	४	रण	४४	८७
मितगम	४५	८८	मावितक	४७	१४४	रत्नाकर	१२	२५
मित्र	२०	४१	मौर्वी	४१	८२	रथ्य	२७	५२
मित्रयुक्	२०	"	य			रन्द्र	८९	१९०
मिहिंग	८	१८	यज्ञार्ग	३५	६९	रमण	१८	३७
मीन	८	१७	यति	२	३	रमणी	१६	३३
मीनाकर	१२	२९	यन्त्र	४५	८०	रमणीय	८५	१७७
मुख	४९	९८	यम	{ २	२	रम्य	८५	"
मुध	८०	१६६		{ ७१	१४५	रय	८३	१७२
मुख्या	१४	३०	यमजनक	२७	५१	रवि	२६	४९
मुक्ता	१७	३५	यमल	२	२	रथम्	२३	४६
मुद्	५४	१०९	यमुनाजनक	२७	५१	रमना	६०	१९०
मुधा	८८	१८६	यन्म्	७८	१५३	रम्य	८१	१९०
मुति	२	३	यातुधान	२९	५५	रहम्	८४	१७६
मुरमूदन	३७	७५	यातृ	४०	८०	रहस्य	८४	१७५
मुहुर्मुहुः	८८	१८५	याय	८७	१८४	राग	७७	१६०
मूक	८०	१६६	यादम्	८	१०	राजन्	५	१०
मूख्य	"	"	यून	३७	१६७	राजयद्वमन्	७१	१४६
मूङ	"	"	युग	२	२	राजगज	४८	९६
मूर्ति	१०	३९	युगल	२	२	गजमय	५६	११२
मूर्दन्	५२	१०४	युग्म	२	२	गतिवर	२९	५५
मृग	६४	१२७	यन	७७	१६१	गतिजागर	४६	९२
मृगनाभिजा	५९	११७	युद्ध	४४	८७	रामा	१५	३१
मृगाक	८६	१७९	युधिष्ठिर	७१	१४६	राष्ट्र	४८	९७
मृगेन्द्र	४५	१०	युवति	१५	६१	रिपु	२२	४४
मृत	५४	१०८	योगिन्	२	३	हचिं	८८	१७८
मृत्यु	७१	१४५	योग्या	८५	१८५	हचि	२३	८५
मृदु	७५	१५५	योषा	१४	३०	हच्य	६०	११९
मृषा	८८	१८६	योषित्	१८	३०	हृ	३५	६९
मैत्रला	{ ४	९	योवन	६२	१२४	हृविं	{ ५९	११८
मेघ	८	१८	यीवनिक	६२	१२३		{ ८९	१८८
मेघपथ	२८	५३	र			हृष	५४	१०९
मेदिनी	३	५	रहत	{ ५९	११८	हृषाजीवा	१७	३६
मेथावी	५५	१११		{ ७२	१४९	हृष्य	४७	१४
				{ ८१	१८८	रे	७६	१५७

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
रेणु	७३	१५१	वत्स	८१	१६७	वस्त्य	६६	१३३
रेवनीदयित	७०	१४२	वदन	४९	९८	वस्त्र	५९	११७
रे	४७	०५	वभू	१४	३०	वारिमन्	५५	१११
रोधम्	१३	२६	वन	{ ६ ७	१३ १५	वाच्	५२	१०४
रोपण	३९	७८	वनमानि	५	११	वाचस्पति	९२	१९९
रोहिणीपति	८६	१७९	वनिना	०४	३०	वाजिन्	२७	५२
रोहिताश्व	३३	६५	वनेचर	६	१३	वात	३२	६२
ल								
लक्ष्मन्	७२	१५२	वहि	३३	६४	वाण	६	१२
लक्ष्मी	३८	७६	वपुस्	१९	३८	वाण (वाण)	३९	७८
लक्ष्मीपति	३८	"	वप्र	६७	१३४	वाणवारण	१०	१९४
लवु	८३	१३२	वयम्	{ २९ ६२	५४ १२४	वाणम् दन	३७	७५
लजिका	१७	३६	वयस्या	२०	४१	वाणी (वाणी)	५२	१०४
लता	११	२३	वर	{ १८ १८९	३७ १८९	वामकोचना	१५	३१
लतान्त	४०	८०	वरटा	६४	११७	वायु	३२	६२
लपन	४९	९८	वर्गह	४६	९१	वायुपत्र	७१	१४५
लव्य	५४	१०८	वर्हथिनी	४३	८६	वार्	७	१५
ललना	१६	३०	वर्ग	६३	१२५	वार्ता	७४	१५४
लव	८९	१९७	वर्ण	७४	१५३	वारण	४५	८८
लागल	७०	१४२	वर्णिन्	२	३	वार्गी	६८	१२७
लाच्छन	७३	१५२	वर्तुल	८७	१८३	वारि	७	११
लूक्य	८४	१७५	वर्त्मन्	३८	१६२	वारित्रि	१२	२३
लवक	७	१४	वर्द्धमान	५७	११५	वारिगांगि	१२	२६
लैलिहान	६४	१२८	वर्मन्	९०	१९४	वार्षणी	६१	१२१
लेग	८६	१८७	वर्षीयम्	५७	११४	वार्द्धीन	६३	१२४
लाक	५७	११३	वर्हिण (वर्हिण)	६३	१२६	वासर	२६	५०
लोह	८२	१७०	वलक्ष	७१	१४७	वासव	३०	५९
लोहित	{ ७२ ८५	१४९ १८८	वलिमुख (वलीमुख)	८	१२	वामम्	५९	११७
लोहिती	७३	१५०	वल्लभ	१८	३७	वामुदेव	३७	७६
व								
वक्ता	९२	१६९	वल्लभा	१६	३३	वाह	२७	५२
वक्त्र	४१	९८	वल्लरी	११	२३	वाहिनी	४३	८६
वक्षम्	५१	१०२	वल्ली	११	२३	वि	२९	५४
वक्षोज	५१	१०२	वमनि	६६	१३३	विकल	८९	१८७
वचन	५२	१०४	वसु	४७	९५	विक्रम	८४	१७४
वनम्	५२	१०४	वमुधा	३	६	विवक्षण	५५	१११
वञ्च	९	१९	वमुन्वरा	३	६	विट	१८	३७
वञ्जिन्	३०	५७	वमुमती	३	५	विटपिन्	५	११
			वस्तु	४७	९१	विडीजम्	३०	५९

धनञ्जय-नाममाला

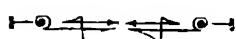
शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
विनय	८८	१८६	विनवरूप	३५	७०	वैशारिण	८	१७
वित्त	४७	०५	विश्वस	८८	१८५	वैश्वरण	४८	९६
विदग्ध	७९	१६६	विश्वभरा	३	५	वैश्वानर	३३	६५
विद्यमान	८६	१३७	विष	७	१५	वश	६३	१२४
विद्युत्	९	१९	विषक्षय	६५	१२८	व्यतिकर	६८	१३८
विद्वत्	५९	१११	विषधर	६४	१२७	व्यपदेश	६८	१३८
विद्यात्	३६	७२	विषय	४८	९७	व्यसन	८८	१८६
विधि	३६	७२	विकिर	२९	५४	व्याघ्र	४६	९०
विधिपुत्र	३७	७३	विष्टप	५७	११३	व्याघ	६८	१३७
विधु	२४	४७	विष्टर	५६	११३	व्यह	६९	१३९
विधुर	८८	१८६	विष्णु	३७	७४		६९	१३९
विनातात्मज	६१	१२७	विमय	८४	१३४	वज	६९	१४०
विनमान्य	८८	१३३	विहायम्	२८	५३		६८	१६२
विपिन	६	१३	वीचि	१३	२७	व्रतनी (व्रतनि)	११	२३
विफल	८८	१८६	वीतगग	५८	११६	व्रतिन्	२	३
विभावम्	१३	४६	वीर	५८	११५	व्रान्	६९	१३९
विभु	५	१०	वृक	६४	१२७	व्योमन्	२८	५३
विभ्रम	१३	२७	वृक्ष	४	७	श		
	४९	१०	वृजिन	६६	१३९	शकल	८९	१८७
वियत्	३८	५३	वृत्त	८३	१८३	शकुनि	२९	५४
वियोग	३७	१६०	वृत्तान्त	६८	१३८	शकुनीश्वर	६५	१२८
विरचिन्	३६	७२	वृत्तहन्	३०	५८	शकुन्ति	२९	५८
विरह	७३	१६०	वृद्या	८८	१८६	शकुन्तकरि	८१	१६७
विस्पाद्य	३५	३०	वृष्टन्	३०	५९	शक्तिमत्	३४	६७
विरोचन	२६	५०	वृष्टम्	५७	११४	शन	३०	५७
विलम्बित	८७	१८४	वृषभधज	३५	६९	शक्तनन्दन	७०	१४४
विरेपत	६०	११८	वृषभेश्वर	५९	११७	शकर	३५	६८
विन्दोचन	४९	११९	वृषसेन	७०	१४४	शपा	९	१८
विवर	८९	११०	वृषाक्षिपि	३३	६६	शम्	३५	६८
विवाह	८०	१८९	वृहित	५२	१०५	शभुविष्णवर	४२	८४
विवद	३२	१४८	वेग	८३	१७२	शठ	३९	१६५
	८४	१७३	वेधस्	३६	७२	शतक्रनु	३०	५७
विशाख	३४	६७	वेला	१३	२७	शतपत्र	११	२९
विशारद	७९	१५६	वेशमन	६६	१३२	शतमन्यु	३०	६०
विशारिन्	८	१७	वेश्या	१७	३६	शत्रु	२२	४४
विशाल	८७	१८३	वैजयन्ती	४३	८४	शकटी	८	१७
विशालाक्ष	३५	६९	वैनतेय	६२	१२९	शबरी	७३	१५१
विशिख	४१	८१	वैरित्	२२	४४	शब्दभेदिन्	७०	१४४

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
शर	{ ७ ३९	१९ ७८	शिव	{ ३५ ११	६८ १९०	श्रीद	४८	९६
शरण	६६	१३३	शिष्य	३	४	श्रुति	४९	९८
शरभ	४६	१०	शीघ्र	८३	१७६	श्रेयस्	९१	११८
शरवणोद्भव	३४	६७	शीघ्रगामुक	४६	११	श्रोणि(श्रोणी)	५१	१०३
शरीर	१९	३९	शीतल	८८	१८४	श्रोणीविव	६०	१२०
शर्व	३५	६७	शीधु	६१	१२०	श्रोतस्	६३	१२९
शर्वरी	६४	१२६	शीर्ण	८२	१७१	श्रोता	९२	१९९
शर्वरीकर	६४	१२७	शील	८८	१८५	श्रोत्र	४९	९८
शत्क	८९	१८७	शुक्षितज	४७	१४	श्लहण	८५	१७८
शवर	७	१४	शुक्ल	७१	१४३	श्वन्	४६	९२
शाजिन्	२३	४७	शुचि	७१	१४३	श्वभ्र	८९	१९०
शशिप्रभ	७७	१४७	शु डाशु ड	६१	१२१	श्वसन्	३२	६२
शश्वत्	०७	१५६	शु डाल	४५	८९	श्वेत	७१	१४७
शस्त्र	४२	८३	शुनासीर	३०	५७	श्वेतवाजिन्	७०	१४३
शम्बूजीविन्	१४	२९	शुभ्र	७१	१४७	श्वीबनीय	९१	१९८
शाखिन्	५	११	शुष्ठिर	८९	११०	ष		
शानकुम्भ	८२	१७२	शूकर	४६	९	पट्टपद	४२	८२
शान्त	८२	१७१	शूर	९०	१९३	पड्डशन	८१	१६७
शारणी-सारणी	७३	१५०	शूलिन्	३५	७०	पञ्चकीण	८	१७
शार्द्धज्ञन्	३७	७४	शू खलिक	४६	११	पण्मुख	३४	६७
शार्द्धल	४६	९०	शू खलित	८४	१६६	प्राप्तिक	८१	१६७
शालि	८१	१६७	शू गिन्	{ ४ ७८	८	पोडन्	८१	१६७
शासन	७४	१५४	शैमुषी	५०	६६०	स		
शास्त्र	२	४	शैल	{ ४ ३८	७	संयत	४४	८७
शिवरिन्	४	८	शैलधर	३८	७६	संयमिन्	२	३
शिविन्	{ ३३ ६३	६४ १२६	शैलधर	३८	७६	सयुग	४४	८७
शिविवाहन	३४	६६	शोणित	८९	१८८	सशरण	९०	१९२
शिखडिन्	६३	१२६	शोणी	७३	१५०	ससार	९०	,
शिपिविष्ट	३५	७०	शौड	६१	१२०	समृति	९०	"
शिरस्	५०	१०४	शौडीर	८१	१६८	सस्कृत	७३	१६१
शिरोधर	५०	१००	शौरि	३७	७५	सस्तुत	५४	१०८
शिरोरह	१०	१९५	शौर्य	८३	१७१	सस्थित	५८	१०८
शिला	८२	१७०	श्यामा	२५	४८	सहन	१९	३८
शिलीमुख	{ ३९ ४२	७८ ८२	श्येत	७१	१४८	सहित	७७	१६१
गिलीमुखासन	४०	७९	श्येनी	७३	१६०	सकल	८८	१८७
शिलोच्चय	४	८	श्रव	४९	९८	सक्त	६१	१२२
गिलोद्भव	४७	९४	श्रवण	४९	९८	सखी	२०	४१
			श्री	३८	७६	सख्य	९०	१९७

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
सगोत्र	२१	८२	सप्ताचिप्	३३	६४	सलिल	७	१५
मकन्दन	३०	६०	सप्ति	२७	५२	सवयम्	२०	४१
सगत	९१	१९७	सभोचित	५६	११२	सवर्ण	६७	१२६
सग्राम	४४	८७	सभ्य	५६	११२	सवितृ	५१	३८
सध	६९	१४०	सम	६७	१३६	सवित्री	१८	३८
सधात	६९	१४०		७७	१६९	सव्यमाचिन्	७०	१४३
सजाति	६७	१३६	समज	६९	१४०	सह	३७	१५९
सजुष्	७७	१५९	समर	४४	८७	सहकारिन्	२१	४२
मचर	०८	१६२	समवर्तिन्	७१	१४५	सहकृत्वन्	२१	४२
सजा	८०	१६१	समवायिक	२१	४२	सहचरी	२०	४१
मतन	८९	१८९	समवेत	७७	१६१	महमा	८३	१७२
मनत	७७	१५७	समस्त	८८	१८७	महाय	२१	४२
सती	१७	३४	समाज	६६	१३९	महाय	२१	४२
सन्कृत	६५	१२९	समालम्भ	६०	११८	महत्वपात्	३६	७३
मत्व	८७	१८२	समिति	६९	१४०	महत्वाक्ष	३०	५८
सत्यकार	९१	१९७	समीगर्म	३३	६६	महित	५७	१६०
सत्रा	७७	१६०	समीप	६९	१४१	साक्ष	७७	१६०
मदन	६६	१३२	समीरण	३२	६२	मागर	१२	२६
सदउचित	५६	११२	समुदय	६९	१४०	माधव	४३	८६
सदा	७७	१५९	समद्र	१२	२६	माधीयम्	८३	१७२
सदागति	३२	६२	समूह	६९	१३९	माधु	२	३
सदुचित	५६	११२	सम्पराय	४४	८७		८०	१७०
सद्वक्ष	६७	१३६	सम्पृक्त	७७	१६१	मानुवाद	७४	१५३
सद्वश	६७	१३५	सम्पली	१७	३५	माध्वी	१७	३४
सद्वृ	६७	१३६	सम्भृत	७७	१६१	मानु	४	९
सद्मन्	६६	१३२	सम्बन्ध	२०	४१	मानुमत्	४	८
सधर्म	६७	१३६	सरणि	७८	१६२	मामज	४६	८९
सधृची	२०	४१	सरमीरह	१०	२०	साप्रतम्	५६	११६
मनातन	६३	१२५	सरस्वत्	१२	२६	सारमेय	४६	९२
मनाभि	२१	४२	सरस्वती	५२	१०४	माहृ	७३	१५९
सन्तति	६३	१२४	सरित्	१२	२४	माल	६७	१३६
	६९	१३९					८६	१८१
सन्तमस	७२	१८८	सरूप	६७	१३६	माहम	७४	१५३
सन्तान	६३	१२५	सरोज	१०	२०	गाहाय्य	६२	१९७
सन्देश	७४	१५४	सर्वं	६४	१२८	सित	७१	१४९
सन्धानीत	८५	१७६	सर्पिष्	६१	१२२		८१	१७६
मन्त्रिधि	६९	१४१	सर्वं	८८	१८७	सिद्धान्त	३	४
सन्मति	५८	११५	सर्वेष	५८	११६	सिन्धु	१२	२४
सप्तन	२२	४४	सर्वदा	७७	१५९	सिन्धुर	४५	८९
सपदि	७६	१५०	सर्ववल्लभा	१७	३६	सिंह	५२	१०५

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
सीकृत	५३	१०६	सौहृद	९१	१९७	स्वाहापति	३३	६५
सीमन्	१३	२६	सौहृद्य	९१	१९७	स्वैरिणी	१७	३५
सीमन्तिनी	१४	३०	स्कन्द	३४	६६	ह		
सीर	७०	१४२	स्तन	५१	१०२	हस	६३	१२५
मुकृत	६५	१२१	स्तनधय	२०	४०	हसवाह	६३	१२५
मुचिरनन	७६	१५६	स्तनित	५३	१०५	हसी	६४	१२७
मुन	१९	३९	स्तव्य	{ ७५	१५६	हहो	७६	११७
मुधासूति	२४	४७	स्तव्य	{ ८१	१६८	हन्तोक्ति	५४	११०
मुनाशीर	३०	५७	स्तम्बकरि	८१	१६७	हय	२७	५२
मुनिर्माक	७०	१४४	स्तम्बेगम	४९	८८	हर	३५	७०
मुन्द्र	८५	१७७	स्तेन	८१	१६९		{ ६	१२
मुन्द्री	१५	३१	स्त्री	१४	३०		{ २७	५२
मुपर्ण	६५	१२१	स्थपुट	८७	१८३	हरि	{ ३०	५७
मुभट	९०	१९६	स्थविर	८३	१२४		{ ३७	७४
मुमन	४०	८०	स्थाणु	३५	६८	हरिण	६४	१२७
मुर	३०	५६	स्थान	६६	१३३	हरिणी	७३	१५०
मुरा	६१	१२१	स्नेह	७७	१६०	हरित्	{ ३२	६१
मुवर्ण	४७	९३	स्पर्शी	१७	३५		{ ७२	१४९
मुष्टु	८३	१७३	स्पष्ट	८४	१७३	हरित	७२	१४९
मुहृत्	२०	४१	म्फीकृत	५२	१०५	हरिद्राभ	७२	१४९
मूत्रामन्	३०	५७	स्फुट	८४	१७३	हरिवाहन	३०	५९
मूतु	१९	३९	स्मर	४०	८०	हर्ष्य	६७	१०५
मूनूत	८७	१८२	स्मृत	५४	१०८	हर्ष	५४	१०९
मूर्ग	५५	१११	स्यद	८३	१७२	हल	७०	१४२
मूर्य	२६	५०	स्यन्दन	५३	१०८	हलि	७०	,,
मूप कारि	३०	७७	मञ्	६०	११९	हव्यवाह	३३	६६
मेना	४३	८६	मष्ट	३६	७३	हस्त	५०	१०१
सेनानी	३४	६६	म्रवनी	१२	२४	हस्तगावा	५०	१०१
मनानीपितृ	३५	६८	मोतस्विनी	१२	२४	हस्तिन्	४५	८८
मेन्द्र	३०	५६	मोतस्विनीपति	१२	२५	हाटक	४७	९२
सेन्य	४३	८६	स्व	४७	९५	हार्द	९१	११७
मोदय	२१	४२	स्वभाव	८८	१८५	हाला	६१	१२१
मोमवश	७१	१४६	स्वर्	३०	५८	हिम	{ ५९	११८
सौवामिनी	९	१८	स्वर्ग	३०	५६		{ ८५	१७९
साव	६७	१३५	स्वर्ण	४७	९३	हिमवत्सुता	३६	७१
साम्य	८७	१७७	स्वस्	२१	४३	हिरण्य	४७	९३
मोरभ	९१	१९७	स्वान्त	४१	८१	हिरण्यकशिपुमूदन	३७	७५
सौरि	३८	७५	स्वामिन्	{ ५	१०	हिरण्यगर्भ	३६	७३
सौहादं	९१	१९७	स्वामिन्	{ ३४	६७	हिरण्यपरेतम्	३३	६४

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
हीन	८२	१७१	हृद	८५	१७८	हेन्	४७	९३
हुताश	३३	६५	हृषीक	६५	१२९	हेरिक	५१	१६१
हुताशन	३३	६६	हृषीकेश	३७	७४	हेषा	५२	१०५
हृकृत	५३	१०९	हे	७६	१५६	हृयगवीन	६१	१२२
हृदय	४१	८१	हेति	४२	८३	हृष्व	५३	१५८



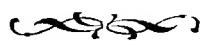
अनेकार्थनाममालास्थशब्दानुक्रमणिका

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
अ			कैवल्य	१००	४१	दाव	९७	१८
अक्ष	९८	२६	कोटि	९६	१५	द्रव्य	१००	४१
अज	९८	२१	क्षीर	९५	१३	द्विज	९६	११
अक्षुन	९४	९	ग			ध		
अथ	१००	३९	गुण	१००	३७	धर्म	१००	४१
अद्वि	९५	११	गुह्य	९६	१५	धातु	९९	३२
अनन्त	९३	४	गो	९८	२७	धिष्ठ्य	९४	७
अन्त	९८	२५	घ			प		
अन्तर	१००	३८	घृत	९३	५	पतग	९४	८
अद्वद	९७	१७	च			पयम्	९६	१३
अम्बर	९४	८	चर्चा	९७	१७	पर्जन्य	९३	४
अर्ध	९६	१६	ज			पाच्चजन्य	९५	१०
अर्थ	९८	२४	जात्य	९६	१६	पुद्गल	१००	४२
अशोक	९५	१२	जिन	९३	३	पुनाग	९४	९
इ			जीमूत	९३	४	पुस्कर	९९	२९
इति	१००	४०	ज्योतिष्	९४	६	प्राय-प्रायम्	९८	२४
क			त			वाधा	९६	११
कदली	९५	१२	तत्र	१००	३६	ब्रह्मवाच	१००	३७
कम्बु	९५	१०	तल्प	९४	६	भ		
कस्त्र	९५	१०	तार	९५	१३	भग	१००	४३
काष्ठा	९६	१४	तादर्थं	९७	१६	भाव	९८	२४
कीनाश	९७	११	तीर्थ	९९	३१	भुवन	९३	५
कीलाल	९६	११	द			भूरि	९५	१३
केतन	९४	७	दव	९७	१८			

भाष्यस्थशब्दानुक्रमणिका

१२५

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
		म	विवर्मवत्	१३	३	सारग	१४	१
मयूर	६४	८	विष	१४	५	सारम	१४	८
	८		वृषाकपि	१३	३	साल	१४	७
रम्भा	१५	११	वैकुण्ठ	१३	४	सिन्धु	१४	७
रस	११	३०	व्यामोह	१६	१४	{ १६	{ १४	१४
राजन्	१५	११	श			कुमनम्	१५	१२
राम	६५	६	शङ्क	१७	१८	सोम	१७	२१
		ल	शम्भु	१३	३	स्तभ	१७	१७
लाल्हि	१०१	१८	शिवरिन्	१५	११	स्थाणु	१७	१७
ललाम	११	३३	शृच्चि	२८	२३	स्थन्दन	१५	११
		व	म			स्यात्	१०१	४५
वन	१३	५	मन्त्र	१००	३६	स्वर	१९	३५
वर्णणा	१००	८२	मन्त्र	१६	१४	स्वैर	१७	१७
वर्ण	१०	३४	ममय	११	३५	ह		
वाम	६८	६	मग्न	०४	१	हम	०७	२०
विरोचन	१७	२०	मार	०४	८	हरि	१८	२८



नाममालाभाष्यस्थशब्दानामकारादिसूची

शब्द	पृष्ठ	पंक्ति	शब्द	पृष्ठ	पंक्ति	शब्द	पृष्ठ	पंक्ति
अ			अविग्रह	१	२०	अन्धकरिपु	३६	४
अश्	२६	२१	अच्युत	३८	१५	अन्धतमम्	७२	१२
अशुमान्	२६	२१	अण्डज	८	२८	अपथी	२३	२
अशुमाली	२६	२०	अतिमात्र	८३	१८	अपसर्प	८६	२३
अक्ष	४९	२३	अतिवेल	८३	१८	अपापित्त	३४	१६
आग	६	६	अत्रिनेत्रप्रसूत	२४	२५	अफल	६	२४
अधिनभू	३५	३	अधिष्ठात्र	४१	८	अञ्ज	२४	२५
अग्रधन्वन्	३१	२६	अनन्त	२८	१५	अब्द	९	१२
अग्निय	२१	१८	अनन्ता	४	६	अब्धिजा	३८	२२
अङ्गज	३९	१२	अनश्वर	७७	११	अभिक	१८	२०
अङ्गुर	५०	२४	अनिष्ट	३०	१४	अभिस्था	७४	१३
अङ्गुरी	५०	२४	अनीक	४५	२	अभिजन	६३	८
अचला	४	६	अनीकिनी	४४	२०	अभिनव	७५	१७

शब्द	पृष्ठ	पंक्ति	शब्द	पृष्ठ	पंक्ति	शब्द	पृष्ठ	पंक्ति
अभिमन्थी	२३	३	आ	३८	२२	उदधि	१३	२
अभियाति	२३	१	आ	५९	१०	उदन्त	६८	२०
अभिसारिका	१७	१७	आच्छादन	५९	१०	उदन्वन्	७५	२
अभीक	१८	१९	आत्मीय	२१	१०	उद्भव	५४	२५
अभीशु	२३	१८	आदित्य	२६	१०	उधस्य	६२	१३
अभ्यग्र	७०	१	आधार	६२	७	उपकण्ठ	६९	२२
अभ्यागम	४५	२	आनन्द	८	६	उपगत	९१	१०
अमुक	१८	२०	आप्न	२१	२०	उपर्वृत्ति	२३	१०
अमृत	८	४	आप्तस्त्रप	५६	८	उपमा	६८	८
अमृतनिर्गम	२५	२	आभील	८७	१०	उपलब्धि	५५	८
अमृताशन	३०	१६	आमिष	२०	२१	उपहूर	८८	१८
अम्बा	१८	२३	आयत	७६	१८	उपाधि	६८	१८
अग्नुभृत्	९	१३	आयोधन	८१	१	उरमिज	५१	२३
अयन	७८	१२	आरात्	६०	२३	उरु	८७	१८
अरण्यश्वा	६४	१४	आरोह	६९	०	उपर्वृत्ति	३८	१०
अरण्यानी	६	२३	आशीर्विष	६५	१			
अरिष्ट	६२	१८	आशुग	२३	८	ऋभि	१३	१०
अर्चिष्मान्	३४	१५	आश्रयाश	३८	१८			
अर्द्धनि	२७	२५	आश्रुत	०९	१०	ऋक्य	८८	७
अथ	८९	४	आमन्त्र	३०	१	ऋक्षेय	२१	२५
अर्भक	२०	२	आमव	६१	१५	ऋभु	३०	१३
अलकार	६०	११	आस्कन्दन	८५	१	ऋद्य	६८	१७
अवतमस	७२	१२	आहार्य	८	२०	ऋद्विति	८३	२३
अवदान	७८	१५		३		ऋष्य	६८	१७
अवयव	१०	१८	इधुद	१३	८			
अविवश्वर	७७	११	इन्निकिल	१०	१०	ए	५८	१२
अविनीता	१७	१७	इन्वर्गी	९७	१७	एकपदी	५८	१२
अव्यय	८८	१८	इन्द्रिनिर	८२	९	एकाल्प	८८	११
अगुम्भ	६६	१०	इन्द्रु	२१	२८	एण	६४	१७
अश्मन्	८२	९	इन्द्रावरज	३१	१५	ऐ	०	३१
अठीवान्	५१	२२		३२		ऐरावती	०	३१
असती	१७	१७	ई	३८	२२	क		
असम्पूर्ण	८०	८	ईशान	३६	८	ककुद्मती	५१	१९
अमहन	२०	२				काङ्क्षपत्र	३०	२०
अमुहत	२३	०	उ			कच्छ	१३	०
अस्तप	२९	२८	उत्कर्ष	६१	२८	कञ्चुकी	६५	३
अम्बन	३०	१३	उदक	८	४	कटिसूत्र	६०	१०
अहंपति	२६	२२	उदग्र	७६	१८	कटीर	५१	१९

शब्द	पृष्ठ	पंक्ति	शब्द	पृष्ठ	पंक्ति	शब्द	पृष्ठ	पंक्ति
कड़व	५१	१६	कालिन्दीमोदर	७१	११	केतव	२८	१८
कदम्ब	{ ३१ ६३	२१ १२	कास्यपनन्दन	६५	१६	कोरविप्रिय	३७	८
कदर्य	८५	१	काश्यपी	८	७	कोल	४६	१५
कनिष्ठ	२१	१५	किष्व	६६	१०	कोविद	५६	२
कन्धग	५०	११	किम्पचान	८५	१	कौणप	२९	२८
कन्धाह्न	५२	०	किर	८६	१६	कौमृतिक	८०	२
कपट	६८	१०	किरि	८६	१५	त्रतुपुरुष	३७	१८
कवच्छ	८	८	किमि	११	२७	क्रव्याद	२९	२८
कमल	८	८	कीनाश	{ २० ७१	२८	कर्णीव	८५	१
कमला	३८	२१	कीलाल	८	६	कर्णिका	९	२०
कमिला	१८	१०	कीष	६	१५	क्षितिधर	८	३०
कम्बल	६५	२१	कुज	६	६	श्रीर	८	८
कर्णजप	८१	२१	कुट	६	६	श्रीरोद	१३	२
कर्दमज	१०	१२	कुण्डली	६१	१	धारोदतनया	३८	२१
कर्पट	५९	१२	कुध	४	३०	धुद	{ ८१ ८५	२१
वर्वुर	{ २९ ६३	२८ १५	कुन्नल	०१	१	धुत्त	८५	१
कर्मसाधी	२६	२२	कुमुदविवर्लभ	२७	७	दुत्तलक	८५	१
कर्ष	१२	११	कुम्भीनम	००	३	धेत्र	{ १६ १९	१५
कलत्र	५१	१८	कुरग	१४	१३	धेत्रज	७९	२०
कलम्ब	३९	२०	कुरगम	६१	१७			
कलायौन	८७	१९	कुल	६३	२	ख		
कलाप	{ ५३ ६०	१४ १९	कुल्या	१२	११	खग	२६	२१
कल्क	६६	१	कुहक	१०	२	खम	३१	२१
कल्प	६६	१०	कुहर	८९	२१	खर्जर	८३	१९
कल्प	६६	१०	कूच	६१	१०			
कल्प्य	६१	१६	कूट	६८	१८	ग		
कल्याण	८७	१५	कल	१३	०	गन्धदारिका	१८	६
कवि	५६	२	कूर्ज्जपा	१२	१०	गन्धर्व	२३	२४
कश्य	६१	१६	कृतकर्मा	७०	२०	गन्धोत्तमा	६१	१५
काकोदर	६५	२	कृतमुव	७०	२०	गरिल	६०	१७
काज्जीपद	५१	११	कृतहस्त	७९	२०	गर्भपीत	२०	२
कान्ता	१६	१	कृती	५६	२	गाह्रेय	{ ३५ ४७	४
कापिशायन	६१	१६	कृतिवासा	३६	५	गार्दपद	३९	२१
कामधवसी	३६	८	कृपीटयोनि	३४	१५	गिरिक	४७	१५
कार्पटिक	८०	२	कृष्टि	५६	२	गिरिश	३६	३
कालसार	६४	१७	कृष्णवर्त्मा	३४	१६	गीर्वाण	३०	१३
कालिद्रग	४५	१६	कृष्णसार	६४	१७	गुडिका	४७	१९
कालिन्दीकर्षण	७०	११	केतु	२३	१९	गुरु	८७	१८

शब्द	पृष्ठ	पंक्ति	शब्द	पृष्ठ	पंक्ति	शब्द	पृष्ठ	पंक्ति
मुनिमी	११	२७	चन्द्रहास	६३	३६	जैवातृक	२५	२
गूँ	४४	२०	चपला	{ ९ १७	२० १७	ज	५६	२
गूँधात्	६५	१	चय	६३	१२	जाति	२१	१०
गूँहा	१६	१५	चला	३८	२२	ज्योति	६९	२३
गोकर्ण	६५	३	चामीकर	४३	१५	ड		
गोकुल	७८	६८	चिन्हुर	९०	२०	डिम्म	२०	२
गोत्र	{ ६ १९ ६३	{ ३० १६ ८	चिकित्स	१०	१०	त		
गोत्रभिद्	३१	२३	चित्रक	८६	११	तटिनी	१२	१०
गोपति	{ २६ ३१	{ २० २६	चित्रकाय	८६	७	तटी	१३	२
गोप्ता	३८	१८	चित्रपुरु	३९	२०	तडित्कन्	०	१३
गोष्ठ	३८	१८	चित्रभान्	{ २६ ३१	२१ ४५	तनया	२०	१८
गोर	७८	६	चीवर	५०	११	तन्त्र	८४	२०
गौरीपुत्र	३५	३	ज			तपत्की	६०	१५
ग्राम्	८०	९	जगच्छक्षु	२६	२०	तमाल	६६	०
ग्रामा	८	३०	जगत्कर्ता	३७	१०	तमस्विनी	२५	२५
ग्रीवी	८९	१९	जगन्माण	३८	७	तमालपत्र	८३	११
घ			जघन	५१	१०	तमित्र	५२	१२
घन	१९	१५	जह्ना	५१	२०	तमित्रा	५५	१०
घनरस	८	३	जनात्तिक	८८	२०	तमी	८५	२५
घस	२६	२८	जन्य	८५	१	तमोधन	८१	१८
घृणि	२३	११	जम्बाऊ	१०	१०	तरक्षु	८६	१
घृत	६२	७	जम्बूनद	८०	१५	तरस	८१	१२
घृतोद	१३	३	जयन्त	८२	१०	ता	३८	२२
घोटक	२७	२५	जरट	६८	४	तार	६३	१०
घोणा	५१	२	जरन्	६३	५	तारका	६०	१३
च			जलचर	८	२०	तारकारि	३६	३
चक्र	४८	२०	जलमुच्	०	१३	तारापथ	२८	११
चक्रवाल	६३	१२	जलराशि	१३	२	तार्क्ष्य	२३	१६
चत्राङ्गवाह	६०	२५	जलशयन	३८	१०	तिरमाशु	२६	१
चक्री	६५	१	जाल	{ ६३ ६७	१३ २३	तिमिररिपु	२६	२०
चक्षुध्रवा	८०	२	जालक	६७	२३	तीर	१३	१०
चञ्चरीक	८२	१	जालिक	८०	२	तुण्ड	८०	१८
चञ्चला	९	२१	जिधासु	२३	२	तुद्द	५१	१०
चटुला	०	२१	जिन	३८	१५	तोयनिधि	१३	२
चन्द्रकी	६४	३	जिण्णु	३१	२५	त्रयीतनु	२६	२८
चन्द्रवमु	८३	१५	जिह्वाग	६५	२	त्रिक	५१	१०
चन्द्रसज्ज	६०	७	जीर्ण	६३	४	त्रिक्ष्यानक	५१	१०
						त्रिदश	३०	१२

त्रिदशदीर्घिका	३६	११	दीर्घ	७६	१८	धूमिका	८५	२५
त्रिदिव	२८	१५	दीर्घजड्घ	४६	१९	धृष्णि	२३	१९
त्रिपथा	७८	१५	दीर्घपृष्ठ	६५	२	ध्रुव	७७	११
त्रिपुरान्तक	३६	३	दुर्गंति	९०	१			
त्रिप्रचरा	७८	१५	दुर्जन	८१	२१	न		
त्रियामा	२५	२६	दुर्वर्ण	४७	१०	नक्तमस्त्रा	२५	२५
त्रिवर्तमा	२७	१५	दुर्वृत्	२३	३	नखरायुध	४६	४
त्रिविष्टपमद्	३०	१३	दुश्चयवन	३१	२५	नलिनी	११	२२
त्रिमचग	७८	१५	दृक्ष्युति	६५	३	नाक	२८	१५
त्रिमरणि	७८	१४	देवता	३०	१२	नागान्तक	६५	१६
त्रिनोता	३६	११	दैवत	३०	१४	नालीक	८०	१५
त्रिध्वा	७८	१४	दोषग्राही	८१	२१	नासिका	५१	२
			दोषज्ञ	५६	२	निश्चलक	८८	१८
			द्यु	२६	२८	निकाय	६३	११
द			द्युमन	४८	६	निकुरम्ब	६३	१२
दक	८	४	द्रज्ज	४९	८	निलिल	८८	२८
दक्ष	७९	२०	दु	६	५	निगम	८९	८
दक्षाध्वरध्वसक	३६	४	दुणा	४२	१	{ ७८	१२	
दक्षिणापति	७१	१२	द्वन्द्व	४५	२	निनागम	८८	११
दण्टधर	७१	११	द्वादशान्मा	२६	२३	निर्ग्र	९०	१
दण्डाहत	६२	१८	द्विजगज	२५	१	निर्जर	३०	१२
दध्युद	१३	३	द्विजिह्व	८१	२१	निर्जिणी	१२	१०
दन्तावल	४५	१६	द्विग्रसन	६५	२	निर्व्यथन	८९	२१
दन्दशूक	६५	२	द्वीपवती	१२	१९	निवह	६३	११
दमुना	३४	१६	द्वीपी	४६	७	निशीथिनी	२५	२६
दमूना	३४	१७	द्वेषण	२३	२	निषद्वर	१०	१०
दथिता	१६	१				तून्न	७६	१७
दर्वीकर	६५	२				नृपलद्वम	९०	२६
दल	८०	४	ध			नेम	८९	८
दशमीस्थ	६३	४	धनञ्जय	३४	१६	नेस्ना	५१	१
दस्यु	{ २३	३	धरणिधर	३८	१४	नैकपेय	२९	२८
	{ ८२	४	धर्मगज	७१	११	नैकपेय	२९	२८
दाक्षायणीरमण	२५	२	धर्मणी	१७	१७	नैकपेय	२९	२८
दाण्डजिनक	८०	२	धव	१८	१९	नैकृत	२९	२८
दाव	६	२३	धाम	२३	१९	न्यङ्कू	६४	१७
दावाह	२८	१४	धाराधर	९	१२			
दामेरक	४६	१९	धीर	५६	१	प		
दिगम्बर	७२	१३	धृपक	४६	१९	पङ्क	६६	१०
दिनकर	२६	२०	धूमध्वज	३४	१५	पङ्कज	१०	१२
दिनमणि	२६	१९	धूमयोनि	९	१३	पञ्चवाल	५०	१९
दिवन्पति	३१	२७	धूमल	७२	७	पञ्चवान	४६	४

पञ्चेषु	३९	१२	पिण्ड	१९	१६	प्रच्छन्न	८४	१८
पट	५९	१३	पितृपति	७१	११	प्रतन	७६	४
पटी	५९	१३	पोतवासा	३८	१३	प्रतानिनी	११	२७
पट्टसूत्र	६१	१	पीति	२७	१५	प्रतिकिट्ट	६६	१०
पताकिनी	४४	२०	पीयूष	६२	१३	प्रतिज्ञात	९१	१०
पति	१८	१९	पीयूषस्त्रि	२५	१	प्रतिपक्ष	२३	२
पदज्ञेय	१४	३०	पीलु	४५	१६	प्रतिभय	८७	२२
पदवी	७८	१२	पुञ्ज	६३	१७	प्रतिभा	५५	१७
पदाङ्गद	५३	१४	पुटिकिनी	११	२२	प्रतिम	६८	८
पदिक	१४	३०	पुण्डरीक	४६	७	प्रतिमोपक	८२	५
पद्ग	१४	३०	पुत्री	२०	१४	प्रतीक	१९	१६
पद्धति	७८	१२	पुदगल	१९	१६	प्रतीपदर्शिनी	१६	१
पञ्चगांशन	६५	१६		{ १९	१६	प्रत्न	७६	४
पद्मवासा	३८	२१	पुरा	{ ६७	२	प्रत्यनीक	२३	२
पद्मा	३८	२१	पुरान्ध्री	१५	२८	प्रदह	३९	११
पद्मी	४५	१६	पुराज	९०	७	प्रद्युम्न	३९	११
पद्मा	७८	१२	पुलक	८२	९	प्रद्योत	२३	१९
पद्मूष	६२	१३	पुलूप	१४	९	प्रद्योतन	२६	१९
पयोधर	९	१२	पुष्क	९०	७	प्रधन	८५	१
पर	२३	२	पुष्कर	{ ८	३	प्रपात	१३	१०
परमेश्वर	३६	३		{ २८	१४	प्रवृद्ध	५६	२
परमेष्ठी	३७	१०	पुष्ट	९०	७	प्रभाकर	२६	२१
परास्कन्दी	८२	४	पुष्पलिद्	४२	९	प्रमदा	१५	२८
परिपन्थी	२३	२	प्रग	६३	१२	प्रलम्बन	७०	११
परिप्लुता	६१	१५	पूर्वज	२१	१८	प्रवया	६३	४
परिषज्ज	१०	१२	पूर्वदिग्धपति	३१	२६	प्रविदारण	४१	१
परिष्कार	६०	११	पूरुक	२०	२	प्रवृत्ति	६८	२०
पर्जन्य	३१	२६	पूदाकु	५५	१	प्रवेणी	११	७
पर्यवस्थाता	२३	२	पूठिन	२३	११	प्राशु	७६	१८
पलायी	६	५	पृष्ठदश्व	३३	८	प्राणाधिनाथ	१८	२०
पल्ल	७७	१४	पृष्ठन्क	३९	२१	प्रान्तियाशु	२५	१
पवनाशन	६५	३	पोत	५९	१३	प्रावर	५९	१३
पशु	८०	१५	प्रकट	८४	५	प्रावार	५३	१३
पशुपति	३६	३	प्रकार	६८	८	प्रीति	५४	२३
पाशुला	१७	१७	प्रकाश	{ ६८	८	प्रेत्ता	५५	७
पाक	२०	२		{ ८४	५	प्रेतपति	७१	११
पाकशासन	३१	२७	प्रकोष्ठ	५०	१६	प्लवङ्गम	६	१५
पानीय	८	४	प्रम्य	६८	८		८	
पार्वतीनन्दन	३५	४	प्रग्रह	२३	१९	फल	६	२३
पिच्छ	५१	१०	प्रचलाकी	६४	३	फलक	५१	१९

ब		भुवन	८	४	माधव	६१	१६	
बद्धभूमिक	६७	७	भूच्छाय	७२	१३	माधवक	६१	१५
बद्ध	८०	१४	भूतधात्री	४	६	माधवीक	६१	१७
बध्र	३८	१५	भूतेश	३६	३	मानसौक्रम्	६३	२३
बल	७०	११	भैरव	८७	२२	माया	३८	२२
बरमूदन	३१	२५	भोवता	१८	१९	मायावी	८०	३
बहिर्न्यौनि	३४	१५	भोगी	६५	२	मायी	८०	३
बहूल	३८	१४	भ्रूण	२०	३	मितम्पत्र	८५	१
बाडिश	८०	१८			म			
बाणामन	४२	१	मञ्जुकेश	३८	१३	मित्र	२६	११
बाल	{ २०	२	मण्डन	६०	११	मिष्य	६८	१८
		१४	मण्डल	६३	१२	मिहिका	८५	२५
बालिश	८०	१४	मति	५५	८	मिहिर	२६	२०
बाहुल्येय	३५	८	मनिमान्	५६	३	मुकुन्द	३८	१४
ब्रक्काग	८७	२	मन्त्य	८	२८	मुदिर	९	१३
बुद्धि	५१	८	मधु	६१	१५	मूर्तिज	१९	२०
बृहत्	८७	१८	मधुकर	४२	८	मध्येज	९०	२९
बृहद्भानु	३४	१६	मवुम्ब	३९	१२	मृगदग	४७	२
ब्रह्मचारी	३५	४	मनिमिज	३९	११	मृगरिपु	४६	४
ब्राह्मी	५२	२०	मनीमी	५६	२	मृगाङ्ग	२५	२
			मन्त्रज	८७	२	मृगार्गि	४६	७
			मन्या	५०	११	मृणालिनी	११	२२
			मयूर	२३	१९	मृदुल	७५	१४
भग	२६	२०	मरालवाह	६३	२५	मृद्य	४५	१
भग्नानक	८७	२२	मरुत्	३०	१३	मृद्वीक	६१	१७
भर्ग	२६	४	मरुदर्मन्	२८	१४	मेघपुष्प	८	४
भर्ता	१८	१९	मल	६६	१०	मेधा	५५	८
भर्तीरी	३८	२२	मलिम्लुच्च	८२	४	मोषक	८२	५
भल्ल	३९	२१	मस्तक	५२	९			
भल्लि	३९	२१	महोनेजम्	३५	४	य		
भषण	४७	२	महावल	३३	८	यथार्थवर्ण	८७	१
भमल	८२	९	महाविल	२८	१५	ययु	२७	२५
भानमान्	२६	२१	महाराजत	४७	१५	याज्य	६२	७
भास्कर	२६	१९	महामेन	३५	४	यातयाम	६३	४
भास्वान्	२६	२०	महिला	१६	१	यामिनी	२५	२६
भीम	{ ३६	८	महीरह	६	५	यृथ	६३	१२
		८७	महेला	१६	१	यृनी	१५	२३
भीषण	८७	२२	मा	{ २५	२	र		
भीष्म	८७	२२			२२	रजनीकर	२५	१
भीष्मसू	३६	११	माणवक	२०	३	रत्नगभी	४	६
भुजङ्कभुक्	६५	३				रत्नवती	४	६

रथाङ्गपाणि	३८	१४	वरयिता	१८	१९	विल	८९	२१
रमणी	१५	२८	वरला	६४	११	विलेशय	६५	२
रमा	३८	२२	वराक	८५	१	विवसन	५९	१०
रवण	४६	१९	वरिष्ठ	२१	१८	विवस्वान्	२६	२०
रहिम	२३	१९	वर्णिनी	१५	२८	विविक्त	८४	१८
रसा	४	६	वर्तनी	७८	१२	विशारद	५६	३
राक्षस	२९	२७	वर्षीयान	२१	१८	विशिख	३९	२०
रागसूत्र	६१	१	वर्ष्म	१९	१६	विश्वम्भ	८८	६
राजसर्प	६५	३	वर्हण	५२	२८	विश्वस्त्रप	३८	१३
राजा	२४	२४	वशा	१६	१	विश्वाम	८८	६
रात्रि	२५	२६	वसति	२५	२६	विष्टर	६	६
राशि	६३	१२	वमु	{ २३	१९	विष्टरश्वा	३८	१५
रिश्य	६४	१७		{ ३४	१५	विष्णुपद	२८	१५
रक्षम	४७	१५	वस्त्र	५९	१२	विष्णुपदी	३६	११
रुम	४७	१५	वस्त्र	५९	१०	विष्णुरथ	६५	१६
रुचि	२३	१९	वत्तिरेता	३६	४	विष्वकोन	३८	१३
रुच्य	२९	२२	वातप्रमी	६४	१७	विमर	६३	११
रुग्ग	६४	१७	वामदेव	३६	८	विमार	८	२९
रोक	८९	२२	वामनेया	११	२८	विम्नीर्ण	८७	१८
रोचि	२३	१८	वार्गिद	९	१३	वीचिमाली	१३	२
रोधोवक्रा	१२	११	वार्ता	६८	२०	वीणा	९१	७
रोप	३९	२१	वामनेयी	२५	२६	वीतहोत्र	३४	१६
रोलम्ब	४२	९	वामिता	१५	२८	वीनि	२७	२५
रोहिणीवल्लभ	२४	२५	वाम्नांपनि	३१	२६	वीरु	११	२७
ल								
लक्ष्य	६८	१८	विकर	६३	११	वृथ	६	५
लव्यवर्ण	५६	१	विकिर	२९	१७	वृजिन	११	१
लवणोद	१३	२	विकर्त्त	२८	२०	वृत्तान्त	७५	०
लहरी	१३	१७	विक्रान्त	९०	१८	वृत्तारि	३१	२५
लेख	३०	१३	विग्रह	{ १९	१५	वृद्ध	{ ५६	२
लेड्वह	४७	२		{ ४५	२		{ ६३	४
व								
वक्षोर्ह	५१	१४	विज्ञेय	८०	११	वृद्धश्वा	११	२५
वज्रधर	३१	२६	विपश्चित्	५६	२	वृद्धारक	३०	१३
वदु	२०	३	विपुला	४	६	वृद्धाक्षि	३८	१५
वनमाली	३८	१५	विबुध	३०	१३	वृपाङ्गु	३६	५
वनीक्स्	६	१५	विभव	४८	७	वैणी	९१	७
वपा	८९	२२	विभा	२३	१९	वैकुण्ठ	३८	१४
वपस्ती	२०	१६	विभावरी	२५	२५	वैजयन्त	४३	१०
			विरोक	२३	१९	वैवस्वत	७१	११
						व्यक्त	५६	३
						व्यञ्जक	८०	३

व्याल	६५	१	शुक्लापात्र	६४	३	सदेश	६९	२३			
व्यूह	६३	१३	शुचि	३४	१५	सन्	४६	२			
व्योमकोश	३६	३	शुण्डा	६१	१५	सनातन	३८	१५			
व्रज	६३	११	शुपि	८९	२२	सनामेय	२१	१०			
वात	११	२७	शृंग	२६	२०	सनीड	६९	२३			
श											
शकली	८	२८	शेवलिनी	१२	११	सत्रिभ	६८	८			
शक्तिपाणि	३५	३	शैल	४	३०	सर्पण्ड	२१	१०			
शतवृति	३७	१०	श्यामकण्ठ	६४	३	सत्ताश्व	२६	२१			
शतहृदा	९	२०	श्राद्धदेव	७१	११	सभासद	५६	७			
शतानन्द	३७	१०	श्रीकण्ठ	३६	३	सभास्तार	५६	७			
शबल	६४	१७	श्रीनन्दन	२९	११	समय	३	१६			
शम	६०	१९	श्रोपति	३८	१३	समर्यादि	६९	२३			
शमन	७१	११	श्रीवत्साङ्क	३८	१२	समवाय	६३	१२			
शम्वर	६४	१७	श्लोक	७४	१३	समाग्रया	७८	१३			
शम्भु	३६	३	श्वभ्र	८९	२२	समानोदर	२१	१०			
	३८	१५	श्वेत	४७	१९	समानोदर्य	२१	१०			
शय	५०	१०	श्वतच्छुद	६३	२३	समिति	४५	२			
श्वरी	२५	२५	श्वेतर्गोचि	२५	१	समीक	८५	१			
शत्की	८	२९	प								
शशवज	१३	२	पूर्वरण	४२	०	समीर	३३	८			
शशाङ्क	२५	१	पृष्ठिप्र	४२	९	समृद्ध	६३	१२			
शशांगवर	३६	३	म								
शाखामृग	६	१५	म								
शानकुम्भ	८७	१५	मय	१५	१	ममुद्रकाला	१२	१२			
शात्रव	२३	२	मरया	५५	८	समुद्रनवनीन	२६	२			
शाद	२०	१०	मरयावान्	५६	३	ममूद्र	६३	११			
शान्तिवा	११	२७	सगर	४५	३	समर्द	४५	३			
शाल	६	५	मविति	५५	८	ममिन्	०५	२			
शालावृक	४७	२	मवेग	८३	१३	मरम्बर्ता	१२	११			
शाव	२०	३	मज्जान	५९	१३	सरिहर्ग	३६	११			
शाश्वत	७७	११	मन्याय	६७	२	मर्गमृष्ट	६५	१			
शाश्वतिक	७१	११	मम्फाट	४५	२	मपीशन	६६	३			
शिक्षित	७९	२०	मथा	२९	२	सर्वसहा	८	६			
शिवावल	६४	३	मगर्भ	२७	१०	सर्वंज	३६	३			
	५३	१३	मङ्गल्यजन्मा	३९	११	मवतोमुख	८	८			
शिङ्गिनी	६०	११	सञ्चय	६३	११	मलि	८०	१०			
शिर्गमिज	९०	२९	सत्र	६	२३	सविता	२६	१९			
शिशु	२०	२	सदातन	७७	११	महचरा	१६	१५			
शीर्ष	५२	९				महचरी	१६	१५			
						महधर्मचार्णी	१६	१५			

सहस्रकिरण	२६	१९	सुरवतर्म	२८	१५	स्वादूद	१३	३
सहाय	१४	३०	सुरसरित्	३६	१०	स्वापनेय	४८	६
सागराम्बरा	४	६	सुरोद	१३	३	स्वैरिणी	१७	१७
सामाजिक	५६	७	सूर	२६	१०		ह	
सामि	८९	४	सेवता	१८	२०	हम	२६	२१
सायक	३९	२१	सेवक	१८	३०	हमक	५३	१४
सार	४८	६	सैरिन्धी	१८	१८	हरि	२६	२०
सारद्वा	६४	१७	सोदर	२१	१०		३३	८
सारस्वत	६०	१९	स्कन्ध	५०	२१		७१	११
साथ	६३	१२	स्तनयित्तु	९	१२	हरिण	७२	९
मिह	४६	४	स्तन्य	६२	१३	हरिदश्व	२६	२१
सिंघनी	५१	२	स्तोम	६३	१३	हरिप्रिया	३८	२१
सिंचय	५९	१२	स्थविर	३७	१०	हरिमान्	३१	२७
सिन	४७	१९	स्थानीय	४९	८	हरिहर्य	३१	२६
सिनाभ्र	६०	५	स्थिरा	४	८	हर्यश	४६	४
सिनेनर्गति	३४	१५	स्त्रिय	२१	८	हर्वि	६२	७
सीता	३८	२२	स्पशन	३३	८	हव्य	६	२३
मुकुमार	७५	१४	स्पश	८७	१	हारहर	६१	१६
मुर्चिरिता	१७	९	स्पृह्य	६२	७	हिमवालु	६०	५
मुधामूर्ति	२५	२	स्पष्टा	३६	४	हिरण्य	४८	७
मुधी	५६	२	स्त्रोतम्	१२	११	हच्छय	३९	१२
सुपण्केतु	३८	१८	स्वजन	२१	१०	हेपण	५२	२६
मुपर्वा	३०	१८	स्वयम्भू	३७	१०	हैषा	५२	२६
मुमनम्	३०	१२	स्वराद्	३१	२६	हादिनी	१९	२०
मुरज्ज्येष्ट	३७	१०	स्वर्गीकम्	३०	१२		११२	११
सुरनिम्नगा	३६	११	स्वादुम्भा	६१	१५	होषा	५२	२६

यौगिकशब्दानुक्रमणिका

अभिनपर्यायमूल भेनानी	६६	जित्यापर्यायकर बल	१४२	मनुष्यपर्यायपति नृप	१४
अधिपर्यायजयी जिन	१३१	अपादादि वजाद्यन्त स्मर	८४	मयूरपर्यायपति गुह	१२६
अदितिशब्दान्परं सुनपर्यय-		तामरसपर्यायवनी विभिन्नी	२३	मेघपर्यायपथ आकाश	१३३
प्रयोगे देवनामानि	५६	दिनपर्यायकर सूर्य	५०	गतिपर्यायिचर राक्षस	५५
आकाशपर्यायग खग	५४	देवपर्यायपति इन्द्र	५७	लक्ष्मीपर्यायपति हरि	७६
आकाशपर्यायचर व्येचर	५४	देहपर्यायभव सूत	३९	वायुपर्यायपथ आकाश	५३
उड्डायार्यपति चन्द्र	८८	शुपर्यायधुनी गगा	७१	वार्षपर्यायिचर मस्त्य	१६
काष्ठादिनामत पर पालप्रयोगे		भनपर्यायदायक कुबेर	९६	वार्षपर्यायिचर अम्बुधि	१६
प्रयोगे अम्वग्रप्रयोगे च		धीनामर्विजन मूर्ख	१६६	वार्षपर्यायिचर भव वद्यम्	१६
दिग्याल नामानि	६१	नारपर्यायारि मृगेन्द्र	९०	वित्तपर्यायपति कुबेर	१६
कायपर्यायगह्नि मन्मय	७७	नियापर्यायकर चन्द्र	४८	विधिपर्यायपति नारद	५३
वार्मुकपर्यायकोटि जटनी	७९	पन्नगपर्यायवैगी गरुद	१२८	विष्टपर्यायिचर व्येचर	१३
किरणवाचिभ्य पूर्व शीतशब्द-		परिपत्यायाज कमलम्	२०	विष्टपर्यायपति जिन	११३
प्रयोगे चन्द्रनामानि, यथा-		पवनपर्यायपुत्र भीम	६६	गम्पापर्यायपति अम्बुद	१९
शीतकिरण	४६	पवनपर्यायपुत्र हनुमान्	६३	शैलभग्यादिधर हरि	७६
किरणशब्देभ्य पूर्वम् उष्णशब्द-		पवनवाचिसखा अभिन	६४	मेनानीपर्यायपिता शङ्कुः	६८
प्रयोगे सूर्यनामानि, यथा-		पुरुषपर्यायशर म्भर	८०	मोत्तम्बिनीपर्यायपति-	
उष्णकिरण	४६	पुष्पपर्यायास्त्र म्भर	८०	अधिधि	२४
कुष्णपर्यायपुत्र मन्मय	७७	प्रस्थपर्यायिवान् गिरि	९	स्वर्गपर्यायपति इन्द्रः	५७
गङ्गनदीउचर मिन्दु	७१	भूमिपर्यायधर शैल	७	स्वर्णपर्यायवास त्रिदशः	५७
चिनपर्यायहारि मनोहरम्	१७८	भूमिपर्यायपति नृप	७	स्वान्तपर्यायिद्भव माः	८१
जाङ्गलपर्यायप्रिय राक्षस	५५	भूमिपर्याप्त ह वृक्ष	७	हिमपर्यायकर चन्द्र	१७९

अनेकार्थनिधिष्टुगतशब्दानामकरादिसूची

अ	इ	केमरिन्
अस	इडा	इ०४
अगारि	इ०४	इ०४
अङ्क	उक्षन्	इ०४
अज	उदवया	इ०५
अदिति	उदार	इ०५
अध्यात्म	उष्णीय	इ०४
अध्यूदा	उस्ता	इ०४
अनन्त	ऋत	इ०४
अनिमिष	औ	इ०४
अपाचीन	ओषण	इ०८
अवद	क	इ०२
अमृत	ककुप्	इ०३
अम्बर	कवन्ध	इ०४
अम्बरीष	कम्बु	इ०२
अर्क	कर	इ०२
अलान	कर्षक	इ०४
अवदात	कल	इ०४
अव्यारोह	कलभ	इ०४
धमिन	कलुप	इ०४
असुर	कानीन	इ०४
आ	किलास	इ०८
आकृत	कीनाग	इ०३
आक्रन्द	कीलाल	इ०२
आगोप	कुण्ड	इ०५
आडम्बर	कुण्डली	इ०५
आत्मज	कूल	इ०३
आदित्य	कृष्ण	इ०२
आवि	केतु	इ०२
आगतन		
आर्य		
आलबाल		
आलान		
आहत		
	उ	
	ऋ	
	ख	
	ग	
	घ	
	धृत	
	च	
	ज	
	त	
	ताक्षर्य	

अनेकार्थनिश्चण्डुशब्दानुकम्पणिका

१३७

१८

निलक	१०८	८४	पष्ट	१०४	९१	भार्या	१०९	११८
तुल्य	१०८	१०४	पतङ्ग	१०३	१२	भाव	१०४	८७
नृणी	१०३	५१	पद्मकृत्	१०६	१०१	भास्कर	१०२	१२
नेजम्	१०६	१३१	पद्म	१०४	७७	भुवन	१०२	२५
तोदन	१०६	९२	पद्म	१०२	११	भृग्यव	१०५	१४०
तोयद	१०३	८८	परचित	१०५	१३५		म	
त्रियामा	१०४	१०९	परमेष्ठी	१०६	१००	मञ्जूरा	१०१	८५
त्रिशङ्कु	१०३	६८	परिचर्य	१०८	८१	मण्डूक	१०८	८९
			पर्जन्य	१०३	६०	मनवाधिनी	१०५	१३९
			पलाय	१०४	१०६	मधु	१०३	६३, ६४
दक्ष	१०३	७०-७१	पवन	१०४	१११	मन्त्रिन्	१०२	१५
दक्षिण	१०४	९७	पानीय	१०८	१०२	मन्द	१०५	१२१, १२३
दविन्द	१०८	९९	पाप	१०८	९९	मन्दिर	१०८	१०६
दान	१०८	९२	पात्तचजन्य	१०२	११	मन्दिर	१०८	१०६
दानन	१०५	१२४	पिग्ही	१०८	८३	मधूम	१०२	९७
दीघ	१०४	११०	पिग्नित	१०८	९१	मलिम्नुन	१०३	५२
दुश्चर्वर्मन्	१०४	००	पुण्डश्लोक	१०९	११७	मस्कर	१०८	१०७
दोला	१०८	१०४	पुलित	१०८	८२	महेष्वाम	१०१	११८
द्विज	१०३	५२	पुष्कर	१०३	३६	माया	१०३	६३
			पुण	१०८	७८	मूल	१०८	९६
धनञ्जय	१०२	९	पुस्त्व	१०३	६२	मेचक	१०४	८३, १०६
धार्तराष्ट्र	१०३	६५	पृष्ठीही	१०४	१०७	मिल्ट	१०४	९१
धिष्ण्य	१०२	१८	पौलस्त्य	१०३	५३		य	
			प्रजापति	१०३	३८	यम	१०३	६८
			प्रधान	१०३	५६	युद्धशोषण	१०९	११७
नकुल	१०३	६७		१०४	१०५	युध्यम	१०५	११९
नत्व	१०५	१५१, १५२	प्रगा	१०४	११३	यूध्यम्युथा	१०५	११९
नाग	१०३	४९	प्रभाकर	१०३	६६		र	
नापित	१०४	१०१	प्रासाद	१०३	४६			
नारितक	१०५	१३२	प्लव	१०३	४५	रहस्	१०४	१०३
निकष	१०८	८४				रजम्	१०३	७२
नितम्ब	१०३	७२	फ			रत	१०४	८३
निहपद्रवा	१०५	१२८	फेनवाहिनी	१०३	९४	रत्न	१०४	१०९
निहपस्करा	१०५	१२७	व			रद्दन	१०४	९२
निविड	१०४	८९	ब्रह्म	१०४	९९	रम्भा	१०३	७४
नूसिह	१०५	१२०	बीभत्त	१०२	९	राजन्	१०२	७
न्यग्रोवपरिमण्डला	१०५	१४३				राजीवलोकन	१०५	११४
			भ			राजीवलोकना	१०५	१४३
			भगवन्	१०५	१२९	राम	१०२	३२, ३३
पङ्कज	१०४	८१	भास्मिनी	१०५	१४२			

रावण	१०५	१४१	विभावम्	{ १०२	८	माक	१०४	९६
रोहिणेय	१०२	३१	विम्बौष्ठी	{ १०३	४१	शेषुपी	१०४	९३
			विरोचन	१०५	१३७	शेष	१०२	३२
			विरोचन	१०२	१०	शैलूष	१०४	१००
			विलास	१०४	८७		ष	
लक्ष्म	१०३	६९,७०	विशाल	१०४	९०	पद्मव	१०५	१३३
लक्ष्मण	१०३	६९	विष	१०२	२४		म	
ललना	१०५	१३७	वृकोदर	१०५	११६	सवर	१०२	२७, २८
ललाम	१०४	८१	वृजिन	१०४	१०९	सत्र	१०४	१०३
ललिता	१०५	१३९	वृप	१०२	३०	सन्त्वर	१०४	८३
लवली	१०४	८१	वृषा	१०२	३१	सदन	१०२	२६
लावण्य	१०४	१०१	वेहन्	१०४	१०७	सद्म	१०२	२७
लुलाय	१०४	१०६	वैकर्तन	१०५	११५	सन्त्विष्ट	१०२	१७
लेखा	१०३	६१	व्यक्तिवादिन्	१०५	१२०	सप्ताश्र	१०५	१४८
			व्यञ्जन	१०४	११२	समावि	१०१	१२४
वक्रवक्त्र	१०४	८२	व्याधि	१०४	१०२	समाधिष्य	१०५	१२१
वन्ध्या	१०४	१०७				सप्ताश्र	१०४	१०९
वरवर्णिनी	१०५	१३८				सान्द्र	१०३	४२
वरगाह	१०२	३३,३८	वङ्क	१०२	१४	सारग	१०३	७३
वस्थ	१०३	४७	वङ्कण्ठी	१०५	१४५	मान्म	१०२	७
वर्षभू	१०४	८१	वङ्म	१०२	१३	सित	१०३	६६
वलाहक	१०३	५७	वराह	१०५	१३१	मुमना	१०४	११३
वल्लरी	१०४	११३	वरीरज	१०२	३९	स्यविष्ट	१०६	९९
वमा	१०४	१०७	वर्वरी	१०३	४२	स्यन्दन	१०२	२१
वमु	{ १०२	१८	शव	१०२	२३	स्वर्	१०३	४३
	{ १०३	७३	शिखरिन्	१०३	५१			
वाजी	१०४	७९	शिविन्	१०२	५			
वाम	१०३	३९	शिव	१०२	२०			
वालेय	१०३	५०	शिवा	१०४	९०	हम	१०२	६
वासर	१०३	४१	शिलीमुख	१०३	६०	हरि	१०४	८०
विद्वान्	१०३	६३	शीत	१०६	१५३	हिमारानि	१०२	८
विषञ्ची	१०४	११२	शुक्रा	१०४	८१	हिल	१०४	१०८
विपिन	१०६	१५२	शुचिकृत्	१०३	५९	हस्त	१०४	११०

उद्धृतवाक्यानामकारादिसूची

अङ्गनाच्च तदेक्षणा	५७	गमो अरहंताण	१	भर्ता सगर एव मृत्यु वसति	१५
अतिप्रलापभावेन	६१	नन्तु हैयङ्गीवीत यद्	६१	मान्यत्वादाप्यविद्याना	२
अनशनावमौदर्यवृत्ति-	२	तत्यदेहे गते ताभ्या	५८	मृदत्ति मिथीभवन्ति	१२
असूययागण्य निशाभ्य या	३३	दुर्जण सुहियउ होउ	२२	य पापपाशनाशाय	२
आत्मनि मोक्षे जाने	५२,५८	दुर्जनाना विनोदाय	६३	य उत्पन्न एुनाति वश	१९
आपो नारा इति प्रोक्ताः	३७	दित्रैव्योम्नि पुराण-	२५	यत्सर्वात्महित न वर्षसहित	५९
आयुः पीयुपकुण्डे म्मृत्ति-	६२	न कु पृथिवी पिपति	१२	रेषणात् क्लेशराशीनाम्	२
आहुर्नेत्रोत्यमत्रे सृत-	२४	नक्षत्रमृक्ष भ तारा	२५	लक्ष्मीकौसुभपारिज्ञानकमुग्दा	६१
उड्डीय वाच्चित यान्ति	१४	नक्षत्रे वाक्षिमध्ये च	२५	वर शिर्त पाणि	२२
एको रथो गजइच्चैको	४५	नभन्तु नभसा सार्व	१	वणिगमो गवेन्द्रादौ	
ऐश्वर्यस्य समग्रस्य	६५	नवमे प्राणमन्देहो	५४	२३,२९,४६ ५९,६५	
कर्पिरराहः ध्रेष्ठश्च	३४	नामाकण्ठमुस्तालु		वाज वाजस्तु पक्षेऽपि	२७
काश्यमित्युच्यते तेज.	५७	निषद्वरस्तु जम्बाल-		वाहो युग्म घनो वाहो	२७
कियती पञ्चसहस्री	९६	निषादंवर्भगान्धार		वृद्धाकपिपास्मि॒देवे	३४
कुमारकाले आमलकी-	५५	पञ्चमे दह्नाते गात्रम्		श्यामा गत्रिस्तु विट् श्यामा	२५
कोकिलाना स्वरो रूप	५५	पञ्चाचारागतो नित्य		वड्ज मृग वृद्धते	५३
वत्तचित्प्रवृत्ति कवचिदप्रवृत्ति	६०	पञ्चन शक्टैर्गम्य		मत्य दूरे विहगति समं	१४
गिरिकन्धरदुर्गेषु	३२	पत्तिप्रतिपत्तग-		सन्त्वियोनी सुरङ्गाया	९६
गोभवे सुरभि हन्यात्	५६	पञ्चङ्गैस्त्रिगणी सर्व		सर्वपस्थ्य प्रयत्नेन	५६
गी स्वर्गं सप्रवृष्टान्या	५८	पुण्डरीक सिताम्बुजम्		स व्याल्यानि न शास्त्रम्	३
गोरोगीः कामदुधा	५२	पुण्पसाधारणे काले		स्वस्थे नरे सुखामीने	९६
चतु रप्तिकलाभिज्ञा	१८	प्रथमे जायते चिन्ता		स्वानुभूत्यै भवेद्	१
चत्वारं पुरुषवशजा	५८	प्रशस्या न नमस्यापि		हावो मुखविकारं स्यात्	१७
जातमात्रोऽुथ भगवान्	३१	प्रायश्चित्तविनायवैयावत्य		हिसानृतस्तेया-	२

भाष्यगता ग्रन्था ग्रन्थकाराश्च

अकलज्ञ	१	१	द्विसन्धानकाव्यम्	३३	१	विद्यानन्दी	१	१
अनेकार्थविमञ्जरी-			द्विसन्धानभाष्यम्	६१	१०	शब्दभेदः	१	१७
	{ २६	२१	नाममाला	७२	२०	शाश्वतः	२५	९
	{ २७	१३	पद्मनन्दिशास्त्रम्	१	१९	श्रीभोज	२५	९
अमरकोषः	८७	८	पूज्यपाद	१	१	समन्तभद्र	१	१
	{ १०	८	बृहत्प्रतिक्रमणभाष्यम्	५८	१५	सूक्ष्मिनुतावली	२२	१८
अमरसिंहः	{ १२	१५	भरतनाटकम्	५३	२२	सोमनीतिः	{ ४८१९, २४, २७	
	{ ४३	६	भारतम्	४४	४		{ १९	२४
	५३	२०	महापुराणम्	{ ५७	२२, २३	हलायुधः	{ १०	२६
अमरसिंहनाममाला	२९	६		{ ५८	३, ९		{ १२	२४
अमरसिंहभाष्यम्	१९	१२	यश कीर्ति	२२	१५	हलायुधभाष्यम्		
आशाधरमहाभिषेकः	६२	१		{ २	१६, १९			
इन्द्रनन्दिनी तिशास्त्रम्	५५	२३	यशस्तिलकम्	{ १४	२१	हैमः		१४ १०
कल्याणकीर्ति	१	२		{ २४	२५	हैमनाममाला		२७ १९
धीरस्वामी	६२	६		{ ६३	१५	हैमी	१६ १७, २५, २७	
इत्तलणिकः	२९	६	यशस्तिलकचम्पूकाव्यम्	१८	८	हैमीनाममाला		३४ १३

सङ्केतविवरण

अ० च० अभिधानचिन्तामणि
अनेका० म० अनेकार्थसङ्ग्रह
अम० को० अमरकोश
अम० को० धी० भा० अमर-
कोश धीरस्वामी भाष्य
अमर० अमरकोश
अ० स० अनेकार्थसंग्रह
उ० सू० उणादि सूत्र
कल्प० को० कल्पद्रुकोश
का० उ० कातन्त्र उणादि
का० ह० उ० कातन्त्र रूपमाला
उत्तरार्थ
का० र० पू० कातन्त्र रूपमाला
पूर्वार्थ
का० र० पू० सू० कातन्त्ररूप-
माला पूर्वार्थसूत्र

का० सू० कातन्त्रसूत्र
क्षी० भा० धीरस्वामिभाष्य
क्षी० स्वा० धीरस्वामी
जन० सम० जनपदमसुहेश
जै० सू० जैनेन्द्रसूत्र
त० सू० तत्त्वार्थसूत्र
नीतिसा० नीतिसार
नी० वा० सम० सू० नीति वाक्या
यामृत समुद्देशसूक्ति
प०प० पद्मनन्दिपद्मचविशनिका
पा० उ० पाणिनि उणादि
पा० गणसू० पाणिनि गणसूत्र
पात० भाष्य पातञ्जलमहाभाष्य
पा० सू० पाणिनिसूत्र
भो० उ० भोजउणादि
मे० को० वा० वा० मेदिनीकोश
वान्तवर्ग

यश० नि० आ० क० यशस्तिलक
आश्वास कल्प
वि० को० का० विश्वलोचनकोश
कान्तवर्ग
वि० लो० विश्वलोचन कोश
श० च० शब्दार्थवचन्द्रिका
श० च० सू० शब्दार्थवचन्द्रिका
सूत्र
वा० कारिका शाकटायन कारिका
शा० सू० शाकटायन सूत्र
सुर० क० सग्स्वनीकण्ठाभरण
सार० समा० सू० साग्मवत
समाम सूत्र
हे० च० हेमचन्द्र
हे० श० हेमशब्दान्तशामन

शुद्धिपत्रम्

पृष्ठ प० अशुद्धयः शुद्धयः पृष्ठ प० अशुद्धयः शुद्धयः
७ १८ सर गर ६५ ९ विपाशय विषक्षयः
५३ २ स्तमित स्तनित ६९ २ निकुरो निकरो
५८ २१ मुक्तोषा- मुत्तोषा- ७१ २१ श्वेतो श्वेतो